Printed by Chintaman Sakharam Deole, at the Bombay Vaibhav Press, Servants of India Society's Building, Sandhurst Road, Girgaon, Bombay.

AND

Published by Pandit Manoharlal Shastri, Malik, Jain Grantha Uddharak Karyalaya, Khattar Lane, Houdwadi, Bombay, No. 4.

ॐ नमो महावीराय

प्रस्तावना।

आज मैं श्रीमहावीर प्रभुकी कृपासे उन प्रभुके पवित्र चरित्र जाननेमें बहुत दिनोंसे उत्कंठित भव्य पाठकोंके सामने यह प्रथमानुयोगका अपूर्व तीसरा उद्धार ग्रंथ उपस्थित कर अपने स्थापित **श्रीजैनग्रंथउद्धारक कार्यालयको** सार्थक (यथार्थ गुणवाला) करता हूं। यद्यपि आजकल कागज वगैरहका मूल्य अधिक होनेसे इसके तयार करानेमें कुछ अनुत्साहसा होगया था, परंतु लक्ष्मीवगैरहको चंचल समझ और अपना पराया दोनोंका महान् उपकार होनेके लिये आवश्यक कर्तव्य जानकर इस महान् ग्रंथके उद्धारमें तन मन धन—तीनोंसे परिश्रम किया गया है। इस ग्रंथमें सब जगह पुण्यपापका फल अच्छी तरह दिखलाया गया है। यह उन **महावीर** प्रभुका अनेक जन्मोंका सूचक पवित्र पुराण है कि जिन प्रभुने अपने पहले जन्मोंके दुःखोंको याद कर अपने तीर्थंकरपद—

जन्ममें विवाह न करके राज्यादि संपदाको तृणके समान तुच्छ समझ विना भोगे कुमारअवस्थामें ही वैरागी होके अपने परके कल्याणनिमित्त तपस्या करनेको वनमें गये । ये महावीर प्रभु जैनियोंके चौवीसवें तीर्थंकर हैं ।

इस ग्रंथके स्वाध्याय करनेसे मुझे निश्चय है कि कितने ही भव्य यदि मनवचन कायसे इसे पढेंगे तथा दूसरोंको भी इस ग्रंथका कथन बतलावेंगे तो इस घोरपापी पंचम काल (कलियुग) में भी पापके कामोंको छोड़ पुण्य कार्योंको करते हुए विदेह क्षेत्रमें जन्म ले अवश्य इच्छित अनंत सुखका स्थान मोक्ष पावेंगे ।

यह पवित्र श्री महावीरपुराण श्रीमान् **सकलकीर्ति** देव (आचार्य) का संस्कृत वाणीमें रचा गया है । इसकी अभी तक किसीने भाषा टीका तयार नहीं की थी ऐसा तलाश करनेसे मुझे मालूम हुआ । फिर आजकालके धर्मराज्यके प्रवर्तानेवाले श्रीमहावीर प्रभुके पवित्र चरित्रसे संस्कृतवाणीके नहीं जाननेवालोंका वहुत लाभ होना समझ इस पवित्र पुराणका भाषानुवाद अपनी तुच्छ बुद्धिसे मूल ग्रंथके अनुसार किया है । उसमें यदि कहीं दृष्टिदोषसे अशुद्धियां रहगईं हों तो पाठकगण मेरे ऊपर क्षमा करके अवश्य शुद्ध करते हुए स्वाध्याय करेंगे ।

इस ग्रंथकी हस्तलिखित १ प्रति मुझे पं० खूबचंदजी जैनशास्त्रीके द्वारा प्राप्त हुई, इससे उनके उपकारका आभारी होके कोटिशः धन्यवाद देता हूं । इसी तरह दूसरे भी सज्जन महाशय ग्रंथका उद्धार करानेके लिये ग्रंथकी प्रतियां भेजकर हमारे कार्यालयको सहायता पहुंचावेंगे ऐसी आशा करता हूं । और अंतमें यह प्रार्थना है कि यदि हमारे पाठकोंको इस ग्रंथके वांचनेसे संतोष हुआ और उत्साहित होके मुझे प्रेरणा की तो मैं इस ग्रंथका मूल संस्कृत भी प्रकाशन कराके पाठकोंके सामने उपस्थित कर सकूंगा ।

इस प्रकार प्रार्थना करता हुआ इस प्रस्तावनाको समाप्त करता हूं । अलं विशेषु ।

खत्तरगली हौदावाड़ी
पो० गिरगांव-वंबई
जेठ सुदि ५ वीर सं० २४४२

जैनसमाजका सेवक
मनोहरलाल
पाढम (मैनपुरी) निवासी ।

अथ श्रीमहावीरपुराणकी विषयसूची.

तीसरा अधिकर ॥ ३ ॥

चौथा अधिकार ॥ ४ ॥

पांचवां अधिकार ॥ ५ ॥

छठा अधिकार ॥ ६ ॥

सातवां अधिकार ॥ ७ ॥

आठवां अधिकार ॥ ८ ॥

नवमां अधिकार ॥ ९ ॥

दशवां अधिकार ॥ १० ॥

ग्यारवां अधिकार ॥ ११ ॥

बारवां अधिकार ॥ १२ ॥

तेरवां अधिकार ॥ १३ ॥

चौदहवां अधिकार ॥ १४ ॥

पंद्रहवां अधिकार ॥ १५ ॥

सोलहवां अधिकार ॥ १६ ॥

सत्रहवां अधिकार ॥ १७ ॥

अठारहवां अधिकार ॥ १८ ॥

उन्नीसवां अधिकार ॥ १९ ॥

नमः परमेष्ठिभ्यः ।

श्रीसकलकीर्तिदेवविरचित ।

महावीर-पुराण ।

(भाषानुवाद)

जिनेशो विश्वनाथाय ह्यनंतगुणसिंधवे ।
धर्मचक्रभृते मूर्ध्ना श्रीवीरस्वामिने नमः ॥ १ ॥

सब संसारी जीवोंके स्वामी अनंतगुणोंके समुद्र धर्मरूपी चक्रके धारण करनेवाले ऐसे जिनेश्वर श्रीमहावीर स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

जिस प्रभुके अवतार लेनेके पहिले पिताके महलमें छः और नव अर्थात् गर्भके पहिले छह महीने तथा गर्भके बाद नौ महीने इस तरह पंद्रह महीने रत्नोंकी वर्षा कुबेरदेव करता हुआ ॥ २ ॥ जिसके सुमेरु पर्वतपर जन्माभिषेकके उत्सवमें रूपको देख इंद्र भी तृप्त न होकर हजार नेत्र करता हुआ ॥ ३ ॥ जो बालअवस्थामें ही राज्य-विभूतिको पुराने तृणके समान छोड़कर कामरूपी वैरीको नाश कर तपस्याके लिये वनमें जाते हुए। जिस प्रभुको आहार दान देनेके महात्मसे चंदना नामकी राजकन्या तीन लोकमें प्रसिद्ध हुई और उसके घरमें रत्नवृष्टि वगैरः पंच आश्चर्य हुए। जो रुद्रसे किये गये घोर उपसर्गोंको (कष्टोंको) जीतकर ‘ महावीर ’ ऐसे अर्थवाले नामको पाता हुआ। जो महाबलवान् घातिकर्मरूपी योधाओंका नाश कर केवलज्ञानको प्राप्त हुआ। जिस प्रभुने स्वर्गमोक्षरूपी लक्ष्मीके सुखको देनेवाले धर्मका प्रकाश किया वह अवतक भी श्रावक और मुनिधर्म इस तरह दो प्रकारसे संसारमें चल रहा है और आगे भी युगोंतक स्थिर रहेगा। जिस महावीर स्वामीका ‘ वीर ’ ऐसा नाम कर्मोंके जीतनेसे है, धर्मके उपदेश देनेसे सन्मति है उपसर्गोंको सहनेसे महावीर ऐसा नाम है। इत्यादि अनंत गुणोंसे पूर्ण उस महावीर प्रभुको मैं उन गुणोंकी प्राप्तिकेलिये मनवचन-कायसे वारंवार नमस्कार करता हूं।

इसीतरह शेष तीर्थंकर जो ऋषभदेव आदिक हैं उनको भी तीन योगोसें नमस्कार करता हूं ।

तीन लोकके शिखरपर विराजमान कर्म और शरीरसे रहित सम्यक्त्वादि आठ गुणोंसहित ऐसे सब सिद्धोंको मैं नमस्कार करता हूं जिससे कि सब कार्यकी सिद्धि हो । वृषभसेनादि गणधरोंको मैं नमस्कार करता हूं जो कि चार ज्ञानके धारी सात ऋद्धियोंकर सहित हैं ।

श्रीमहावीरस्वामीके मोक्ष जानेके बाद श्रीगौतमस्वामी, सुधर्माचार्य और अंतके श्रीजंबूस्वामी ये तीन केवली हुए । ये तीनों महावीरस्वामीके निर्वाण जानेके ६२ वर्ष पीछे धर्मके प्रवर्तक हुए । उनके चरणकमलोंकी शरणको गुणोंका इच्छक मैं प्राप्त होता हूं ॥ उसके सौवर्ष पीछे सब अंगपूर्वोंके जाननेवाले नंदी १ नंदिमित्र २ अपराजित ३ गोवर्धन ४ और भद्रबाहुस्वामी ५—ये पांच श्रुतकेवली हुए । उनके चरणोंकी मैं सेवाको प्राप्त होता हूं ॥ उसके १८० वर्ष बाद धर्मके प्रकाश करनेवाले रत्नत्रयके धारी विशाख १ प्रोष्ठिलाचार्य २ क्षत्रिय ३ जय ४ नाग ५ सिद्धार्थ ६ जिनसेन ७ विजय ८ बुद्धिल ९ गंग १० सुधर्माचार्य ११ ये ग्यारह अंग दशपूर्वके पाठी ग्यारह आचार्य हुए । उनके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूं । उसके

वाद २२० वर्ष वीत जानेपर धर्मके प्रवर्तानेवाले नक्षत्र १ जयपाल २ पांडु ३ द्रुमसेन ४ वाकंस ५ ये ग्यारह अंगके जाननेवाले हुए। उनके चरणकमलोंको नमन करता हूं। फिर सौवर्षके वाद सुभद्र १ यशोभद्र २ जयवाहु ३ लोहाचार्य ४ ये एक अंगके पाठी हुए। उसी समय कुछ समयके पश्चात् विनयधर १ श्रीदत्त २ शिवंदत्त ३ अर्हद्दत्त ४ ये अंगपूर्वके कुछ भागके जानकार हुए। उसके बाद हुंडावसर्पिणीकालके दोपसे अंग पूर्वश्रुतकी हीनता होनेपर उसके जानकार कम होनेपर श्रीभुजवली और पुष्पदंतमुनि इन दोनोंने श्रुतके नाशके भयसे शास्त्रोंकी रचना की जो कि धवल महाधवल नामसे प्रसिद्ध हैं और उनको पंचमीके दिन पूर्ण किया इसलिये श्रुतपंचमीका दिन पर्वदिन माना जाता है। उस दिन सव संघने मिलकर जिनवाणीकी पूजन की और अवतक प्रवृत्ति हो रही है। तत्पश्चात् कुंदकुंदादि अनेक आचार्य निर्ग्रंथ हुए हैं उनको उन गुणोंकी प्राप्तिकेलिये वारंवार नमस्कार करता हूं॥

जिनेन्द्र भगवान्के मुखकमलसे निकली हुई जगत्पूज्य सरस्वती वाणी मेरी बुद्धिको कविता करनेमें शुद्ध करे। इस प्रकार श्रेष्ठ गुणोंवाले सच्चे देव शास्त्र गुरुओंको नमस्कार करके अव वक्ता श्रोताओंके लक्षण कहता हूं। जिससे कि स्वपरोपकार करनेवाला यह ग्रंथ उत्तम प्रतिष्ठाको पावे।

वक्ताका लक्षण—जो सर्व परिग्रहसे (ममता परिणामसे) रहित हों, अपनी प्रसिद्धि व पूजाके चाहनेवाले न हों, अनेकांत मतके धारक हों, सर्व सिद्धांतोंके पारगामी हों, विना कारण जगत जीवोंके हित करनेवाले हों, उसमें भी भव्य जीवोंके हितमें हमेशा लीन हों, सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तप ये चार जिनके भूषण हैं, शम आदि गुणोंके समुद्र हों, लोभी न हों, अभिमानी न हों, गुणी व धर्मात्माओंसे विशेष प्रेम रखनेवाले हों, जैनमतके माहात्म्यके प्रकाशनेमें उद्यमी हों, महान् बुद्धिशाली हों, ग्रंथ रचनेमें समर्थ हों, जिनका यश प्रसिद्ध हो, जिनको बुद्धिमान् मान देते हों, सत्यवचन बोलनेवाले हों इत्यादि अनेक श्रेष्ठ गुणोंके धारक आचार्य उत्तम वक्ता कहे गये हैं। इन्हीके वचनोंसे अन्य भव्य जीव धर्म व तपको गृहण करते हैं, अन्य शिथिलाचारियोंका वचन कोई नहीं मानता। क्योंकि लोक ऐसा कहते हैं कि जब यह धर्मको श्रेष्ठ जानता है तो आप क्यों नहीं करता इसलिए शिथिलाचारीके उपदेशको स्वीकार नहीं करते। जो आप ज्ञानरहित होके उपदेश करे तो लोक कहते हैं कि आप तो जानता ही नहीं है और दूसरोंको उपदेश देने चला है। इस कारण शास्त्रके रचनेवाले तथा धर्मका उपदेश देनेवाले वक्तामें ज्ञान और आचरण ये दो गुण अवश्य होने चाहिये।

श्रोताके लक्षण—सम्यग्दृष्टी (श्रद्धानी) हों, शीलव्रती हों, सिद्धांत ग्रंथोंके

सुननेमें उत्कंठित हों, शास्त्रके कथनको धारण करनेमें समर्थ हों, जिनेंद्रके मतमें लीन हों, अर्हंतके भक्त हों, सदाचारी हों, निर्ग्रंथ धर्मगुरुके सेवक हों, पदार्थके स्वरूप विचारनेमें कसौटीके समान चतुर परीक्षक हों, आचार्यके कहे हुए शास्त्रोंका अध्ययन कर सार असार विचार पहले जो असार ग्रहण किया था उसको छोड़कर सत्यको ग्रहण करनेवाले हों, आचार्यकी कहीं भूल रहजाने पर जो विवेकी विलकुल नहीं हंसनेवाले हों ऐसे श्रोता तोते मट्टी हंस जलके समान दोषरहित गुणोंके धारी कहे गये हैं। इत्यादि और भी अनेक श्रेष्ठ गुणोंके धारी शुभ अभिप्रायवाले श्रोता दूसरे शास्त्रोंसे जानना।

श्रेष्ठ कथाका लक्षण—जिस कथामें (उपदेशमें) जीवादि सात तत्त्व अच्छी तरह दिखलाये जावें और संसार देह भोगोंसे अंतमें वैराग्य दिखलाया जावे। जिस कथामें दान पूजा तप शील व्रतादि तथा उनके फल व बंध मोक्षका स्वरूप और उनके कारण कहे जाँयें, जिस धर्मकी माता जीवदयाके प्रसादसे बुद्धिमान् सब परिग्रहको त्यागकर स्वर्ग तथा मोक्ष जाते हैं ऐसी जीवदया जिस कथामें मुख्यतासे कही गई हो। जिस कथामें महान् पदवीधारक मोक्षगामी त्रेसठ शलाका पुरुषोंका चरित्र व उनकी विभूतियोंका कथन हो और उनके पूर्व जन्मोंके वृत्तांत हों तथा पुण्यकर्मके फलोंका

र्णन हो वह श्रेष्ठ कथा शुभ (कल्याण) को करनेवाली ' धर्मकथा ' कही जाती है। जो कि पूर्वापर विरोध रहित है और जिनसूत्रके अनुसार है वही सच्ची कथा है। इससे अन्यशृंगारादि रसोंके कहनेवाली पापकारिणी कथा शुभके करनेवाली कभी नहीं होसकती। इस प्रकार श्रेष्ठ वक्ता श्रोता और कथाका लक्षण कहके अब मैं श्री महावीरस्वामीका परम पवित्र चरित्र कहता हूं, जो कि महान पुण्यका कारण है और पापोंका नाश करनेवाला है और वक्ता श्रोताओंका हित करनेवाला है । जिसके सुननेसे भव्यजीवोंके पुण्यका संग्रह होता है और पहले पापोंका नाश होता है और दुःखरूप संसारसे भय होता है। इस प्रकार अपने इष्टदेवोंको प्रणाम करके वक्तादिकोंका स्वरूप कहके जिनेंद्रके मुखसे उत्पन्न धर्मकी खानि अंतिमतीर्थंकर श्रीमहावीर स्वामीकी श्रेष्ठ कथाको कर्मरूपी वैरियोंकी शांतिकेलिये मैं कहता हूं। सो हे भव्यो सावधान चित्त होकर सुनना ॥

इति श्रीसकलकीर्तिदेवविरचित श्री महावीरचरित्रमें इष्टदेवनमस्कार वक्ता आदिलक्षणोंको कहनेवाला पहला अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १ ॥

दूसरा अधिकार ॥ २ ॥

वीरं वीराग्रिमं वीरं कर्ममल्लनिपातने ।
परीषहोपसर्गादिजये धैर्याय नौमि च ॥ १ ॥

भावार्थ—कर्मरूपी मल्लके हटानेमें वड़े योधा परीसहादि उपसर्गोंके जीतनेवाले श्री महावीरस्वामीको मैं धैर्यगुणकेलिये नमस्कार करता हूं ॥ २ ॥

अब कथाका प्रारंभ करते हैं:—

असंख्यात द्वीप समुद्रोंवाले इस मध्यलोकमें राजाओंमें चक्रवर्तीके समान जामुनके वृक्षसे चिन्हित जंबूद्वीप है । उस जंबूद्वीपके वीचमें बहुत ऊंचा सुदर्शन नामका सुमेरु पर्वत है वह देवोंमें तीर्थंकरोंके समान सब जगत्‌के पर्वतोंमें मुख्य है । उस मेरुकी पूर्व-दिशाकी तरफ पूर्वविदेह क्षेत्र है, वह धर्मात्माओंसे और जिनेन्द्रदेवोंके समोसरणोंसे अत्यंत शोभायमान है । उस क्षेत्रमें अनंत मुनि तपस्यासे देहरहित (मुक्त) होगये हैं और होवेंगे इसीलिये उसका नाम गुणकी अपेक्षासे अर्थवाला विदेह—ऐसा है उसमें स्थित सीता नदीके उत्तर दिशाकी तरफ पुष्कलावती नामका एक वड़ा भारी

देश है। वहां पर तीर्थंकरोंके चैत्यालय ऊंची २ धुजाओंवाले शोभायमान हो रहे हैं। वहां मुनि अर्जिका श्रावक श्राविका रूप चार प्रकारके संघसे विभूषित गणधरादिदेव सत्यधर्मकी प्रवृत्तिकेलिये विचरते हैं इसलिये वहां कोई पाखंडी भेषधारी मिथ्यामती नहीं है। उस जगह अर्हत् भगवानके मुखकमलसे उत्पन्न हुआ अर्थात् उनका उपदेशकिया हुआ अहिंसास्वरूप धर्म फैलरहा है, उसको यति (मुनि) और श्रावक हमेशा पालते हैं। इसलिये उस नगरमें जीवोंको पीडा देनेवाला कोई नहीं है सभी धर्म पालते हैं। जिस जगह भव्यजीव ज्ञानके लिये ग्यारह अंग चौदह पूर्व श्रुतको हमेशा पढते हैं मनन करते हैं जिससे कि अज्ञानका नाश हो परंतु कुशास्त्रोंका कभी नहीं स्वाध्याय करते। जिस देशमें क्षत्रिय वैश्य शूद्ररूप तीन वर्णमयी प्रजा सब सुखी देखनेमें आती है धर्ममें हमेशा लीन और बहुत भाग्यशाली है। जिस देशमें असंख्यात तीर्थंकर व गणधर व चक्रवर्ती और वासुदेव आदि उत्पन्न होते हैं जो कि देवोंसे पूजा किये गये हैं। जिस देशमें ५०० धनुष अर्थात् दो हजार हाथ ऊंचा शरीर और एक करोड़ पूर्वकी मनुष्योंकी आयु है वहां हमेशा चौथे कालका वर्ताव है। जहांपर उत्पन्न हुए महान पुरुष तपश्चरणसे स्वर्ग अहमिंद्रपना तथा मोक्ष सिद्ध करते हैं तो अन्यकी वात क्या है सब कार्य सिद्ध हो सकते हैं। उस देशमें पुंडरीकिणी नाम नगरी है वह वारह योजन लंवी

और नौ योजन चौड़ी है। उसके एक हजार बडे दरवाजे हैं तथा पांचसौ छोटे हैं। जिसमें महान् पुण्यवान् ही उत्पन्न होते हैं। वह नगरी जिनमंदिरोंकी धुजाओंसे मानों स्वर्गवासियोंको वुलाती ही है। उसके वाहर देखनेमें रमणीक मधुक नामका वडा भारी वन है वहांपर मुनिलोग ध्यानमें लीन हुए विराजमान हैं इस कारण उस वनकी शोभा अवर्णनीय है।

उस वनमें पुरूरवा नामका एक व्याधाओं (भीलों) का राजा रहता था वह वहुत भद्रपरिणामी था उसकी कल्याणकारिणी कालिका नामकी प्यारी स्त्री थी। किसी समय उस वनमें जिनदेवकी वंदना करनेके लिये सागरसेन मुनि आए। उनका संघ भीलोंने घेर लिया। उन मुनीश्वरको दूरसे देखकर हरिण सम- झकर पुरूरवा भीलने वाणसे मारनेकी इच्छा की, इतनेमें पुण्यके उदयसे उस भीलकी स्त्रीने मारनेसे इनकार किया और कहा कि हे स्वामी ये जगत्को कल्याण करनेवालो वनदेवता विचर रहे हैं इसलिये पापका कार्य तुमको नहीं करना चाहिये। उस प्राण प्यारीके वचन सुनकर वह भील काललब्धिके (अच्छी होंनहारके) आजाने पर प्रसन्नचि- त्तसे उन मुनीश्वरके निकट आकर अति हर्षके साथ मस्तक झुकाता हुआ (नमस्कार करता हुआ)। धर्मवुद्धि उन मुनिने भी उस भव्य भीलको ऐसा कहा कि हे भद्र श्रेष्ठ धर्मके

प्रगट करनेवाले मेरे सारभूत वचन सुन । जिस धर्मसे तीन लोककी लक्ष्मी प्राप्त होती है, चक्रवर्तीकी विभूति तथा इंद्रपदभी जिस धर्मसे मिलता है । भोगोपभोगकी सामग्री मनोवांछित संपदायें और सुखको देनेवाले कुटुंबके लोकोंकी प्राप्ति जिस धर्मसे होती है वह धर्म, मद्य मांस मधु (शहत) के त्यागसे तथा पांच उदुंबरोंके छोड़नेसे और सम्यक्त्वके साथ अहिंसादि पांच अणुव्रतोंके पालनेसे तथा तीन गुण व्रतचार शिक्षाव्रतोंके धारण करनेसे बारह व्रतरूप एकदेश गृहस्थका है उससे स्वर्गादि लौकिक सुख मिलते हैं । इस प्रकार मुनिके उपदेशसे वह भीलोंका स्वामी मद्य मांसादि छोड़कर मुनीश्वरके चरणकमलोंको नमस्कार कर धर्मकी प्राप्तिके लिये श्रावकके बारह व्रतोंको उसी समय ग्रहण करता हुआ । जैसे ग्रीष्म ऋतुमें प्यासा मनुष्य जलसे भरे हुए तालावको पाकर अति प्रसन्न होता है उसी तरह वह भील भी संसारके दुःखोंसे डरके जिन धर्मको ग्रहण कर अति हर्षित हुआ । आचार्य महाराज कहते हैं कि इस धर्मके लाभसे शास्त्रोंका अभ्यास, विद्वानोंकी संगति, निरोगता, धनवानपना—ये सब प्राप्त होते हैं । सो उस भीलने भी सब पाये । उसके बाद पवित्रात्मा वह भील मुनिको रास्ता दिखलाकर हर्षित हुआ अपनी जगहको गया । सब व्रतोंको जन्मपर्यंत पालता हुआ अंतमें समाधिमरण करके व्रतसे उत्पन्न हुए पुण्यके उदयसे वह भील सौधर्म नामके महाकल्प-

विमानमें महाऋद्धिधारी देव हुआ । उसने आयु एकसागरकी पायी अंतर्मुहूर्तमें नवयौवन अवस्थाको धारण करता हुआ । अवधिज्ञानसे पूर्वजन्मका वृत्तांत तथा व्रतादिका यह सब फल जानकर जिनधर्ममें अति प्रीति करता हुआ। वादमें धर्मकी सिद्धके लिये जिन चैत्यालयोंमें जाकर जिनेश्वरकी प्रतिमाओंकी परमपूजा करता हुआ। अपने परिवारके साथ जलादि आठप्रकार द्रव्यसे गाना नृत्य स्तुतिके साथ चैत्यवृक्षोंमें स्थित तीर्थकरोंकी पूजा करनेके वाद मेरु नंदीश्वरादि द्वीपोंमें जाकर जिनेन्द्रके केवलज्ञान व गणधरादि महात्माओंकी महामह नामकी पूजा भक्तिपूर्वक करता हुआ। वादमें गणधरोंके द्वारा दो प्रकारका धर्म सुनकर वहुत पुण्यका उपार्जन करके अपने स्थानको वापिस आता हुआ। इसतरह वह देव अनेक प्रकारका पुण्य उपार्जन करके अपनी देवियोंके साथ महल सुमेरुवनादिमें मनोहर गाने सुनता हुआ कहीं देवांगनाओंका शृंगार विलासमयी नृत्य देखता हुआ क्रीडा करने लगा। इत्यादि पूर्वपुण्यसे प्राप्त हुए परम भोगोंको भोगता हुआ। जिसका शरीर सात हाथ ऊंचा सात धातुरहित था। वह मति आदि तीन ज्ञान, आणिमादि आठ ऋद्धियोंसे भूषित नेत्रोंकी टिमकार रहित इंद्रियसुखरूपी समुद्रमें मग्न होता हुआ।

इस भरतक्षेत्रमें आर्यखंडके वीचमें कोशल नामका देश है वह आर्यजनोंको मुक्तिका कारण है। जिस देशमें पैदा हुए भव्यजीव व्रतोंको धारण कर कोई

तो मोक्ष पाते हैं कोई नवग्रैवेयक तथा सोलहवें स्वर्गमें जन्म लेते हैं। कोई जिनदेवके भक्त सौधर्मादि स्वर्गके इंद्रपदको पाते हैं। कोई सुपात्रको दान देनेसे भोगभूमिमें उत्पन्न होते हैं, कोई पूर्वविदेहादिमें जन्म लेकर राज्यलक्ष्मीको भोगते हैं, जिस देशमें जगत्से पूज्य मुनि केवली धर्मोपदेश देते हुए चार प्रकारके संघके साथ विहार करते हैं। वह देश,ग्राम पत्तन नगरी ऊंचे२ जिनमंदिरोंसे शोभायमान था। जिसके वन ध्यानारूढ योगियोंसे हमेशा फलोंसहित रहते थे। इत्यादि वर्णनवाले उस देशके बीचोंबीच विनीता (अयोध्या) नामकी नगरी थी वह नगरी विनयवान् पुरुषोंसे भरी हुई थी इसीलिये रमणीक जैसा नाम वैसे गुणको धारण करनेवाली थी।

जो नगरी श्री आदिनाथ (ऋषभदेव) तीर्थंकरके जन्मके लिये इंद्रने रची थी और वह ऊंचे स्वर्णरत्नमयी चैत्यालयोंसे शोभायमान थी। वह अयोध्या ऊंचे २ परकोटा व नव दरवाजोंसे तथा वड़ी खाईसे ऐसी थी जिसको वैरी भी नहीं लांघ सकता। वह नव योजन चौड़ी वारह योजन लंबी थी जो देवोंको अत्यंत प्रिय थी। ऐसी नगरीका वर्णन वचनद्वारा नहीं हो सकता। जिसके ऊंचे २ महलोंमें ऐसे मनुष्य निवास करते थे जो कि दानी कोमलचित्तवाले चतुर धर्मात्मा शुभ परिणामोंवाले सीधे सुरूप उत्तम आचरणवाले पूर्व उपार्जित पुण्यवाले अत्यंत धनाढ्य थे। वे सैकड़ों गुणोंसे शोभा-

यमान विमानोंमें देवोंके समान रहते थे और देवियोंके समान स्त्रिया मालूम होती थीं। जिसनगरीमें देव भी मोक्षके लिये जन्म लेनेको तरसते थे ऐसी स्वर्गमोक्षकी देनेवाली नगरीकी प्रशंसा कैसे होसकती है। जिस नगरीका स्वामी चक्रवर्तियोंमें पहला आदिसृष्टिकर्ता (कर्मभूमिकी प्रवृत्ति करानेवाला) श्री ऋषभदेवका पुत्र राजा भरत था। जिस भरतचक्रीके चरणकमलोंको अकंपनादि राजा, नमि आदि विद्याधर राजा, मागध आदि देव हमेशा नमस्कार करते थे। ऐसे छह खंडके स्वामी चरमशरीरी पुण्यवान्को सुखके देनेवाली पुण्यवती धारिणी नामकी पटरानी होती हुई। वह सुंदर लक्षणोंवाली थी। इन दोनोंके वह देव पुरूरवा भीलका जीव स्वर्गसे चयकर 'मरीचि' नामका रूपादिगुणोंवाला पुत्र उत्पन्न हुआ। वह क्रमसे बढता हुआ। जब योग्य हुआ तब अनेक शास्त्रोंको पढ़कर और अपने योग्य संपदाको पाकर वनादिमें क्रीडा करने लगा।

किसी समय श्रीऋषभदेव देवांगनाके नृत्यको देख राज्यभोगसे विरक्त होते हुए। फिर पालकीमें वैठकर लौकांतिक देवोंके साथ वनमें जाकर बाह्य अभ्यंतर दोनों प्रकार परिग्रह छोड़ मोक्षके लिये संयम तपको धारण करते हुए। उसी समय स्वामिभक्त कच्छ आदि चार हजार राजा मरीचि सहित केवल स्वामीकी भक्तिके लिये नग्नभेपरूपी द्रव्य संयमको धारण करते हुए।

लेकिन उनके चित्तमें चरित्र धारण करनेकी भावना नहीं थीं। वे जगत्के गुरु श्री ऋषभदेव देहसे भी ममता छोड़कर सुमेरूपर्वतके समान निश्चल कर्मरूपी वैरियोंके जीतनेको उनसे मुक्त होनेके लिये छह महीनेकी परम समाधि लगाते हुए। जिन्होंने अपनी भुजाओंको दंडके समान लंबायमान कर दिया है।

तदनंतर वे कच्छ मरीचि आदि क्षुधा प्यास वगैरः कठिन परीषहोंको उस स्वामीके साथ कुछ दिनोंतक सहन करके पीछे सहनेको असमर्थ हुए। क्लेशके भारसे घिरे हुए धैर्यरहित दीन मुख करके आपसमें ऐसे बातचीत करते हुए कि देखो यह जगत्का स्वामी वज्रके समान शरीरवाला न मालूम कब तक ऐसा खड़ा रहेगा। हमलोगोंको इसके साथमें रहनेसे प्राण जानेका भय है। इसकी बराबरी करनेसे क्या हमें मरना है ?। ऐसी आपसमें वार्तालाप करके वे भेपधारी उस भगवान्के चरणकमलोंको नमस्कार कर भरतराजाके भयसे अपने घर जानेको असमर्थ उसी वनमें वे धूर्त (मूर्ख) पापके उदयसे स्वच्छंद हुए फल भक्षण करनेको तथा जल पीनेको उद्यमी होते हुए। मरीचि भी उनके साथ परीषहोंकर दुःखित वैसा ही करने लगा। ऐसे निंदनीक काम करते हुए उनको देखकर वनका रक्षक देव बोला। हे धूर्तो मेरे शुभ वचन तुम सुनो, इस पवित्र मुनिभेपसे जो मूर्ख निंद्य अशुभ काम करते हैं वे पापके उदयसे नरकरूपी

समुद्रमें पड़ते हैं। दूसरी वात यह है कि गृहस्थपनेमें जो पाप किया था वह जिनलिंग (मुनिपने) में छूट जाता है यदि मुनिवेशसे पापकर्म किया जावे तो वज्रलेप हो जावे फिर उसका छूटना वहुत कठिन है। इस लिये इस जगतपूज्य जिनभेपको छोड़कर दूसरा वेप धारण करो। जो ऐसा नहीं करोगे तो मैं तुमको वहुत दंड (सजा) दूंगा। ऐसे उस देवके वचनोंको सुनके वे डरे और देवपूज्य भेपको छोड़ जटावगैरहका रखना इत्यादि अनेक तरहके वेपोंको धारण करते हुए। वह भरतपुत्र मरीचि भी तीव्र मिथ्यात्व-कर्मके उदयसे पहले मुनिवेपको छोड़ संन्यासियोंका वेप अपना वनाता हुआ। दीर्घ संसारी उसकी शक्ति स्वयं परिव्राजकमतके शास्त्रोंकी रचना करनेमें शीघ्र होती हुई, आश्चर्य है कि जिसकी जैसी होनहार है वैसी होकर ही रहती है अन्यथा नहीं हो सकती।

वे तीन जगत्के स्वामी पृथ्वीपर विहार करते हुए। उसी वनमें सिंहके समान अकेले एक हजार वर्षतक मौन साधकर रहे। फिर वे तीर्थंकरराजा ध्यानरूपी तलवारसे जगत्को हित करनेवाले केवल ज्ञानरूपी राज्यको स्वीकार करते हुए अर्थात् उन्हें केवलज्ञान हो गया। उसी समय यक्षाधिपतिने वारह कोठोंवाले सभामंडपकी रचनाकी जिसमें सव जगत्के जीव आजावें। इंद्रादिक भी उत्कृष्ट विभूतिके साथ सव कुटुंव तथा देवांगनाओंके साथ आकर उस विभुकी जलादि अष्ट द्रव्यसे भक्तिपूर्वक पूजा करते हुए।

पहलेके भ्रष्ट हुए वे कच्छादि बहुतसे पाखंडी उस प्रभुसे बंधमोक्षका स्वरूप सुनकर वास्तवमें निर्ग्रंथ भावलिंगी होते हुए। परंतु दुष्ट बुद्धि मरीचि तीन जगत्के स्वामीसे मोक्षका उत्तम मार्ग सुनकर भी संसारका कारण अपने मतको नहीं छोड़ता हुआ। मनमें ऐसा विचारता हुआ कि जैसे यह तीर्थनाथ गृहादिको छोड़कर तीन जगत्को क्षोभ करनेवाली सामर्थ्यको प्राप्त हुआ है वैसे मैंभी अपने मतको स्थापन करके लोकमें महान् शक्तिवाला हो सकता हूं। इस लिये मैं भी जगत्का गुरु हो जाऊं ऐसी इच्छा है वह अवश्य पूर्ण होगी। इस प्रकार मान कषायके उदयसे अपने स्थापित मिथ्यामतसे विरक्त नहीं हुआ। वह पापबुद्धि मूर्ख मरीचि त्रिदंडीके भेषको धारण कर कमंडलु हाथमें लेकर कायको क्लेश देनेमें तत्पर प्रातःकालमें ठंडे जलसे स्नान करता हुआ तथा कंदमूलादिका भक्षण करता हुआ। बाह्य गृहादि परिग्रहके त्यागसे अपनेको प्रसिद्ध करता हुआ। और अपने शिष्य कपिलादिकोंको सच्चे मतको इंद्रजालके समान तथा निंदनीक और अपने कल्पित मतको यथार्थ (सच्चा) बतलाता हुआ। वह मिथ्यामार्ग चलानेमें अग्रणी (मुख्यनेता) भरतका पुत्र मरीचि आयुपूर्ण होनेसे मरणको प्राप्त हुआ। फिर वह अज्ञान तपके प्रभावसे ब्रह्मनामके पांचवें स्वर्गमें देव हुआ वहां दश सागरकी आयु मिली और भोगने योग्य संपदाओंकी प्राप्ति हुई।

आचार्य कहते हैं कि देखो ऐसे मिथ्या तपके करनेसे जब स्वर्ग मिलता है तब सच्चा तप करनेसे जो फल मिले उसका कहना ही क्या है, अपूर्व फल मिल सकता है।

इस भरतक्षेत्रमें अयोध्यापुरीमें कपिल नामका ब्राह्मण रहता था उसकी काली नामकी स्त्री थी उन दोनोंके घर वह देव स्वर्गसे आकर जटिल नामका पुत्र होता हुआ। और पूर्व संस्कारसे मिथ्यामतमें लवलीन वेद स्मृति आदि शास्त्रोंको जानकर मूढ जनोंसे नमस्कार किया गया संन्यासी होता हुआ और कल्पित मिथ्यामार्गको पहलेकी तरह प्रगट करता हुआ। फिर अपनी आयुके क्षय होने पर मरके कायक्लेश-तपके प्रभावसे सौधर्म नामके पहले स्वर्गमें देव होता हुआ। वहां पर दो सागरकी आयु तथा थोड़ीसी विभूति पायी। देखो आश्चर्यकी बात कि मिथ्याबुद्धि पुरुषोंका खोटा भी तप संसारमें निष्फल नहीं जाता है, सुतपका तो कहना ही क्या है।

इसी रमणीक अयोध्यापुरीके स्थूणागार नामक नग्रमें भारद्वाज नामक ब्राह्मण था और उसकी पुष्पदंता नामकी प्यारी स्त्री थी। उन दोनोंके वह देव स्वर्गसे चयकर पुष्पमित्र नामका पुत्र हुआ। उसने पूर्व संस्कारसे खोटे मतोंके कुशास्त्रोंका अभ्यास किया। फिर मिथ्यात्व कर्मके उदयसे मिथ्यामतोंमें मोहित हुआ पहले भेषको स्वीकार कर सांख्यमतके प्रकृति वगैरः पच्चीस तत्वोंका उपदेश करता

हुआ। फिर मिथ्यामतियोंको मानता हुआ मंदकषायसे देवायुको बांध प्राणरहित होता हुआ पुनः उसी पहले सौधर्मस्वर्गमें एकसागरकी आयुवाला अपने योग्य सुख संपदासे भूषित जन्म लेता हुआ।

इस भरतक्षेत्रमें श्वेतिक नामके नगरमें अग्निभूति ब्राह्मण रहता था उसकी स्त्रीका नाम गौतमी था। उन दोनोंके वह देव स्वर्गसे चयकर कर्मोदयसे अग्निसह नामका पुत्र हुआ और अपने एकांत मतके शास्त्रोंका ज्ञाता होता हुआ। फिर पूर्वकृत कर्मोदयसे परिव्राजक दीक्षाको धारण कर आयुके क्षय होनेपर मरणको पाता हुआ। उस अज्ञानतपके क्लेशसे सानत्कुमार नामके तीसरे स्वर्गमें वह देव उत्पन्न हुआ। वहांपर भोगादि सामग्री सहित सात सागरकी आयु पाई।

इस भरत क्षेत्रमें मंदिर नामके श्रेष्ठ नगरमें गौतम नामका ब्राह्मण था। उसके घर वह देव स्वर्गसे चयकर अग्निमित्र नामका पुत्र हुआ। वह खोटे शास्त्रोंका पारगामी मिथ्यादृष्टि होता हुआ। फिर पूर्वजन्मके संसारसे पहली त्रिदंडी दीक्षाको धारण कर शरीरको कष्ट देता हुआ अपनी आयुके पूर्ण होनेपर मरणको प्राप्त हुआ। पहलेके अज्ञान तपके प्रभावसे माहेंद्रनामके पांचवें स्वर्गमें अपने योग्य आयु संपदा तथा देवियोंसे शोभायमान देव हुआ।

उसी रमणीक मंदिर नामके नगरमें सालंकायन नामका ब्राह्मण रहता था उसकी प्यारी स्त्रीका नाम मंदिरा था, उनके वह देव माहेंद्र स्वर्गसे चयकर भारद्वाज नामका पुत्र हुआ। वह पूर्वजन्मके संसारसे मिथ्याशास्त्रोंके अभ्यासमें लगा रहता था, मिथ्या ज्ञानसे उत्पन्न हुए वैराग्यसे उस भारद्वाजने पूर्वकी तरह त्रिदंडी दीक्षा ली और उस कायक्लेश तपसे देवायुको बांधकर मरगया। उस तपके फलसे पांचवें स्वर्गमें देव हुआ, वहां पर सात सागरकी आयु और तप करके उपार्जन किये भोगोंको पाया। वहांसे चयकर खोटे मार्गके प्रवर्तानेसे उपार्जन किये महा पापोंके उदयसे असंख्यात वर्ष निंदनीक त्रस स्थावर योनियोंमें दुःख पाता हुआ भटकता रहा। आचार्य कहते हैं कि देखो यह प्राणी मिथ्यात्वके फलसे अनेक प्रकारके महान् दुःख भोगता है।

अग्निमें पड़ना, हालाहल (जहर) का खाना अथवा समुद्रमें डूबकर मर जाना तो अच्छा लेकिन मिथ्यात्वसहित जीना अच्छा नहीं है। सिंह, वैरी, चोर, सर्प और विच्छू इन प्राणोंके नाशक दुष्टजीवोंकी संगति करना तो किसी तरह ठीक है परंतु मिथ्यादृष्टि जीवोंके साथ संबंध रखना किसी तरह भी अच्छा नहीं है क्योंकि वे दुष्ट तो एक जन्ममें दुःख दे सकते हैं—परंतु मिथ्यात्वके परिणामसे सैकड़ों जन्मतक दुःख सहने पड़ते हैं। बुद्धिमान् सत्पुरुष ऐसा कहते हैं तराजूमें एक तरफ तो हिंसादि पापों-

को रक्खा जावे तथा दूसरी तरफ मिथ्यात्वको, तो इन दोनोंमें इतना फरक है कि मेरु-पर्वत और सरसोंमें जितना हो अर्थात् हिंसादि पापोंसे भी बहुत भारी मिथ्यात्वपरिणामको कहा है ऐसा समझकर हे भव्यजीवो तुमारे प्राण भी जाते हों तो भी अगर तुम दुःखोंसे डरते हो तो दुःखोंकी खानि ऐसे मिथ्यात्वको कभी सेवन मत करो।

देखो वह मरीचिका जीव त्रिदंडी मिथ्यामार्गके सेवनके फलसे एक बिंदु (बूंद) मात्र सुखके लिये समुद्रके समान महान दुःखोंको भोगता हुआ। इस लिये यदि तुम उत्तम अविनाशी सुख चाहते हो तो सम्यग्दर्शनको ग्रहण करो और मिथ्यात्वको छोड़ो।

इस प्रकार श्री सकलकीर्तिदेव विरचित महावीरचरित्रमें पुरूरवादि-
बहुतभवोंके कहनेवाला दूसरा अधिकार पूर्ण हुआ ॥ २ ॥

तीसरा अधिकार ॥ ३ ॥

यस्यानंतगुणा व्याप्य त्रैलोक्यं हि निरर्गलाः ।
चरंति हृदि देवेशां गुणाप्त्यै स स्तुतोऽस्तु मे ॥ १ ॥

भावार्थ—जिसके अनंतगुण विना रुकावटके तीनों लोकोंमें विचर रहे हैं और इंद्रादिक भी अपने चित्तमें उनका चिंतवन करते हैं ऐसे श्रीवीतराग प्रभुकी स्तुतिं गुणोंकी प्राप्तिके लिये मैं भी करता हूं ।

मगधदेशके राजगृह नगरमें एक शांडिलि नामका ब्राह्मण था उसकी पारासिरी नामकी प्राणप्यारी स्त्री थी, उनके वह 'मरीचि'का जीव अनेक योनियोंमें भटकता हुआ 'स्थावर' नामका पुत्र हुआ और वह वेद वेदांग मिथ्या शास्त्रोंका पारगामी होता हुआ। उस जगह भी पहले अपने मिथ्यात्वके संस्कारसे परिव्राजक (त्रिदंडी) की दीक्षा ली और शरीरको क्लेश देने मात्र तप करता हुआ । उस कुतपके फलसे मरकर पांचवें माहेंद्र स्वर्गमें सातसागरकी आयु तथा थोड़ी संपदाको भोगनेवाला देव हुआ ।

उसी राजगृह नगरमें विश्वभूति राजा और उसकी जैनी नामकी प्यारी स्त्री थी, उनके वह देव स्वर्गसे आकर 'विश्वनंदी' नामका पुत्र हुआ और वह बड़ा पुरुपार्थ

चतुर शुभलक्षणोंवाला प्रसिद्ध हो गया । विश्वभूति राजाके बड़ा प्यारा विशाखभूति नामका छोटा भाई था, उसकी 'लक्ष्मणा' नामकी स्त्री थी उनके भी 'विशाखनंद' नाम-वाला दुष्टबुद्धि पुत्र हुआ। एक दिन निर्मल बुद्धिवाले 'विश्वभूति' राजा शरदऋतुके बादलोंको देख संसारसे वैराग्य चित्त हुए ऐसा विचारने लगे। देखो जैसे यह बादल क्षणमात्रमें ही विलाय गया–नष्ट हो गया, उसी तरह मेरी भी कभी आयु तथा यौवनादि संपदा सब नष्ट हो जायगी; इसमें संशय नहीं है। इस लिये जबतक यौवन आयु बलादि सामग्री क्षीण न हो जावे तबतक मोक्षके लिये निष्पाप तप अवश्य करना चाहिये। इत्यादि विचार करनेसे संसारके भोगोंसे विरक्त हुआ दीक्षाके लिये उद्यमी होता हुआ।

उसी समय वह श्रेष्ठ नृप अपने छोटे भाईको विधिपूर्वक राज्य देता हुआ और अपने पुत्रको युवराजका पद दिया । फिर वह राजा घरसे निकल जगत्से वंदनीक श्रीधर मुनीश्वरको मस्तक नवाकर और बाह्य अंतरंग परिग्रहोंको छोड़ वैरागी तीनसौ राजाओंके साथ मन वचन कायकी शुद्धिपूर्वक देवोंको दुर्लभ ऐसे संयमको मुक्तिके लिये उन मुनीश्वरसे ग्रहण करता हुआ। उसके बाद वह संयमी ध्यानरूपी तलवारसे इंद्रिय और मोहको जीतकर कर्मोंके नाश करनेवाले घोर तपको करता हुआ।

एक दिन अपने रमणीक वनमें वह विश्वनंदी अपनी रानियोंके साथ क्रीडा

करता हुआ बैठा था इतनेमें विशाखनंद उस विश्वनंदीको रमणीक वनमें बैठा देख अपने पिताके पास आकर बोला। हे पिता विश्वनंदीका वगीचा मुझे देना चाहिये नहीं तो मैं नियमसे परदेशको निकल जाऊंगा। ऐसा पुत्रका वचन सुनकर मोहसे वह राजा बोला, हे पुत्र अभी तू धीरज रख मैं तुझे शीघ्र ही किसी तरकीवसे वगीचेको दिलवाऊंगा। एक दिन वह राजा मायाचारीसे विश्वनंदीको बुलाकर ऐसा बोला हे भद्र आज यह राज्यभार तू ग्रहण कर और मैं अपने प्रांतवासी राजाओंद्वारा किये गये उपद्रवोंको शांत करनेके लिये तथा अपने देशको सुखकी प्राप्तिके लिये उन राजाओंपर चढाई करता हूं।

ऐसा वचन सुनकर वह विश्वनंदी कुमार बोला, हे पूज्य तुम तो यहां सुखसे बैठो और मैं तुमारी आज्ञासे आपका सब काम पूरा करूंगा। इस प्रकार उस राजाकी आज्ञा लेकर वह महा बलवान् विश्वनंदी अपनी सेनाके साथ दुश्मनोंके जीतनेको जाता हुआ। उसके जानेके बाद वह राजा अपने पुत्रको वगीचा देता हुआ। आचार्य कहते हैं कि इस मोहको धिक्कार होवे जिससे कि अशुभ काम यह प्राणी कर डालता है। वगीचेके रक्षकसे भेजे हुए दूतसे यह बात जानकर महाधीर वीर विश्वनंदी मनमें ऐसा विचारता हुआ कि देखो आश्चर्यकी बात मेरे काकाने मुझे वैरियोंके प्रति भेजकर ऐसी दगाबाजी की जो कि प्रेम तथा राज्यका नाश करनेवाली है।

अथवा मोही पुरुषोंको तीन लोकमें ऐसा कौनसा खोटा कार्य बाकी रह जाता है जिसे वे मोहसे अंधे होकर नहीं करते, सभी कर डालते हैं। जो कि इस लोक तथा परलोक दोनोंके बिगाड़नेवाले हैं। ऐसा विचार कर उस वनके हरनेवाले भाईको मारनेके लिये वह कुमार क्रोध करता हुआ अपने बगीचेकी तरफ आया। उस कुमारके भयसे अत्यंत डरता हुआ वह विशाखनंद शीघ्र ही कपित्थ (कैथ) वृक्षके चारों तरफ़ बाड़ लगाके बीचमें बैठगया। अद्भुत पराक्रमवाला भयको देनेवाला वह कुमार भी उस वृक्षको जड़ सहित उखाड़के अपने शत्रु भाईके मारनेको दौड़ा। उसके बाद वह विशाखनंद पत्थरके बने हुए बड़े खंभेकी आड़में छिप गया। आचार्य कहते हैं—अन्याय करनेवालोंकी जीत कहां होसकती है ?। वह बलवान् कुमार मूठके घातसे स्तंभको उखाड़ सैकड़ों टुकड़े करता हुआ, ठीक है इस जगत्में बलवान् पुरुष क्या नहीं कर सकते? सभी कुछ कर सकते हैं।

वहांसे भागे हुए अपने नुकसान करनेवाले भाईको दीन समान मुंह करता हुआ देख उस कुमारको मनमें करुणा (दया) आई और ऐसा विचारने लगा। अहो इन विषय भोगोंको धिक्कार है जिनके लिये दीन मुख हुए भाइयोंको मारना बांधना आदि दंड (सजा) किया जावे। यह जीव अनेक तरहके भोगोंको भोगता हुआ कभी

तृप्त न हुआ तो दुःखको उत्पन्न करनेवाले ऐसे दुष्ट भोगोंसे सज्जनोंको क्या फायदा है। अपनी स्त्रीके अंगको मर्दन करनेसे उत्पन्न हुए ये भोग मानके नाश करनेवाले होते हैं तो स्वाभिमान रखनेवाले मानी पुरुष सबको दुःख देनेवाले भोगोंकी क्यों वांछा करते हैं, नहीं करनी चाहिये। ऐसा विचार उस विशाखनंदको बुलाकर शीघ्रही उसे वनको सुपुर्द कर वह कुमार राज्यलक्ष्मी छोड़कर श्रीसंभूतगुरुके पास गया। वहां मुनी-श्वरके चरणकमलोंको नमस्कार कर सब परिग्रहको छोड़ सबसे वैराग्यको प्राप्त हुआ वह विश्वनंदी तपको धारण करता हुआ। देखो लोकमें कहीं २ नीच पुरुषोंकर किया गया अपकार भी हथियारसे चीरा लगानेवाले वैद्यकी तरह सज्जनोंको महान उप-कारका करनेवाला हो जाता है।

उसके बाद विशाखभूति राजा भी महान् पछतावा करके अपनेको बहुत निंद-कर उसी समय संसार शरीर भोगोंसे उदास होके उसी मुनीश्वरके पास जाके मन, वचन कायसे सब परिग्रह छोड़ प्रायश्चित्तके समान जिनदीक्षाको ग्रहण करता हुआ। फिर अत्यंत निष्पाप अति कठोर तपको अपनी शक्तिके अनुसार बहुत कालतक आच-रण कर मृत्युके समय संन्यास (समाधिमरण) को धारण किया। उसके फलसे दशवें महाशुक्र नामके स्वर्गमें वह विशाखभूति संयमी महान् ऋद्धिका धारी धर्मात्मा देव हुआ।

विश्वनंदी मुनि भी अनेक देश ग्राम बनादिकोंमें भ्रमता हुआ पक्ष महीने आदिके अनशनादि तपसे जिसका शरीरसंबंधी बल अत्यंत क्षीण होगया है तथा ओठ मुंह आदि अंग जिसके सूख गये हैं ऐसी अवस्थावाला ईर्यापथदृष्टिसे (जमीन शोधकर) मथुरा नगरीमें प्रवेश करता हुआ। इसी अवसर पर वह विशाखनंद भी खोटे व्यसनोंके सेवनसे राज्यसे भ्रष्ट हुआ किसीका दूत बनकर उसी नगरीमें आया। और वेश्याकी हवेलीके ऊपर बैठा हुआ ही था कि नीचे जाते हुए उन विश्वनंदी मुनिको गौके बछड़ेके सींगके धक्केसे गिरा देख अपना नाश करनेवाले खोटे वचन हंसकर कहता हुआ। हे मुनि! आज वह तेरा पहला पराक्रम (बल) कहां भागगया कि जिस बलसे तूने पत्थरका स्तंभ तोड़ा था सो मुझको कह। क्योंकि अब तू दुर्बल शक्तिहीन मैले शरीरवाला शीतादि बाधाओंसे मुर्देकी तरह जले हुए शरीरवाला दीखता है।

इस प्रकार उस विशाखनंदके वचन सुनकर जिसको क्रोध मान उदय होगया है ऐसा वह मुनि क्रोधसे लालनेत्र करके अंतरंगमें ही कहने लगा कि अरे दुष्ट मेरे तपके प्रभावसे निश्चयकर इस हँसीका कटुक फल ऐसा भारी पावेगा जोकि तेरे मूलका नाश हो जाइगा। इस तरह उसके नाश करनेरूप, बुद्धिमानोंकर निंदा किया गया ऐसा निदानबंध करके समाधिमरण द्वारा प्राणोंको त्यागता हुआ। उस तपके फलसे वह

उसी दशवें स्वर्गमें देव हुआ कि जहांपर श्रेष्ठ मुनि विशाखभूति देव हुआ था। वहां सोलह सागरकी आयु उन दोनोंने पायी। ऐसे वे दोनों उत्तम देव सात धातु रहित दिव्य-शरीरको धारण करते हुए। और विमानोंमें बैठकर सुमेरु पर्वत तथा नंदीश्वरादि द्वीपोंमें श्रीजिनेन्द्रदेवकी भक्तिभावसे पूजा करते हुए तथा भगवान्के गर्भादि पंचकल्याणकके महोत्सवमें जाते हुए। अपने पूर्वतपके फलसे सब असातारूप दुःखोंसे रहित अपनी देवियोंके साथ हर्षसहित अनेक तरहके भोग भोगते हुए वहां रहते हुए।

अथानंतर इसी जंबूद्वीपमें सुरम्यदेश है उसमें शुभनामवाला पोदनपुर नगर है। उसका कल्याणकारी प्रजापति नामका राजा और उसकी जयावती रानी थी। इन दोनोंके घर वह विशाखभूतिराजाका जीव देवता स्वर्गसे आकर विजयनामका बलभद्र हुआ और विश्वनंदिका जीव वह देव स्वर्गसे चयकर उसी राजाकी मृगावती रानीके त्रिपृष्ट नामका महाबलवान् पहला नारायण हुआ। चंद्रमाके समान तथा नीलमणिके समान वर्णवाले वे दोनों भाई अनेक कलाओंमें चतुर, न्यायमार्गमें लीन, प्रतापी, शास्त्रोंके जाननेवाले, भूमिगोचरी, विद्याधर तथा देवोंकर वंदनीक, महान् विभूतिकर पूर्ण अमूल्य दिव्य आभरणों (गहनों) से शोभायमान, क्रम २ से जवान अवस्थाको प्राप्त हुए। पूर्व किये हुए महान् पुण्यके उदयसे महान् उदयको प्राप्त, सुंदर भोग उपभोग सामग्रीके

होते हुए।

अथानंतर इसी भरत क्षेत्रके विजयार्धपरवतकी उत्तर श्रेणीमें अलका नाम पुरीमें मयूर ग्रीव राजा और उसकी नीलंजना रानी थी। उन दोनोंके वह विशाखनंदका जीव वहुत कालतक संसारसमुद्रमें भटकता हुआ स्वर्गसे चयकर कुछ पुण्यके उदयसे अश्व-ग्रीव नामका पुत्र हुआ। वह बुद्धिमान् तीन खंड पृथ्वीका स्वामी अर्धचक्री, देवोंकर सेव्य तथा प्रतापी भोगोंमें लीन होता हुआ। उसी विजयार्धकी उत्तरश्रेणीके रथनूपुर-देशमें चक्रवाल पुरी थी। उस नगरीका स्वामी ज्वलनजटी था वह पुण्यके उदयसे चरम शरीरी तथा अनेक विद्याओंकर शोभायमान था।

उसी पर्वतके रमणीक द्युतिलक नामके नगरमें चंद्राभ नामका विद्याधरोंका स्वामी था और उसकी सुभद्रा नामकी प्यारी स्त्री थी। उन दोनोंके वायुवेगा नामकी महारूपवाली पुत्री उत्पन्न हुई। जवान होनेपर ज्वलनजटीके साथ उस पुत्रीका विवाह हुआ। उन दोनोंके सूर्यके समान तेजस्वी 'अर्ककीर्ति' नामका पुत्र और मनोज्ञरूपवाली व शुभ परिणामोंवाली 'स्वयंप्रभा' नामकी पुत्री हुई। एक दिन वह विद्याधरोंका राजा अपनी

पुत्रीको पूर्ण यौवनवाली तथा धर्ममें लवलीन देख संभिन्न श्रोतृ नामक निमित्तज्ञानीको बुलाकर पूछता हुआ कि इस पुत्रीका कौनसा पुण्यवान् पति होगा।

उस राजाके प्रश्नको सुनकर वह निमित्तज्ञानी वोला, हे महाराज पहले अर्ध-चक्री नारायण (त्रिपृष्ट) की यह तेरी पुत्री पटरानी होगी। और विजयार्धकी दोनों श्रेणीका राज्य वह तुझे दिलवावेगा। तव तू विद्याधरोंका स्वामी होगा। इसमें कुछ संदेह मत कर। इस प्रकार उस निमित्तज्ञानीके श्रेष्ठ वचनोंका निश्चयकर इंद्र नामा मंत्रीको वुलाकर पत्र लिखवाता हुआ। वह लिखितपत्र उस मंत्रीको देकर उसे पोदनपुर-को भेजता हुआ। वह मंत्री दूत आकाशमार्गसे शीघ्रही पुष्पकरंडक वनमें पहुंचा।

इधर त्रिपृष्ट भी किसी निमित्तज्ञानीके वचनोंसे पहले ही सव आगमनकी वात जानकर उस दूतके लेनेके लिये हर्षके साथ सामने आया। उस दूतको वहुत आदरसे पोदनाधिपतिके पास ले आता हुआ। वह पौदनपुरेश्वरको मस्तक नवाकर उस लिखे हुए पत्रको देके अपने योग्य स्थानपर वैठ गया। पत्रके भीतर मोहर (छाप) देखकर 'यह किसी मुख्यकार्यकी सूचक है' ऐसा विचारता हुआ वह पत्र खोलके वांचता हुआ। उसमें ऐसा लिखा हुआ था—पवित्र वुद्धि, न्यायमार्गमें सदालीन, महाचतुर नमिराजाके वंशमें सूर्यके समान ऐसा विद्याधरोंका पति ज्वलनजटी रथनूपुर शहरसे, ऋषभ देवसे

उत्पन्न बाहुबलिके बंशमें उत्पन्न हुए ऐसे पोदनपुरके स्वामी महाराज प्रजापतिको स्नेह-पूर्वक मस्तक नवाकर कुशल पूछनेके वादमें सविनय प्रार्थना करता है कि हे प्रजानाथ निर्मल वंशवाले हमारा तुमारा संबंध बहुत पीढियोंसे चला आरहा है कुछ विवाहका ही संबंध नहीं है, इसलिये पूज्य मेरे भानजे त्रिपृष्ठ नारायणके साथ मेरी पुत्री स्वयंप्रभा दूसरी लक्ष्मीकी तरह अत्यंत प्रेमको विस्तारित करे अर्थात् मेरी पुत्रीका आपके पुत्रके साथ विवाह हो जावे तो बहुत अच्छा होवे।

प्रजापति राजा ऐसे प्रेमी संबंधियोंके वचन सुनकर हर्षपूर्वक उस मंत्री दूतको कहते हुए कि जो उनकी इच्छा है वह मुझे भी स्वीकार है। इस तरह वह मंत्री-दूत राजासे आदर व दानादि पाकर वहांसे लौट शीघ्रही अपने स्वामीके पास आकर कार्यसिद्धिको निवेदन करता हुआ। उसके वाद अर्ककीर्ति पुत्र सहित वह ज्वलन-जटी राजा शीघ्र ही त्रिपृष्ट कुमारको बुलाकर हर्ष पूर्वक महान विभूतिके साथ विवाह-विधिके अनुसार उस कुमारको अपनी स्वयंप्रभा कन्या विवाहता हुआ। वह कन्या भी मानों दूसरी लक्ष्मी ही थी। देखो पुण्यके उदयसे किस चीजका मिलना कठिन है? सब मिल सकती है।

फिर वह विद्याधरोंका स्वामी अपने जमाईको सिंहवाहिनी और गरुडवाहिनी ये

दो विद्या विधिके अनुसार देता हुआ । इस विवाहादिकी बातको वह प्रतिनारायण अश्वग्रीवराजा दूतके मुखसे सुनकर एकदम क्रोधाग्निसे जलता हुआ । बहुत विद्याधर-राजाओंको साथ लेकर सेनाके साथ युद्ध करनेके लिये चक्ररत्नसे शोभायमान वह राजा रथनूपुरके पर्वतपर आता हुआ ॥ इधर उसके आगमनकी खबर सुनके त्रिपृष्ट भी अपने कुटुम्बियोंके साथ चतुरंग सेनाको लेकर पहले ही से पहुंच गया था । फिर उन दोनोंका बड़ा भारी युद्ध हुआ उसमें होनहार चक्री त्रिपृष्टने हय (अश्व) ग्रीवको अपने पराक्रम से जीत लिया । फिर उसने क्रोधसे देवी शस्त्र चक्ररत्नको त्रिपृष्टके मारनेके लिये चलाया, वह चक्र भी उस त्रिपृष्टके महान् पुण्यके उदयसे प्रदक्षिणा देकर उसकी दाहिनी भुजा पर आकर विराजमान होगया । उसके बाद त्रिपृष्ट भी तीन-खंडकी लक्ष्मीको वशमें करनेवाले तथा दुश्मनको भयके देनेवाले चक्र रत्नको अत्यंत क्रोधसे उसके ऊपर फेंकता हुआ । फिर उस चक्रसे अश्वग्रीवकी मौत होगई और रौद्र-परिणामसे तथा पहले बहुत आरंभ परिग्रहके एकत्र करनेसे नरकायु बांधकर वह दुर्बुद्धि अश्वग्रीव महापापके उदयसे सातवें नरकमें गया । जो नरक सब दुःखोंकी खानि है जिसमें सुख रंचमात्र भी नहीं है तथा घृणाका स्थान है ।

अथानंतर वह त्रिपृष्ट उस अश्वग्रीवके जीतनेसे जगतमें कीर्ति (नाम) पाकर उस

चक्ररत्नसे तीन खंडवर्ती राजाओंको अपने आधीन करता हुआ । विद्याधरोंके स्वामी मागधादि राजाओंको और व्यंतराधिपतीको वशमें कर अपने पराक्रमसे कन्यारत्न आदि सार (श्रेष्ठ) वस्तुएं लेता हुआ । तथा रथनूपुरके महाराजको विजयार्धकी दोनों श्रेणियोंका राज सोंपकर आप परमविभूतिके साथ षडंगसेना तथा छोटे भाई सहित आनंदके साथ अपने नगरमें प्रवेश करता हुआ । जो नगर अनेक उत्सवोंसे शोभायमान था । पहले उपार्जनकिये पुण्यके उदयसे चक्रादि सात रत्नोंसे शोभायमान और देव तथा सोलह हजार विद्याधर राजाओंसे नमस्कार किया गया वह प्रथम केशव (नारायण) त्रिपृष्ठ सोलह हजार राजकन्याओंके साथ अनेक तरहके भोगोंको भोगता हुआ । इस तरह मृत्युपर्यंत अत्यंत भोगोंकी तृष्णावाला और व्रतका अंशमात्र भी नहीं पालनेवाला वह धर्म पूजा दानादिका नाम भी नहीं लेता था । इसलिये बहुत आरंभ, ममता परिणाम, अत्यंत विषयोंमें लवलीन होनेसे खोटी लेश्या और रौद्रध्यानसे नरकायु बांधता हुआ । फिर आयुपूर्ण होनेपर प्राणरहित हुआ सातवें नरकमें गया ।

वहां घिनावने डरावने उत्पत्तिस्थानमें नीचा मुख किये हुए जन्म लेता हुआ, फिर दो घड़ीमें पूर्ण शरीर होगया । उसके वाद वह त्रिपृष्ठका जीव उस स्थानसे नरककी पृथ्वीपर गिरा और उसके छूजानेसे बहुत चिल्लाया । जो पृथ्वी हजार बीछुओंसे

अधिक काट लेनेसे भी अधिक वेदनावाली है। ऐसी पृथ्वीके स्पर्शसे दुखी हुआ १२० कोश ऊपर उछलकर फिर पत्थर और कांटोंसे भरी हुई पृथिवीपर गिरा। तदनंतर दीन हुआ वह मारनेको आये हुए नारकियोंको देख तथा सवतरहके दुःखोंको देनेवाले उस क्षेत्रको देखकर ऐसा विचारता हुआ।

देखो अचंभेकी वात है कि ऐसी खराव पृथ्वी यह कौनसी है कि जिसमें सभी दुःख भरे हुए हैं और ये दुष्ट नारकी कौन हैं जो कि दुख देनेमें वहुत चतुर हैं। मैं कौन हूं और यहां अकेला कैसे आया। कौंनसा खोटा कर्म इस भयंकर स्थानमें मुझे ले आया है इत्यादि विचार कर रहा था इतनेमें उसको विभंगा (खोटी) अवधि हुई उससे अपनेको नरकमें पड़ा हुआ जान ऐसा विलाप करने लगा।

अहो मैंने पहले जन्ममें अनेक जीवोंको मारा और झूठ तथा कठोर वचन दूसरोंको कहे। मुझ पापीने लोभके वश होकर पराई लक्ष्मी तथा स्त्री वगैरः वस्तुएँ जवरदस्ती हरके सेवन कीं (भोगीं) और धन वहुत इकट्ठा किया। मैंने पांच इंद्रियोंके वशमें होकर नहीं खाने योग्य पदार्थ खाये, नहीं सेवने योग्य पदार्थ सेवन किये और नहीं पीने योग्य चीज़ोंको पिया। इस वावत वहुत कहनेसे कुछ लाभ नहीं मुझ दुर्बुद्धिने पहले जन्ममें वड़े २ सव पाप कर डाले जो कि मेरा नाश करनेवाले हैं।

लेकिन मैंने स्वर्ग मोक्षका देनेवाला परमधर्म नहीं धारण किया और कल्याणके देनेवाले अहिंसादि व्रतोंको भी नहीं पाला। कोई तप भी नहीं किया, पात्रको कभी दान नहीं दिया, जिनेंद्र देवकी पूजा नहीं की। और भी कोई शुभ कार्य नहीं किया। इसीलिये सब महान् पापोंके आचरण करनेसे उनके फलका उदय आनेपर इस समय बड़ी भारी तकलीफ़ मेरे आगे खड़ी होगई अर्थात् मैं बहुत दुःखी हूं। हाय! अब मैं कहां जाऊं किसे पूछूं किसकी शरण जाऊं और मेरा यहां कौन रक्षा करनेवाला हो सकता है।

इत्यादि चिंताओंसे उत्पन्न निरुपाय पछतावोंसे उसका चित्त अत्यंत दुःखी हो रहा था इतनेमें ही पुराने नारकी आकर इस नये नारकीको देख मुद्गर वगैरः हथियारोंसे मारने लगे। कोई दुष्ट उसके नेत्रोंको निकालने लगे, कोई सब अंगोंको फाड़ते हुए आंतोंको निकालने लगे, कोई निर्दयी उसके शरीरके तिल २ भरके टुकड़े कर कड़ाहमें औटाने लगे। कोई हथियारसे उसके सब अंग उपांगोंको काटने लगे। फिर चिल्लाते हुए उसे गर्म तेलके कड़ाहमें दाह उत्पन्न करानेके लिये पटकते हुए। उस कड़ाहमें उसका सब शरीर जल गया इससे वह अत्यंत दाहसे पीड़ित हुआ उस दाहकी शांतिके लिये वैतरणी नदीके जलमें डुबकी लगाता हुआ। वहांपर अत्यंत खारी व दुर्गंध जलसे पीडित होकर असिपत्रवनमें विश्राम करनेके लिये गया। उस वनमें हवाके

जोरसे असिपत्र वृक्षोंसे गिरे हुए तलवारके समान पैने पत्तोंसे उसका शरीर छिन्नभिन्न हुआ डरावना होगया। फिर वह खंडित शरीरवाला बहुत दुःखी हुआ वहांसे चलकर दुखोंकी शांतिके लिये पहाड़की गुफाओंमें घुसता हुआ। वहां भी क्रूर नारकियोंने विक्रियाके जोरसे सिंहव्याघ्र, सर्पादि स्वरूप बनकर उसको मारकर खानेका आरंभ किया।

इत्यादि अनेक प्रकारके कविवाणीके अगोचर उपमारहित दुःखोंको पापके उदयसे वह दिनरात भोगता हुआ। वहांपर समुद्रका सब जल पीनेसे भी नहीं शांत होनेवाली प्याससे प्यासा हुआ था तौ भी कभी बूंदके बराबर भी जल पीनेको नहीं मिला। सब संसारभरके अन्नको खाकर भी तृप्त नहीं होनेवाली ऐसी भूंखसे पीडित होनेपर तिलके समान भी कभी आहार खानेको उसे नहीं मिला। उस नरकमें इतनी ठंड है कि एक लाख योजनके प्रमाण लोहेका गोला डाल दिया जावे तो शीघ्रही शीतवर्फसे सैकड़ों टुकड़े होसकते हैं। इत्यादि अन्य भी दुःखोंको वह पापी दिनरात भोगता हुआ। जो दुःख कायवचनमनसे उत्पन्न हुआ, आपसमें दियागया और उस क्षेत्रसे उत्पन्न हुआ पांच तरहका है। उस नारकीने कृष्ण लेश्यापरिणामसे दुःख देनेवाली तेतीस सागरकी आयु पायी।

अथानंतर उस त्रिपृष्ठ नारायणके वियोगसे अतिपुण्यवान् बलभद्र शीघ्र ही संसार

शरीर और भोगोंसे वैराग्यको प्राप्त होता हुआ। वह बलभद्र अतिकठिन दोनों तरहक तप करता हुआ ध्यानरूपी तलवारसे समस्त कर्मरूपी शत्रुओंको जीत अनंतज्ञान अनंता दर्शन अनंत सुख अनंत बलरूप अनंत चतुष्टयको पाकर देवोंकर पूजित हुआ अनंत सुखका समुद्र बाधरहित अनुपम सब जीवोंकर नमस्कार करने योग्य मोक्षपदको पाता हुआ।

इसप्रकार श्रेष्ठ चारित्र (आचरण) पालनेसे भोगोंको भोगता हुआ भी एक बलभद्र तो मोक्षको गया और दूसरा नारायण खोटे आचरणसे उत्पन्न पापके उदयसे अंतके पातालछिद्रमें (नरकमें) गया। इसलिये हे बुद्धिमान भव्यजीवो श्रेष्ठ चारित्रका पालन करो जिससे कि सुखकी प्राप्ति हो।

इसप्रकार श्रीसकलकीर्ति देवविरचित महावीरपुराणमें चार स्थूलभवोंका
कहने वाला तीसरा अधिकार पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥

चौथा अधिकार ॥ ४ ॥

श्रीमते मुक्तिनाथाय स्वानंतगुणशालिने ।
महावीराय तीर्थेशे त्रिजगत्स्वामिने नमः ॥ १ ॥

भावार्थ—अंतरंग बहिरंग लक्ष्मीवाले, मुक्तिके नाथ, आत्मीक अनंत गुणोंसे शोभायमान, तीन जगतके स्वामी ऐसे श्री महावीर स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं।

अथानंतर वह त्रिपृष्ठ नारायण नारकी अपनी आयुके पूर्ण होनेपर नरकसे निकलकर वनिसिंह नामा पर्वत पर पापके उदयसे सिंह होता हुआ। वहां पर भी उसने हिंसादि महा पापकार्योंसे महान् पापोंको उपार्जन किया और उनके उदयसे फिर भी निंदनीक रत्नप्रभा नामकी पहले नरककी पृथ्वीपर जन्म लेता हुआ। वहां पर एक सागरतक महान् दुःखोंको भोगकर उसके बाद वहांसे चयकर अशुभ कर्मके उदयसे इसी जंबूद्वीपके भरत क्षेत्रमें सिद्धकूट की पूर्वदिशामें हिमवान पर्वतकी शिखरपर तीखी डाढोंवाला मृगोंको खानेवाला सिंह होता हुआ।

किसी समय आकाशमार्गसे जाते हुए चारण ऋद्धिधारी अजितंजय नामा मुनिने एक हरिणको खाते हुए उस सिंहको देखा। कैसा है मुनि, भव्यजीवोंके हित करनेमें

उद्योगी है, अनेक गुणोंका समुद्र है और आकाशमार्गगामी अमितगुण नामा मुनिके साथमें है।

वह चारणमुनि तीर्थंकरके वचनोंको याद कर कृपाकरके आकाशसे पृथ्वीपर उतर शिलाके ऊपर बैठ गया। फिर उस सिंहसे हित करनेवाले वचन कहता हुआ कि हे मृगपति भव्य! हितकारी मेरे बचनोंको तू सुन। तूने पहले भवमें शुभकर्मके उदयसे त्रिपृष्ठ नारायण होके सब इंद्रियोंको तृप्त करनेवाले सुंदर भोग भोगे। अति सुंदर स्त्रियोंके साथ रमण करता हुआ तीनखंडकी पृथ्वीका स्वामी हुआ। परंतु विषयोंमें केवल फंस-जानेसे श्रेष्ठ धर्मकी तरफ कुछभी ध्यान नहीं दिया। उस महान् पापके उदयसे विषयांध होकर मरण करके तू सातवें नरकमें गया। वहांपर खारे जलयुक्त दुर्गंधवाली वैतरणी नदीमें तुझे पापी नारकियोंने पटक दियाथा और परस्त्रीसंगके पापसे उसके बदले अग्निसे तपाई हुई लोहकी पुतली तेरे अंगसे वार २ लिपटाई थी तथा कर्ण ओठ नाक वगैरः अंगोंको काट डालाथा।

जीवहिंसाके पापसे तेरे तिल २ भरके टुकटे कर डाले थे तथा तुझे शूलीपर चढाया था इत्यादि अनेकप्रकार दुःखोंसे जब पीडित हुआ तब तूने शरण की इच्छाकी सो वहां कोई सहायक नहीं मिला। फिर आयुके पूर्ण होनेपर नरकसे निकल कर्मरूपी वैरियोंकर घिरा-

हुआ पराधीन होके अत्यंत पापबुद्धिवाला तू इसी वनमें सिंह हुआ था। भूख पियास गर्मी सर्दी वगैरःसे सताया हुआ तू फिर भी हिंसादि खोटे काम करने लगा। उसके फलसे फिर भी सब दुःखोंकी खानि पहली नरककी पृथिवीमें गया। वहांसे चयकर यहींपर तू फिर भी सिंह हुआ है सो अब भी क्रूरता (दुष्टता) स्वभावको धारण कर रक्खा है क्या नरकके महान् दुःखोंको तू बिलकुल भूलगया ?।

अब हे मृगपति दुर्गतिके नाशके लिये तू शीघ्रही क्रूरपना छोड़ शुभरूप अनशन-व्रतको धारण कर, जिससे तेरा कल्याण हो। ऐसे उन मुनिके वचन सुनकर उस सिंहको जातिस्मरण होगया, तब बड़े भारी संसारके दुःखोंको विचारनेसे उसका सब शरीर कांपने लगा और नेत्रोंसे आंसू वहने लगे। फिर वह शांतचित्त होकर पछताने लगा। उसके बाद वे मुनि अपनी तरफ निगाह रखनेवाले तथा शांतचित्तवाले उस सिंहके पास आकर दया करके ऐसा कहते हुए। कि पहले जन्ममें तू पुरूरवा भील था वहां कुछ धर्मको पालन करनेसे सौधर्म स्वर्गमें देव हुआ। वहांसे चयकर पूर्वपुण्यके उदयसे महाराज भरतचक्रवर्तीका मरीचि नामा तू पुत्र हुआ। फिर श्रीऋषभदेवके साथ दीक्षा धारण की लेकिन परीषहोंके सहनेके डरसे श्रेष्ठ मार्गको छोड़ पापके उदयसे मिथ्याती पाखंडियोंका तूने भेष रक्खा।

श्रेष्ठमार्गको दोष लगाकर मिथ्यामार्गको बढाया और अपने बाबा श्रीऋषभदेवके सत्य वचनोंका अनादर किया। उस मिथ्यात्वसे उत्पन्न हुए पापोंके उदयसे जन्म-मरणसे पीड़ित हुआ इस संसारवनमें भटकते २ अनेक दुःख भोगे। इष्ट वस्तुके वियोगसे अप्रिय वस्तुके संयोगसे और रोगादिकी वेदनासे तूने वहुत दुःख पाये। फिर उसी मिथ्यात्वरूपी महान्पापसे असंख्यात (वहुतसी) त्रस स्थावर योनियोंमें भटकता रहा।

किसी कारणसे तू फिर किसी राजाके यहां विश्वनंदी पुत्र हुआ। फिर संयमको धारण किया परंतु निदान बांधनेसे त्रिपृष्ठ नामका नारायण हुआ।

अव तू इसी भरत क्षेत्रमें इस जन्मसे लेकर दशवे जन्ममें निश्चयसे जगत्का हित करनेवाला चौवीसवां तीर्थंकर होगा। यह बात विलकुल सत्य है। क्योंकि—जंबूद्वीपके पूर्व विदेहमें श्रीधरनामक तीर्थंकरको किसीने सभामें पूछा था कि हे भगवन् जंबूद्वीपके भरतक्षेत्रमें जो अंतका (चौवीसवां) तीर्थंकर होगा उसका जीव आजकाल किस जगह है। इसप्रकार उस भव्यके प्रश्नका उत्तर श्रीधरतीर्थंकर अपने गणधरोंको जैसा कहते हुए वैसा ही मैंने तेरे हितके लिये तुझे सव हाल सुना दिया है।

इसलिये अव तू वहुत समयसे लगे हुए संसारका कारण ऐसे मिथ्यात्वको हालाहल

जहरके समान छोड़कर आतमशुद्धिका कारण सम्यक्त्वको धारणकर, जो सम्यक्त्व धर्म-रूपी कल्पवृक्षका बीज है, मोक्षमहलके चढ़नेकी पहली सीढी है। ऐसे सम्यक्त्वको शंकादि दोषोंकर रहित होकर स्वीकार कर, जिससे कि तुझे शीघ्र ही निश्चय करके तीन जगत्की विभूति, तीनजगत्में होनेवाले चक्रवर्ती आदिका सुख तथा आकुलतारहित अर्हत्पदका सुख मिलजावे।

क्योंकि तीन जगत्में सम्यग्दर्शनके समान न तो कोई धर्म हुआ न होगा और न है ही। वह सम्यक्त्व ही सब कल्याणोंका साधनेवाला है ॥ मिथ्यात्वके समान कोई पाप भी तीन लोकमें न हुआ न होगा न मौजूद ही है वह मिथ्यात्व ही सब अनर्थोंका मूल कारण है। वह सम्यक्त्व जीवादि साततत्त्वोंके श्रद्धानसे और सर्वज्ञदेव, शास्त्र निर्ग्रंथ गुरुओंके श्रद्धानसे होता है जिसके होनेसे ही ज्ञान चारित्र सच्चे कहे जाते हैं ऐसा। जिनेन्द्रदेवने कहा है। इस लिये हे भव्य तू सम्यक्त्व के साथ उत्कृष्ट श्रावकके बारह व्रतोंको धारणकर और अंतमें संन्यास व्रतसे प्राणोंके छोड़। अन्य सब मांसादिभक्षण हिंसादि पापोंको छोड़दे। अब तुझे संसारमें भटकनेका डर छूट गया इसलिये श्रेष्ठ मार्गमें रुचि (प्रीति) कर और खोटे मार्गमें जाना छोड़दे।

इस प्रकार योगीके मुखसे प्रकट हुए सच्चे धर्मरूपी अमृतरसको पीता हुआ और

पहलेका मिथ्यात्वरूपी जहर उगल दिया इसकारण अब वह सिंह शुद्ध चित्त होगया। फिर दोनों मुनियोंकी परिक्रमा देकर मस्तक नवाकर सात तत्त्व व देव शास्त्र गुरुका श्रद्धानरूप सम्यक्त्व हृदयमें धारण करता हुआ तथा वह सिंह काललब्धिके (अच्छी होनहारके) आजानेपर संन्यासव्रत सहित सब व्रतोंको स्वीकार करता हुआ। इस सिंहका आहार मांसके सिवाय दूसरा नहीं था जब मांस छोडै तब व्रत पालन होवै इस-लिये व्रतके आचरण करनेमें अत्यंत धीरज रखता हुआ। आचार्य कहते हैं जब अच्छी होनहार आजाती है तब कोनसा कठिन कार्य नहीं होसकता यानी सभी होसकते हैं।

उसी समयसे वह सिंह शांतचित्तवाला सब पापोंसे रहित संयमी होता हुआ ऐसा मालूम होने लगा कि मानों चित्रामका सिंह है। वह सिंह संसारकी दुःखमयी स्थितिको हमेशा चित्तमें वार २ विचारता हुआ भूख प्यासकी वेदनाको सहता हुआ। धीरजपनेसे सब जीवोंपर दयाभाव करता हुआ एकाग्रचित्तसे दोनों तरहके (आर्त रौद्र) खोटे ध्यानोंको छोडता हुआ। फिर पापोंका नाश करनेकेलिये निश्चल अंग करके स्थिर चित्त होके धर्म ध्यान और सम्यक्त्व वगैरह का चिंतवन करता हुआ।

इस प्रकार वह सिंह जीवन पर्यंत व्रतोंको पूर्णपनेसे पालनकर अंतमें समाधि मरण-पूर्वक प्राणोंको छोड़ता हुआ। व्रतादिकोंके फलसे सौधर्म नामके पहले स्वर्गमें महान्

ऋद्धिवाला सिंहकेतु नामका देव हुआ। दोघड़ीके वीचमें संपूर्ण जवान अवस्थाको प्राप्त होता हुआ। वहां पर अवधिज्ञानसे पूर्व जन्ममें पालन किये व्रतोंका फल जानकर धर्मके माहात्मकी प्रशंसा करके धर्ममें वुद्धिको दृढ करता हुआ।

उसके वाद वह देव अकृत्रिम चैत्यालयमें जाकर जलादि अष्ट द्रव्यसे अर्हंतकी मणिमयी प्रतिमाओंकी दिव्य महामह पूजा करता हुआ। फिर मनुष्यलोकमें नंदीश्वरादि दीपोंमें सब मनोरथोंकी सिद्धिके लिये जिनेन्द्र प्रतिमाओंकी पूजा करके जिनेन्द्र व गणधरादि मुनींद्रोंको हर्ष सहित प्रणाम करके और उनसे तत्वोंका स्वरूप सुनकर धर्मका उपार्जनकर अपने स्थानको आता हुआ। वहां अपने किये हुए पुण्यके उदयसे देवियोंको तथा विमानादि संपदाओंको पाता हुआ।

इस प्रकार वह देव अनेक तरह पुण्य उपार्जन करता (कमाता) हुआ सुंदर चेष्टा वाला सात हाथ प्रमाण दिव्य शरीरको धारण करता हुआ और जिसकी आखोंके पलक हमेशा खुले रहते थे। पहले नरककी पृथिवीतकका अवधिज्ञान व विक्रियाऋद्धिका वल था और दो हजार वर्ष वीत जाने पर हृदयसे झड़ने वाले अमृतका आहार था। तीस दिनबाद थोड़ी श्वास लेता था और देवांगनाओंके रूप विलास नाचना वगैरेः देखताथा-महल वगीचे पर्वतादिकोंमें अपनी देवियोंके साथ क्रीडा करता था और अपनी इच्छाके

अनुसार असंख्यात द्वीप समुद्रोंमें आप विहार करता था। दुःखोंसे रहित इंद्रियसुखरूपी समुद्रमें मग्न हुआ दो सागरकी आयु पाता हुआ और पसीना व धातुमलसे रहित था। इसप्रकार वह देव पूर्वं श्रेष्ठ चारित्र पालनेसे उपार्जन किये अनेक प्रकारके भोगोंको भोगता हुआ आनंदमें बीते कालको नहीं जानता हुआ।

अथानंतर धातकीखंड द्वीपके पूर्वविदेहमें मंगलकरनेवाला मंगलावती देश है, उसके मध्यमें विजयार्ध पर्वत है वह सौकोस ऊंचा है। उस पर्वतकी उत्तर श्रेणीमें कनकप्रभ नामका नगर है वह नगर सोनेके परकोटे गली तथा जिनालयोंसे बहुत शोभायमान है। उस नगरका स्वामी विद्याधरोंका राजा कनकपुंख था और सुवर्णके समान रंगवाली कनकमाला नामकी उसकी रानी थी। उन दोनोंके घर वह सिंहकेतु नामका देव स्वर्गसे चयकर सुवर्णकी कांतिके समान कनकोज्वल नामका पुत्र हुआ। पुत्र जन्मकी खुशीमें इसके पिताने जैनमंदिरमें जाकर कल्याणके करनेवाली पंच कल्याणकोंकी महान पूजा की। फिर दानादिसे बंधु वगैरः सज्जनोंको तथा दीन दुःखियोंको संतुष्ट करके गाना नाचना बाजे आदिसे जन्मका उत्सव किया। रूपवान वह बालक दौजके चंद्रमाके समान क्रमसे बढता हुआ अपने योग्य दुग्धपान अन्नवस्त्रा-लंकारादिके सेवन करनेसे सबको प्रिय लगता हुआ। अनेक शास्त्रोंको पढके तथा समस्त

कलाओंका अभ्यास करके रूप लावण्य कांति वगैरः गुणोंसे देवके समान शोभायमान होता हुआ ।

उसके बाद जवान अवस्था होनेपर इसका मामा हर्षके साथ कनकावती नामकी कन्याको गृहस्थ धर्म पालनेके लिये विवाहविधिसे देता हुआ । एक दिन वह कुमार अपनी स्त्रीके साथ महामेरु पर्वतपर क्रीड़ा करनेको तथा कल्याणके लिये जिनालयोंकी पूजा करनेको गया था । वहांपर आकाशगामिनी आदि ऋद्धियोंवाले अवधिज्ञानी मुनीश्वरको देख उनकी तीन परिक्रमा देके प्रणाम कर धर्मका चाहनेवाला वह कुमार धर्मकी प्राप्तिके लिये पूछता हुआ ।

हे भगवन् मुझे निर्दोष धर्मका स्वरूप बतलाओ कि जिससे मोक्ष मिलसके । वह योगी उस कुमारके वचन सुनकर इस प्रकार उसको हितकारी वचन कहता हुआ, हे बुद्धिमान तू एक चित्त होकर सुन, मैं तुझे धर्मका स्वरूप कहता हूं । संसारसमुद्रमें डूबते हुए भव्यजीवोंको निकालकर जो मोक्षस्थानमें रखे अथवा तीन जगतका स्वामी बनावे उसीको वास्तवमें धर्म समझो । जिससे इस भवमें तो पुरुषोंको संपदाकी प्राप्ति और मनोकामनाओंका पूरा होना व दुःखादिका नाश होता है तथा तीन लोकमें तारीफ होती है, और परभवमें देव राजा आदिकी विभूति सर्वार्थ सिद्धि तीर्थंकरपना बलभद्र

चक्रवर्ती पदकी प्राप्ति होती है उसे धर्म जानो । जो धर्म केवलीका उपदेशा हुआ है अहिंसास्वरूप है निष्पाप है इसके सिवाय दूसरा कोई धर्म नहीं है।

वह धर्म अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य परिग्रहत्याग ईर्या भाषा एषणा आदान निक्षेपण उत्सर्ग मनगुप्ति वचनगुप्ति कायगुप्ति—इस तरह तेरह प्रकारका है उसे वीतरागी मुनि ही धारण करते हैं। अथवा सब मूलगुणरूप तथा उत्तम क्षमादि दश स्वरूप परम धर्मको, मोह इन्द्रियरूपीचोरोंको जीतनेवाले योगी धारण करते हैं। इसलिये हे बुद्धिमान तू भी इस मुनि धर्मको धारण कर और कुमार (तरुण) अवस्थामें ही शीघ्र काम क्रोधादि वैरियोंको तपरूपीतलवारसे मार। चित्तमें धर्मको ही रख, धर्मसे अपनेको शोभायमान कर, धर्मके लिये ही घर वगैरःको छोड़, धर्मके सिवाय दूसरा आचरण मत कर, धर्मकी शरण ले, हमेशा धर्ममें ही स्थिर रह और हे धर्म मेरी सब तरफसे रक्षा करो—ऐसी प्रार्थना कर।

वहुत कहनेसे क्या लाभ है। अब तू शीघ्रही सबतरहसे मोहरूपी महान जोधाको मारकर मुक्तिकेलिये धर्मको ही अंगीकार कर। इस प्रकार सत्यधर्मकी सूचना करनेवाले उन मुनिके वचनोंको सुनकर संसार, शरीर, स्त्री आदि भोगोंसे वैराग्य होके वह ऐसा विचार करने लगा—देखो पराया हितचांहनेवाले ये मुनिमहाराज मेरे हितका

कारण कह रहे हैं इसलिये मैं भी मोक्षकेलिये शीघ्र श्रेष्ठ तपको ग्रहण करूं। क्योंकि यह नहीं मालूम पड़ती कि मनुष्यकी मौत कब होगी। वह काल गर्भमें तिष्ठे हुए अथवा पैदा हुए बच्चोंको भी मार डालता है तो उसका भरोसा नहीं है। वह यमराज अहमिंद्र देवेंद्र आदि महान पुण्यात्माओंको जब समय आनेपर वहांसे पटक देता है तब हीन पुण्यी हम लोगोंकी जीवन वगैरः की क्या आशा ? न जानें किस समय हमको कालके गालमें जाना पड़े।

वुड्ढे होनेपर भी धर्मको करते ही जाना छोड़ना नहीं, जो मूर्ख धर्म नहीं करते हैं वे पापका भार लेकर यमराजके मुखका ग्रास होकर नरकादि खोटी गतियोंमें चले जाते हैं। इसलिये बुद्धिमान् पुरुषोंको सब अवस्थाओंमें (हालतोंमें) प्रतिदिन धर्मसेवन करना चाहिये। और अपने मरणकी शंका करके कोई भी समय धर्मके सिवाय व्यर्थ न जाने देना चाहिये।

इसप्रकार चित्तमें विचार कर वह बुद्धिमान बाह्य और अंतरंग दोनों तरहके परिग्रह छोड़के तथा अपनी स्त्रीको पिशाचिनीकी तरह छोड़ मुनिके चरणकमलोंको नमस्कार करता हुआ मनवचन कायकी शुद्धि रखकर तीन जगतसे नमस्कार कीगई ऐसी जिनदीक्षाको मुक्तिके लिये धारण करता हुआ। जो जिनदीक्षा स्वर्ग तथा

मोक्षके सुखको देनेवाली है। तदनंतर वह कनकोज्ज्वलकुमार आर्तरौद्ररूप खोटे ध्यान व कृष्णादि खोटी लेश्याओंको छोड़कर बड़े उद्योगसे धर्मध्यान व शुक्लेश्याको धारण करता हुआ। चारों विकथारूप वचनोंको छोड़ धर्मकथामें लीन हुआ सिद्धांत-शास्त्रोंको पढता संता धर्मोपदेश देता हुआ और ध्यानकी सिद्धिके लिये रागको उत्पन्न करनेवाले स्थानोंको छोड़के गुफा वन श्मशान पर्वत तथा निर्जनवनमें वह बुद्धिमान् रहता हुआ।

वन ग्राम देश वगैरःमें ममतारहित विहारकरनेवाला वह मुनि कर्मोंके नाशकेलिये वारह प्रकारका तप अच्छीतरह आचरण करता हुआ। इसप्रकार वह मुनि सब मूल गुणोंको तथा यत्याचारशास्त्रमें कहे हुए संयमको मृत्युतक अच्छी तरह पालन करके मरणसमयमें चारों प्रकारके आहारको त्यागकर और अपने शरीरसे भी ममता छोड़ संन्यास धारता हुआ। वादमें अति धीरजसे भूख प्यासआदि परीषहोंको जीत और अपनी सामर्थ्यको प्रगटकर मोक्षलक्ष्मीके साधनमें उद्यमी होता हुआ प्रयत्नसे चारों आराधनाओंको सेवन करके वह निर्विकल्पचित्तवाला मुनि समाधिसमय धर्मध्यानसे प्राणोंको छोड़ता हुआ। उसके वाद तपस्याके प्रभावसे वह लांतवनामके सातवें स्वर्गमें महानऋद्धियोंवाला देव हुआ और वहां सुख देनेवाली अनेक संपदायें मिलीं।

उस स्वर्गमें अपने अवधिज्ञानसे पूर्व किये हुए तपका फल जानकर धर्ममें दृढ चित्त करके फिर भी धर्मकी सिद्धिके लिये तीन लोकमें स्थित जिनालयोंको तथा अर्हंत गणधर मुनियोंको पूजकर व प्रणामकर हमेशा महान् पुण्यका उपार्जन करता हुआ तेरह सागरकी आयु पांच हाथका ऊंचा शरीर धारण करता हुआ। तेरह हजार वर्ष पीछे हृदयमेंसे झरते हुए अमृतका सेवन करता था। साढे छह महीने बीत जानेपर सुगंधित श्वास लेता था और नरककी तीसरी पृथ्वीतक उसका अवधिज्ञान तथा विक्रिया थी। सात धातु मल पसीना रहित दिव्य शरीरवाला वह देव सम्यग्दृष्टि शुभ ध्यानमें तथा जिनपूजामें लवलीन रहता था। नाचना गाना मधुर बाजे आदि सुखसामग्रियोंसे रात-दिन देवियोंके महान भोग भोगता हुआ। इस प्रकार सम्यक् दर्शनसे शोभायमान चित्तमें शुभभावनाओंका चिंतवन करता हुआ सुखसमुद्रमें मग्न देवोंकर सेवित होता हुआ।

अथानंतर जंबूद्वीपमें कौशलनामके देशमें सज्जनोंकर भरी हुई अयोध्या नामकी रमणीक नगरी है। शुभके उदयसे वहांका राजा वज्रसेन था और शीलसे शोभायमान शीलवती नामकी उसकी प्यारी रानी थी। उन दोनोंके वह देव पुण्यके उदयसे स्वर्गसे चयकर हरिषेण नामका पुत्र हुआ। वह राजा पुत्रजन्मका महान् उत्सव करता हुआ। वह हरिषेण कुमारअवस्थामें राजनीतिकी विद्याके साथ जैनसिद्धांतोंको पढ़कर धर्मादि

पुरुषार्थोंको अच्छी तरह जानता हुआ। रूप लावण्य कांति दीप्ति वगैरः श्रेष्ठ गुणोंसे तथा उत्तम वस्त्राभूषणोंसे वह कुमार देवके समान सुंदर दीखने लगा।

उसके वाद वह यौवन अवस्थाको पाकर वहुत राजकन्याओंको विवाहता हुआ पिताकर दिये राज्यपदको प्राप्त हुआ अत्यंतसुख भोगने लगा। वह सम्यक्त्वकी शुद्धता-पूर्वक गृहस्थधर्मकी सिद्धिके लिये श्रावकोंके व्रत प्रमादरहित पालता हुआ। अष्टमी और चौदसको सव पापकार्योंको छोड वह वुद्धिमान मुनिके समान होके मोक्षके लिये प्रोपध व्रतको आचरता हुआ। सवेरे शय्यासे उठकर धर्मकी वृद्धिके लिये पहले सामायिक (जाप) तथा स्तवनपाठ करता हुआ। पीछे साफ़ कपडे पहनके भक्तिसे अपने घरके जिनालयमें धर्मअर्थकामरूप त्रिवर्गकी सिद्धिको देनेवाली देवपूजा करता हुआ। योग्यकालमें भावोंसे सुपात्रको विधिपूर्वक दान देता था, मानकपाय आदिसे नहीं। जो दान प्राशुक है, स्वादिष्ट है।

संध्याके समय जितेन्द्री वह कल्याण होनेके लिये अपने योग्य सामायिक वगैरः श्रेष्ठ कार्य करता था। वह धर्मतीर्थकी प्रवृत्तिके लिये अर्हंत केवली योगींद्र व मुनीश्वरोंके महानसंघके साथ यात्राको जाता था। वह राजा उनसे रागके नाश होनेके लिये तत्वोंकी चरचासहित श्रेष्ठ धर्म सुनता था। जो कि सुखका समुद्र है। वह धर्मात्मा

साधर्मी भाइयोंसे वात्सल्य (अत्यंत प्रीति) करता था और उनके गुणोंसे रंजायमान होके उन साधर्मियोंके योग्य दान सन्मान करता था । इत्यादि अनेक तरहके आचरणोंसे धर्मको पालता हुआ व अन्य भव्योंको श्रेष्ठ उपदेशद्वारा पलवाता हुआ । धर्मादि तीन पुरुषार्थोंकी वृद्धि करनेवाले राज्यको राजनीतिसे पालन करता हुआ अपने पुण्यसे पायेहुए भोगोंको भोगता हुआ । इसप्रकार पुण्योदयसे श्रेष्ठ राज्यलक्ष्मीको पाकर श्रेष्ठसुखको देनेवाले धर्मका सेवन करता हुआ । इसलिये हे भव्यो यदि तुम भी असली सुखका स्थान चाहते हो तो अति प्रयत्नसे धर्मको धारण करो ॥

इसप्रकार श्रीसकलकीर्ति देव विरचित महावीरपुराणमें सिंहादि सात भव और धर्मकी प्राप्ति कहनेवाला चौथा अधिकार पूर्ण हुआ ॥ ४ ॥

पाचवां अधिकार ॥ ५ ॥

कर्मारातिविजेतारं वीरं वीरगणाग्रिमम् ।
वंदे रुद्रकृतानेकपरीषहभरक्षमम् ॥ १ ॥

भावार्थ—कर्मोंको जीतनेवाले रुद्रकर कियेगये अनेक उपसर्गों (संकटों) को सहनेवाले इसीलिये वीरोंमें मुख्य ऐसे महावीर स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं। अथानंतर एक दिन हरिषेण महाराज विवेकसे निर्मलचित्तमें विचारते हुए कि मैं कौन हूं, शरीर कैसा है और बंधका कारण यह कुटुंब किसतरहका है। किसतरह मुझे अविनाशी सुख होगा? कैसे तृष्णा शांत होगी?। संसारमें हितकारी और करने योग्य क्या है? तथा अहित करनेवाला और नहीं करने योग्य क्या है।' देखो विचारनेसे अचंभा होता है कि मेरा आत्मा सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्रस्वरूप है और ये शरीरादिके पुद्गल दुर्गंधवाले अचेतन हैं। इस लोकमें ऊंचे वृक्षपर रातके समय पक्षियोंका समूह मिलकर रहता है उसीतरह अपने २ कार्यमें लगा हुआ यह स्त्री आदि कुटुंब एक कुलमें इकट्ठा हुआ है।

मोक्षके सिवाय दूसरा कोई भी अविनाशी सुख देखनेमें नहीं आता और वह

विनाशी शरीरकी ममता त्यागनेसे तथा तप करनेसे मिलता है। तप भी सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप रत्नत्रयके सिवाय दूसरा कोई भी नहीं हो सकता और मोह तथा इंद्रियविपयोंसे बढ़कर दूसरा अहित (बुरा) करनेवाला कोई नहीं है। इसलिये हित चाहनेवालोंको शीघ्र ही विषयोंका सुख विपके समान त्यागना चाहिये और साररूप रत्नत्रयतप ग्रहण करना चाहिये।

बुद्धिमानोंको वह कार्य करना योग्य है कि जिससे इसलोक व परलोकमें सुख तथा यश (भलाई) हो और नहीं करने योग्य वह कार्य है कि जिससे निंद. (बुराई) दुःख और अनादर हो। इत्यादि मनमें चिंतवनसे नाश करनेवाले संसार शरीर भोगोमें वैराग्यको प्राप्त होके अपने हितका उद्यम करता हुआ। फिर राज्यका बोझा मट्टीके डलेके समान फेंककर (छोड़कर) वह राजा तपका भार ग्रहण करनेको घरसे निकलता हुआ और वनमें जाकर अंगपूर्व श्रुतके जाननेवाले श्रुतसागर नामा मुनिके पास जाकर उनकी तीन प्रदक्षिणा देकर मस्तकसे प्रणाम करता हुआ।

फिर वह मोक्षका इच्छुक राजा मन, वचन कायकी शुद्धिसे बाह्य और अंतरग परि-ग्रहोंको छोड़कर मुक्तिके लिये खुशीसे जिनदीक्षाको धारण करता हुआ। पुनः कर्म-रूपी पहाड़ोंको नाश करनेके लिये तपरूपी वज्रायुधको धारण कर दुष्ट इंद्रिय मनरूपी

वैरियोंको रोकनेके लिये शुभ प्रशंसनीय धर्म ध्यानका चिंतवन करता हुआ । वह मुनि सिंहके समान अकेला धर्मध्यान शुक्लध्यानकी सिद्धिके लिये पर्वत गुफा वन श्मशान आदिमें निवास करता हुआ । वन ग्राम गामड़ेमें विहार करता हुआ वह दयामयी मुनि जहां सूर्य छिप जावे उसी उसी जगह पर रातभर ध्यानादि करता था। सर्प आदिसे भरी हुई, बड़ी भारी हवासे अति भयंकर ऐसी वर्षाऋतुमें वह योगी वृक्षके नीचे योग लगाकर बैठता था ।

सरदीके समयमें चौरायेपर अथवा बर्फसे घिरे हुए नदीके किनारे ध्यानकी गर्मीसे शीतकी बाधा रोकता हुआ वहां पर रहता था । गर्मीके दिनोंमें सूर्यकी किरणोंसे गर्म ऐसी पहाड़की शिलापर ज्ञानरूपी जलसे गर्मीकी बाधा दूरकरता हुआ आसन लगाता था । इस प्रकार अन्य भी कठिन कायक्लेशरूप बाह्यतप करता हुआ ध्यानकी सिद्धिके लिये अंतरंग तपरूप मूल गुण उत्तर गुणोंको पालन करता हुआ मरणके समय आहार शरीरसे ममता छोड़ अनशन तप ग्रहण करता हुआ । पुनः दर्शन ज्ञान चारित्र तपरूप चारों आराधनाओंको सेवन कर समाधिसे प्राणोंको छोड़ उसके फलसे महाशुक्र नामके दशवें स्वर्गमें महान् ऋद्धिका धारी देव हुआ ।

वहां भी अंतर्मुहूर्तमें (४८ मिनटके अंदर) वस्त्र भूषण सहित धातुमलादि रहित

दिव्य शरीरका धारी यौवन अवस्थाको प्राप्त होगया । वह देव उसी समय अवधिज्ञानसे पहलेधर्म करनेसे प्राप्त हुई अपनी महान विभूतिको जानकर धर्मकी सिद्धिके लिये श्री जिनमंदिरमें जाकर सबको कल्याणकरनेवाली जिनराजकी परम पूजा जलादि अष्ट द्रव्यसे करता हुआ । फिर मध्यलोकके जिनचैत्यालयोंकी पूजा करके और जिनेंद्रकी वाणी सुनकर श्रेष्ठ पुण्यका उपार्जन करता हुआ । इसप्रकार धर्ममें चित्त लगानेवाला वह देव चार हाथ ऊंचा शरीर व सोलह सागरकी आयु पाता हुआ । शुभ परिणामोंवाला वह देव अपने अवधिज्ञानसे चौथी नरककी पृथ्वीतक मूर्तीक वस्तुओंको जानता हुआ और वहींतक विक्रियाशक्तिको प्रगट करता हुआ ।

सोलह हजार वर्षके वीत जानेपर कंठमें झरनेवाले अमृतका आहार करता हुआ सोलह पक्षके वीतनेपर सुगंधमयी श्वास लेता था । इस प्रकार वह देव पूर्व किये तपश्चरणके फलसे उत्पन्न दिव्य भोगोंको अपनी देवियोंके साथ हमेशा भोगता हुआ धर्मध्यानमें लीन सुखसमुद्रमें मग्न होता हुआ ।

अथानंतर धातकी खंड द्वीपके पूर्वविदेहमें पुष्कलावती देश है, वहां पुंडरीकिणी नगरी है, वह हमेशा चक्रवर्तीकर भोगी जाती है । उसका स्वामी सुमित्र नामा राजा था और उसकी शीलव्रतवाली सुव्रता नामकी रानी थी । उन दोनोंके वह देव महाशुक्र-

स्वर्गसे चयकर प्रियमित्र नामका पुत्र हुआ वह सब लोकको प्यारा लगने लगा। उसके पिताने पुत्रजन्मकी खुशीमें सबको कल्याण करनेवाली अर्हंत भगवानकी महानपूजा कराई और चार प्रकारका दान देता हुआ अनेक प्रकारके बाजे बजवाता हुआ। क्रमसे बढता हुआ वह कुमार कीर्ति शोभा और भूषणोंसे देवोंके समान शोभायमान होता हुआ।

उसके बाद वह कुमार धर्मपुरुषार्थकी सिद्धिके लिये जैनगुरुके पास जाकर धर्मको बतलानेवाली श्रेष्ठ विद्याको पढता हुआ और साथमें राजविद्या भी सीखीं। जवान अवस्था होनेपर महामंडलेश्वर लक्ष्मीसहित पिताके पदको (राज्यको) पाकर सुख भोगने लगा। तब उस समय इसके अद्भुत पुण्यके उदयसे स्वयं चक्रादि सब रत्न और उत्तम नौ निधियाँ उत्पन्न हुईं। उसके बाद उत्कृष्ट संपदा होनेसे छह अंगवाली सेनाकर सहित वह चक्री छहों खंडोंमें भ्रमण करता हुआ मनुष्य विद्याधरोंके स्वामियोंको तथा मागधादि व्यन्तर देवोंके स्वामियोंको अपने चक्रसे वशमें करके उनसे कन्या वगैरः सार वस्तुओंको लेता हुआ इंद्रके समान शोभायमान होने लगा।

फिर वहांसे लौटकर वह चक्रवर्ती इंद्रपुरीके समान अपनी नगरीमें मनुष्य विद्याधर व्यंतर देवोंके स्वामियोंके साथ बहुत हर्ष सहित प्रवेश करता हुआ। इस चक्रीके महान पुण्यसे भूमिगोचरी व विद्याधरोंकी छ्यानवै हजार राजकन्या रूपलावण्यवालीं

विवाहित हुईं। बत्तीस हजार मुकुट बन्ध राजा इस चक्रीकी आज्ञाको शिरपर धारते हुए इसके चरणकमलोंको नमस्कार करते हुए।

इसके जल्दी चलनेवाले चौरासी करोड़ पैदल पुरुष थे और सोलह हजार गणवाले देव थे। अठारह हजार म्लेच्छराजा इसके चरणकमलोंको सदा सेवते थे॥ सेनापति १ स्थपित २ स्त्री ३ हर्म्यपति ४ पुरोहित ५ हाथी ६ घोड़ा ७ दंड ८ चक्र ९ चर्म १० काकिणी ११ मणि १२ छत्र १३ असि १४ ये चौदह रत्न देवोंकर रक्षित उस प्रभुके थे। पद्म १ काल २ महाकाल ३ सर्वरत्न ४ पांडुक ५ नैसर्प ६ माणव ७ शंख ८ पिंगल ९—ये नौ निधियां देवोंकर रक्षित पुण्यके उदयसे उस चक्रवर्तीके घरमें भोगउपभोगकी सब सामग्रीको तयार करती हैं।

छ्यानवै करोड़ ग्राम और दूसरी योग्य संपदाएं इस चक्रीके पुण्यके उदयसे सुखदायी होती हुईं। मनुष्यदेवोंसे पूजित वह चक्रवर्ती दशांगभोगकी सामग्री भोगने लगा। आचार्य कहते हैं कि इस जीवको धर्मसे सब मनोरथोंकी सिद्धि होती है, अर्थ पुरुषार्थसे महान् इन्द्रियसुखरूप काम पुरुषार्थकी प्राप्ति होती है और अर्थ काम दोनोंके त्यागसे धर्मद्वारा मोक्षकी प्राप्ति होती है। ऐसा जानकर बुद्धिमान् वह चक्री हमेशा मनवचनकाय कृतकारितअनुमोदनासे उत्तम धर्मको सेवता हुआ। शंकादि दोषरहित

निर्मल सम्यक्तको धारण करनेवाला वह राजा श्रावकोंके बारह व्रत अतीचार (दोष) रहित पालता हुआ। चारों पर्वदिनों (अष्टमी चौदस) में आरंभरहित पापोंको नाश करनेवाले प्रोषधोपवासोंको पालता था।

वहुत ऊँचे जैनमंदिर बनवाके सुवर्ण और रत्नमयी जिनेन्द्र मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा करता हुआ। वह राजा अपने घरके चैत्यालयकी तथा बाहरके जैनमंदिरोंकी पूजा शुद्ध सामग्री लेकर भक्तिपूर्वक प्रतिदिन करता हुआ। वह राजा हितकी प्राप्तिके लिये मुनियोंको प्रासुक आहारादि दान विधिपूर्वक देता था। निर्वाणभूमि व तीर्थंकर गणधर व योगियोंकी वंदना पूजा करनेके लिये यात्राको जाता था। अपने कुटुंबियोंके साथ वह बुद्धिमान् जिनेश आदिकोंसे अंग पूर्वके ग्रन्थोंको सुनता था और वैराग्य होनेके लिये दो प्रकारके धर्मके स्वरूपको विचारता था।

वह विवेकी रात्रिदिनके किये अशुभ कामोंको सामायिकके द्वारा क्षय करता था और अपनी निंदा करता था कि आज मुझसे यह पाप बना। इस प्रकार शुभ क्रियाओंसे सदा धर्मको आप पालता था और दूसरोंको उपदेश देता था। अथानंतर एक दिन वह राजा परिवारके साथ क्षेमंकर जिनेश्वरको वंदनेके लिये गया। वहांपर उस केवली भगवान्‌की तीन प्रदक्षिणा देके मस्तक नवाकर जलादि आठ द्रव्योंसे पूजा करता

हुआ मनुष्योंके कोठे बैठा। उस चक्रीके हितकेलिये वे केवली भगवान् दिव्य ध्वनी द्वारा गणधरके प्रति भावना सहित धर्मका उपदेश करते हुए। इस संसारमें आयु लक्ष्मी भोग राज्य इंद्रियसुख वगैरः बिजलीके समान क्षण विनश्वर हैं ऐसा जानकर बुद्धिमानोंको निश्चल मोक्षका सेवन करना चाहिये। इस जगत्में जीवको मौत रोग क्लेश दुःख वगैरःसे रक्षा करनेको कोई शरण नहीं है। एक धर्म ही शरण है। वही दुःखादिकोंके नाशके लिये पालना चाहिये। यह संसारसमुद्र महान् दुःखोंकी खानि है उसके पार होनेके लिये रत्नत्रयको सेवना चाहिये। जन्म मरण बुढापेमें अपनेको अकेला समझकर अपने कल्याणके लिये एक जिनेन्द्र देवका ही सेवन करना चाहिये। शरीरसे अपनेको जुदा समझ कर मरणके समय शरीरसे ममत छोड अपने आत्माका ध्यान करना चाहिये। इस शरीरको सात धातुमयी निंदनीक दुर्गंधी मलका घर देखकर बुद्धिमान् पुरुष धर्मको क्यों नहीं आचरते ?। बड़े खेदकी बात है। कर्मोंके आस्रवसे (आनेसे) जीवोंका इस संसार समुद्रमें डूबना होता है ऐसा समझकर बुद्धिमानोंको कर्मोंकी हानिकें लिये जिनदीक्षा धारण करनी चाहिये।

सज्जनोंको कर्मोंके संवर (रोकने) से निश्चय कर मोक्षलक्ष्मी मिलती है इसलिये गृहवास छोड़कर मुक्तिके लिये संवरमें प्रयत्न करना चाहिये। इस संसारमें भव्य जी

वोंके सब कर्मोंकी निर्जरा तपसे होती है ऐसा: जानकर निष्पाप तप करना चाहिये।
वास्तवमें इस तीन जगत्को दुःखोंसे भरा हुआ देख अनंतसुख देनेवाली मोक्षकी प्राप्ति-
के लिये संजमको सेवन करो। मनुष्यजन्म उत्तम कुल आरोग्यता पूर्णआयु सुधर्म इत्या-
दिका मिलना कठिन समझकर हे बुद्धिमानो तुम अपने हित करनेमें अच्छीतरह यत्न
करो। तीन लोककी लक्ष्मी और सुखका करनेवाला संसारके पाप और दुःखोंका
नाश करनेवाला ऐसा श्री केवली भगवान्का उपदेशा हुआ धर्म ही सब तरहसे पा-
लन करो। वह धर्म सम्यक्त्व ज्ञान चारित्र तपके योगसे व क्षमा आदि दश लक्षणोंसे होता
है उससे मोहकी संतानका नाश करके मोक्षके अभिलाषी जीवोंको मोक्षप्राप्तिके लिये
विधिपूर्वक आचरण करना चाहिये। सुखी पुरुषको अपने सुखकी वृद्धिके लिये और
दुःखी जीवको दुःख नाश करनेके लिये धर्मका सेवन अवश्य करना चाहिये।

संसारमें वही पंडित है वही बुद्धिमान् है वही सुखी है वही जगत्पूज्य है वही
महान पुरुषोंका गुरु है। जो कि अन्य सब कार्योंको छोड़ पहले अनेक निर्मल आचर-
णोंसे धर्मका सेवन करता है। तीन जगत्को तथा अपनी आयुको विनाशीक जानकर बुद्धि-
मानको चाहिये कि घरको सांपके समान छोड़कर तृष्णारहित धर्म पालन करे। इस प्रकार
भगवान्की दिव्यध्वनिसे वह चक्रवर्ती तीन जगतको अनित्य समझकर अपने शरीर व

राज्यादिसे विरक्त हुआ मनमें ऐसा विचारने लगा । अहो खेदकी बात है कि मुझ अज्ञानी (मूर्ख) ने संसारके अच्छे २ विषयभोग सेवन किये तौ भी इंद्रियसुखोंसे मुझे कुछ भी तृप्ति नहीं हुई । इस लिये जो जीव विषयोंमें लीन होकर भोगोंके सेवनेसे तृष्णाकी शांति चाहते हैं वे मूर्ख तेलसे आगको शांत करना चाहते हैं । यह जीव जैसे २ भोगोंको अत्यंत भोगता है वैसी २ तृष्णा बढ़ती जाती है जिस शरीरसे यह भोगोंको सेवन करता है वह महा दुर्गंधमयी सार रहित मलमूत्रकीड़ाओंका घर है ।

यह राज्य भी सब पापोंका कारण धूलिके समान है, स्त्रियां पापोंकी खानि हैं और बंधु वगैरः कुटुंबी बंधनके समान हैं । लक्ष्मी वेश्याके समान बुद्धिमानोंकर निंदनीक है, विषयोंका सुख हालाहल जहरके समान है और दुनियांमें जितनी चीजें हैं वे सब क्षण भंगुर हैं । बहुत कहनेसे क्या फायदा बस तीन जगतमें रत्नत्रयके सिवाय दूसरा तप नहीं है और न हितकारी है । इसलिये अब मैं ज्ञानरूपी तलवारसे अशुभ मोहका जाल काटकर मोक्षके लिये जगतपूज्य जिनदीक्षाको धारण करूं । अबतक मेरे दिन संयमके विना वृथा गये, विषयोंमें लगा रहा । अब व्यर्थ समय नहीं खोना चाहिये । ऐसा विचार कर अपने सर्वमित्र नामके पुत्रको राज्य देकर रत्न निधि वगैरः संपदाओंको पुराने तृणके समान छोड़ता हुआ ।

वह चक्री मिथ्यात्वादि सब परिग्रहोंको छोड़ मुक्तिके देनेवाली अर्हतकी कही दीक्षाको मुक्तिकेलिये ग्रहण करता हुआ । वह अर्हतकी दीक्षा तीन लोकमें देव तिर्यंच और मिथ्यात्वी मनुष्योंको दुर्लभ है । उस चक्रीके साथ संवेगादि गुणोंवाले हजारों राजा भी दीक्षित होगये । फिर महामुनि महान शक्तिसे प्रमाद रहित हुआ दो प्रकारका कठिन तप करता हुआ । मूलगुण और उत्तर गुणोंको अच्छी तरह पालता हुआ । निर्मल अभिप्रायवाला वह मुनि मनवचन कायकी गुप्तिसे कर्मोंके आस्रवको रोकता हुआ । वह मुनि निर्जनवन पर्वत गुफा आदिमें ध्यान लगाता था और अनेक देश नगर ग्रामादिकोंमें विहार करता था ।

भव्यजीवोंके हित चाहनेवाला वह मुनि मनुष्यदेवोंकर पूजनीक जैनधर्मके तत्वोंका उपदेश करता हुआ जैनमतकी प्रभावनाको फैलाता हुआ । परमार्थको जाननेवाला वह योगी आयुके अंतमें चार प्रकारके आहारोंको छोड़ मनवचनकाय योगोंको रोककर संन्यास धारण करता हुआ । अपनी सामर्थ्यको प्रगट करके क्षुधा प्यास आदि बाईस परिषहोंको प्रसन्नचित्त होके सहता हुआ । अर्हंत भगवानमें ध्यान लगानेवाला वह हरिषेण मुनीश्वर चारों आराधनाओंको अच्छीतरह सेवन करके सावधानतासे प्राणोंको छोड़ता हुआ ।

उसके वाद वह मुनि तपसे उपार्जन किये पुण्यके उदयसे सहस्रार नामके वारवें स्वर्गमें सूर्यप्रभ नामका महान देव हुआ। वहां उपपाद (उत्पत्ति) शय्यामें थोड़ी देरमें सव यौवन अवस्था पाकर उसीसमय उत्पन्न हुए अवधिज्ञानसे पूर्वजन्ममें किये तपका यह सव फल जानता हुआ। वह देव साक्षात् तपका फल देखनेसे धर्ममें लीन हुआ उस धर्मकी प्राप्तिके लिये फिर भी रत्नमयी जिन प्रतिमाओंके दर्शन करनेको गया। वहांपर अपने परिवारके साथ श्रीजिनविंवका पूजन अतिहर्षसे पापके नाश करनेके लिये करता हुआ।

इच्छामात्रसे प्राप्त हुए जलादि अष्टद्रव्यंसे चैत्यवृक्षोंके नीचे विराजमान अर्हतकी प्रतिमाओंकी पूजा करता हुआ वह देव मध्यलोकके अकृत्रिम चैत्यालयोंकी पूजा करनेके लिये नंदीश्वरादि द्वीपोंमें जाकर जिन प्रतिमाओंकी पूजा अतिभक्तिसे करता हुआ। और तीर्थंकर व मुनीश्वरोंकी वंदना करके अपने स्थानको जाता हुआ। वह देव अपने पुण्यसे प्राप्त हुई लक्ष्मी अप्सरा विमानादि विभूतिको ग्रहण करता हुआ इंन्द्रियोंको तृप्त करनेवाले महान भोगोंको भोगता हुआ।

अठारह सागरकी आयु तथा टिमकार रहित सात धातु वर्जित साढे तीन हाथका दिव्य शरीर मिला। वह देव अठारह हजार वर्ष वीत जानेपर कंठसे झड़नेवाले अमृ-

उच्छ्वास लेता था । अपने अवधि
तका आहार करता था और नौ महीनेके वाद थोड़ा
ज्ञानसे चौथे नरकतक मूर्त वस्तुओंको जानता हुआ और वहीं तक उसकी विक्रिया
करनेकी शक्ति थी । वह देव अपनी देवियोंके साथ स्वच्छंद वन पर्वतादिकोंमें भ्रमता
हुआ क्रीडा करता हुआ । कहीं वीणादि वाजोंसे, कहीं मनोहर गीतोंसे, कहीं देवांगना-
ओंके शृंगार दर्शनसे, कभी धर्मचर्चासे, कभी केवलीकी पूजासे, कभी तीर्थकरोंके पंच-
कल्याणादि उत्सवोंसे इत्यादि अन्य कार्योंसे भी वह देव कालको विताता हुआ देवोंकर
सेवित सुखसमुद्रमें मग्न होता हुआ ।

अथानंतर जंबूद्वीपके भरत क्षेत्रमें धर्मसुखकी खानि छत्राकार नामका रमणीक नगर
है । उसका स्वामी नंदिवर्धन राजा था और उसकी पुण्यवती वीरवती नामकी रानी थी ।
उन दोनोंके वह देव स्वर्गसे चयकर नंद नामका पुत्र हुआ । वह अपने रूपादि गुणोंसे
जगत्को आनंद करनेवाला हुआ । उसका जन्म उत्सव वहुत आनंदके साथ हुआ । वह
पुत्र दूध अन्नादिकसे गुणोंके साथ वढ़ता हुआ । क्रमसे अपने गुरुसे शास्त्रविद्या और
शस्त्रविद्या सीखता हुआ कला विवेक रूपादि गुणोंसे देवके समान मालूम होने लगा ।
तदनंतर जवान होनेपर पितासे राज्यपद पाकर उत्तम भोगोंको भोगता हुआ निःशंकादि
गुणोंसहित निर्मलसम्यक्त्वको धारण करता हुआ श्रावकोंके वारहव्रत अच्छी तरह पालने

लगा। सब पर्वदिनोंमें आरंभ रहित उपवास करता हुआ वह नंदराजा मुनियोंको भक्ति पूर्वक प्रतिदिन आहारादि दान देता था। अपने जिनालयमें जिनेन्द्रदेवकी महान पूजा करता था और धर्मकी वढवारीके लिये अर्हंत गणधरादि योगियोंकी यात्रा करनेको जाता था। धर्मसे वांछित अर्थकी प्राप्ति होती है, अर्थ (धनादि) से इच्छित संसारीक सुख मिलता है और संसारिक सुखकी इच्छाके त्यागसे अविनाशी सुखकी प्राप्ति होती है। इस प्रकार समस्त सुखका मूल (मुख्य) कारण धर्मको जानकर इस लोक और परलोक दोनोंमें सुखकी प्राप्तिके लिये श्रेष्ठ धर्मको सदा सेवता हुआ।

आप शुभआचरण पालता था, दूसरोंको प्रेरणा करता था और पालनेवालेकी खुशी मनाता था। धर्मके फलसे प्राप्त हुए महान भोगोंको भोगता हुआ सुखसे काल विताता हुआ। इस प्रकार शुभके परिपाकसे नंद राजा निर्मलचारित्रके संबंधसे अनेक तरहके उत्तम भोगोंको भोगता हुआ। ऐसा समझकर हे भव्यो तुम भी जो सुख चाहते हो तो जिनधर्मको यत्नसे पालो, धर्म ही कल्याण करनेवाला है।

इस प्रकार श्रीसकलकीर्तिदेव विरचित महावीर चरित्रमें देवादि चार शुभभवोंको कहनेवाला पांचवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥

छठा अधिकार ॥ ६ ॥
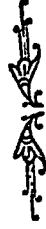
हंता मोहाक्षशत्रूणां त्राता भव्यांगिनां भवात् ।
कर्ता चिद्धर्मतीर्थानां वीरोऽस्तु तद्गुणाय मे ॥ १ ॥

भावार्थ—मोह और इंद्रियरूपी शत्रुओंको जीतनेवाले, भव्यजीवोंकी संसारसे रक्षा करनेवाले और धर्मतीर्थके प्रवर्तक ऐसे श्रीमहावीरस्वामी गुणोंकी प्राप्तिमें मेरी सहायता करो ।

अथानंतर किसीसमय बुद्धिमान् वह नंदराजा भव्यजीवोंसहित धर्म सुननेके लिये प्रोष्ठिल मुनीश्वरकी वंदना करनेको जाता हुआ । वहां भक्ति पूर्वक जलादि अष्ट द्रव्यसे मुनीश्वरकी पूजा कर मस्तक नवाकर धर्म सुननेके लिये उनके चरणोंके पास बैठ गया । पराया हित चाहनेवाला वह मुनि राजाको दश लक्षणवाले धर्मका उपदेश करता हुआ । हे बुद्धिमान् ! तू उत्तमक्षमासे परम धर्मका सेवन कर । उत्तमक्षमा वह है जो दुष्टोंके उपद्रव करने पर कभी धर्मका नाशक क्रोध न उपजे । धर्मके लिये बुद्धिमानोंको मार्दव पालना चाहिये । मार्दव उसे कहते हैं कि मन वचन कायको कोमल करके इन तीनोंकी कठोर-

तारूप मानको त्याग करना। बुद्धिमानोंको आर्जवधर्म पालना चाहिये। वह आर्जवधर्म मन वचन कायकी कुटिलताके त्यागनेसे तथा तीनोंको सरल रखनेसे होता है। वैराग्यके कारण सत्य वचन कहने चाहिये. धर्मात्माओंको धर्मके नाशक असत्य वचन कभी नहीं बोलने चाहिये। इंद्रिय अर्थ आदि वस्तुओंमें लोभी मनको रोककर निर्लोभ शौच धर्मको पालना चाहिये। जलसे किये गये शौचको धर्मका अंग नहीं समझना चाहिये। त्रसस्थावररूप छह कायके जीवोंकी रक्षा करके और इंद्रिय मनको रोककर धर्मकी सिद्धिके लिये संयमको धारण करना चाहिये। धर्मकी प्राप्तिके लिये अपनी शक्तिके अनुसार बारह प्रकारका तप करना चाहिये। धर्मके कारण ही शास्त्र व अभयदानादिरूप त्याग धर्म पालना चाहिये। धर्मके लिये ही सुखका करनेवाला अकिंचन धर्म पालना चाहिये और वह सब परिग्रहके छोड़नेसे होता है। धर्मके चाहनेवालोंको धर्मका मुख्य कारण ब्रह्मचर्यव्रत बहुत खुशीके साथ सेवना चाहिये, वह ब्रह्मचर्य गृहस्थको तो अपनी स्त्रीके सिवाय सबका त्यागरूप कहा है और मुनिको सब स्त्रियोंके त्यागरूप कहा है।

इन सारभूत दशलक्षणों करके जो मोक्षके इच्छुक भव्यजीव मुनिगोचर परमधर्मको धारण करते हैं वे संसारके सब सुखोंको भोग शीघ्र मुक्तिके पति हो जाते हैं। बुद्धिमानोंसे यह धर्म साक्षात् यदि न पल सके तो नाममात्र स्मरण करना चाहिये उसीसे

ही सुख मिलसकता है। इसप्रकार धर्मका माहात्म विचार कर संसार शरीरभोगोंको क्षणभंगुर तथा निःसार जानके विवेकियोंको चाहिये कि इन तीनोंसे विरक्त होके मोह इंद्रियको जीतकर सत्र शक्तिसे मोक्षकी प्राप्तिके लिये धर्म करें। इसप्रकार उन मुनिके वचनोंको सुनकर वैराग्यको प्राप्त हुआ वह राजा निर्मल चित्तमें ऐसा विचारता हुआ–देखो, यह संसार अनंत दुःखोंकी खानि, अंतरहित और आदिरहित है इसमें सज्जनोंको प्रीति कैसे हो सकती है। यदि संसार सब दुःखोंसे भरा हुआ नहीं होता तो सांसारीक सुखोंसे परिपूर्ण तीर्थंकर देव मोक्षके लिये उसे क्यों छोड़ते?। भूख प्यास रोग कामक्रोधादि रूप अग्नि रातदिन शरीररूपी झोंपड़ेमें जला करती हैं वहां धर्मात्माओंको क्या प्रीति करनी चाहिये?।

जिस जगह इंद्रियरूपी चोर धर्मादि धनको चुरानेवाले रहते हैं उस शरीरमें कौन बुद्धिमान् रहना चाहेगा? जिनके होनेके पहले दुःख और चलेजानेके बादमें दुःख ऐसे दुःखकी दाह बढानेवाले पराधीन चंचलभोग हैं उनको कौन बुद्धिमान् सेवन करेगा। जो भोग स्त्रीके और अपने अंगके पीड़न करनेसे उत्पन्न दुःख देनेवाले होते हैं। इसलिये महानपुरुष उनको छोड़ देते हैं तो हीनपुण्यी तुच्छ पुरुषोंको क्या सुख देसकते हैं, कभी नहीं। अगर अच्छीतरह भोगोंकी साधक इंद्रियसुखके देनेवाली वस्तुका विचार

क्रिया जावे तो उस वस्तुसे बहुत ही घृणा उत्पन्न होती है कोई, भोगकी वस्तु शुभ नहीं है।

इत्यादि विचार करनेसे बहुत वैराग्यको प्राप्त हुआ वह राजा उसी योगीको दीक्षागुरु बनाकर दोनों तरहके परिग्रहोंको छोड़ मनवचन कायकी परमशुद्धिसे मोक्षके लिये अनंत जन्मकी संतानका नाश करनेवाले मुनिव्रतको ग्रहण करता हुआ। गुरूपदेशरूपी जिहाज़को पाकर बुद्धिमान् वह राजा शीघ्रही ग्यारह अंगशास्त्ररूपी समुद्रको सावधानतासे पार होता हुआ। अपनी शक्तिको प्रगट करके कर्मोंके नाश करनेवाले बारह प्रकारके तपको आचरता हुआ।

पक्ष महीना आदि छह महीनातक वह मुनि सब इंद्रियोंके सोखनेवाले अनशन तपको करता हुआ, जो कि कर्मरूपी पर्वतको वज्रके समान है। एक ग्रास (गस्से) को आदि लेकर अनेक प्रकारका अवमौदर्य तप नींदके कम होनेके लिये धारण करता हुआ। किसी समय वह जितेन्द्री मुनि तृष्णाके नाश करनेवाले वृत्तिपरिसंख्यान तपको लाभांतराय कर्मके नाशके लिये पालता हुआ। वह जितेंद्री मुनि रसपरित्याग तपको अतींद्रिय सुखके लिये धारण करता हुआ। ध्यानाध्ययन करनेवाला वह मुनि स्त्री आदि रहित पर्वतकी गुफा वनादिकमें विविक्त शय्यासन तप पालता हुआ। वह मुनि वर्षाऋतुमें बड़ी भारी हवा और वर्षासे व्याप्त वृक्षके नीचे धीरजरूपी कंबलको ओढे

हुए स्थितिकरता हुआ। हेमंतऋतुमें अर्थात् सर्दीके दिनोंमें चौरायेपर, नदीके किनारे वर्फसे व्याप्त स्थलमें जलेहुए वृक्षकेसमान वह मुनि कायोत्सर्ग तप करता हुआ। गर्मीके दिनोंमें सूर्यकी किरणोंसे गर्म हुई पहाड़की सिलापर ध्यानामृतका स्वादी वह मुनि सूर्यके सामने तिष्ठता हुआ।

इत्यादि अनेक प्रकारके कारणोंसे कायक्लेशतप वह धीरवीर मुनि शरीर इंद्रियसुखकी हानिके लिये हमेशा करता हुआ। इसप्रकार बाह्य छह तरहका तप अंतरंग तपकी वृद्धिके लिये पालता हुआ। वह मुनि दशप्रकार आलोचना आदिसे प्रमादरहित होके चारित्रको शुद्ध करनेवाले प्रायश्चित्त तपको धारण करता हुआ। मनवचन कायकी शुद्धिसे वह मुनि सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्र और इनके धारण करनेवाले परममुनीश्वरोंकी विनय करता हुआ। आचार्यको आदि मनोज्ञ मुनियोंतककी सेवा आज्ञा आदि दस प्रकारका वैयावृत (टहल) करता हुआ। वह मुनि प्रमादरहित होकर इंद्रियमनको वश करनेके लिये योगोंको वश करनेवाले अंग पूर्व शास्त्रोंका पांच तरह स्वाध्याय करता हुआ।

बुद्धिमान् वह मुनि निर्ममत्वसुखकेलिये शरीरादिसे ममता छोडके कर्मरूपी वनको भस्म करनेकेलिये व्युत्सर्ग तप करता हुआ। वह श्रेष्ठ बुद्धिवाला मुनि धर्मध्यान शुक्लध्यानमें लीन होकर स्वप्नमेंभी आर्तध्यानको नहीं विचारता हुआ, जो आर्तध्यान अनिष्ट-

संयोगसे उत्पन्न, इष्टवियोगसे उत्पन्न, महानरोगसे उत्पन्न और निदानरूप इस तरह चार प्रकारका है। तिर्यंचगतीका कारण है, खोटे अभिप्रायोंको उत्पन्न करनेवाला है ॥ इस मुनीके चित्तमें चार प्रकारका रौद्रध्यानभी जगह नहीं पाता हुआ। जो रौद्रध्यान जीव-हिंसा, झूठ, चोरी, परिग्रह रक्षामें आनंद माननेसे होता है और नरक गतीमें ले जाने-वाला है ॥ शुद्ध चित्तवाला वह मुनि आज्ञा, अपाय, विपाक और संस्थान विचयरूप चार प्रकारके धर्म ध्यान चिंतवन करता हुआ। जो धर्मध्यान स्वर्गादि सुखके देनेवाला है।

वह बुद्धिमान् मुनि वनादिकमें पृथक्त्ववितर्क, एकत्ववितर्क, सूक्ष्याक्रियाप्रातिपत्ति व्युप-रतक्रियानिवृत्ति—इस तरह चारप्रकारके शुक्ल ध्यानका चिंतवन करता हुआ। जो शुक्लध्यान सबसे महान है विकल्परहित है और साक्षात मोक्षका देनेवाला है। इसतरह बारह भेद रूप महान तप सब शक्तीसे वह मुनि आचरता हुआ, जो तप कर्मरूपी शत्रुओंके नाश करनेमें वज्रके समान है, सब सुखोंका मूल कारण है, केवल ज्ञानको उत्पन्न करानेवाला है और वांछित अर्थको सिद्ध करनेवाला है। कठिन तपके प्रभावसे इस मुनिके अनेक दिव्य ज्ञानादि महान ऋद्धियें प्रगट होगईं, जो कि सुखकी खानि हैं।

वह मुनि सब प्राणियोंपर मित्रता रखताथा, और धर्मात्मा गुणी पुरुषोंको देखकर प्रसन्न होता हुआ उनका आदर करताथा, रोगी क्लेश पीडित जीवोंपर वह करुणा (दया)

करताथा। और मिथ्याती दुष्टजीवोंसे मध्यस्थ (उदासीन) भाव रखता था। मैत्री आदिक चारों भावनाओंमें लीन हुए उस मुनिके स्वप्नमें भी राग द्वेष निवास नहीं कर सके। दर्शनविशुद्धि आदि गुणोंमें लीन हुआ वह मुनि मनवचन कायकी शुद्धिसे तीर्थंकरकी संपदाको देनेवालीं इन सोलह भावनाओंको विचारता हुआ, जिनको अब कहते हैं।

उन सोलह भावनाओंमेंसे पहली दर्शनविशुद्धिके लिये शंकादि पचीस दोषोंको त्यागकर निःशंकादि आठ गुणोंको स्वीकार करता हुआ। जिनेन्द्र भगवानकर कहे हुए सूक्ष्म तत्त्वोंके विचारमें प्रमाणीक पुरुषसे शंकाको निवारण करके ' निःशंकित ' अंगका पालन करता हुआ। तपसे इस लोक और परलोकमें लक्ष्मी तथा विषयभोगोंके सुख नहीं चाहे उनको नरकके कारण समझ उनकी इच्छा का त्याग करना ऐसे ' निःकांक्षित ' अंगको वह धारण करता हुआ। रत्नत्रयादि गुणोंवाले योगियोंके शरीरमें मैल व रोग देखकर मनवचन कायसे ग्लानि नहीं करना ऐसे 'निर्विचिकित्सा' अंगको वह पालता हुआ। वह मुनि देव शास्त्र गुरु और धर्मकी ज्ञानरूपी नेत्रसे परीक्षाकर मूढताको छोड़ ' अमूढत्व ' अंगको स्वीकार करता हुआ।

निर्दोष जैनशासनमें अज्ञानी असमर्थ पुरुषोंके संबंधसे प्राप्त हुए दोषोंको छुपाना ऐसे ' उपगूहन ' गुणको पालता हुआ। दर्शन तप चारित्रसे चलायमान हुए जीवोंको उपदे-

शादि द्वारा दर्शनादि गुणोंमें फिर स्थिर करना ऐसे ' स्थितीकरण ' अंगको आचरता हुआ। अपने शरीरादिकमें प्रीतिरहित है तौभी साधर्मीभाइयोंसे गौ वच्छेकीसी अति-प्रीति रखना ऐसे वात्सल्यगुणको वह पालता हुआ। वह मुनि तप और ज्ञानकी किर-णोंसे मिथ्यात्वरूप अंधकारको दूरकरता हुआ जैनधर्मके महात्मको प्रकाशकर 'प्रभावना' गुणको पालता हुआ।

इन आठ गुणोंसे सम्यग्दर्शनको पुष्ट करता हुआ वह संजमी राजाकी तरह कर्मरूपी वैरियोंका नाश करता हुआ। धर्मकी नाशक पापकी खानि ऐसी देवमूढता लोकमूढता गुरुमूढता रूप तीन प्रकारकी मूढता सर्वथा छोड़ता हुआ। जाति कुल ऐश्वर्य (धन) रूप ज्ञान तप वल पूजा ये आठ तरहके मद खोटे मार्गमें लेजानेवाले हैं। यह मुनि जाति आदि श्रेष्ठ गुणोंवाला भी सब जगत्को अनित्य जानता हुआ इन आठोंका मद कभी नहीं करता था। मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान मिथ्याचारित्र और इनके धारक— इसतरह छह प्रकारके अनायतनोंको नरकके देनेवाले समझ मनवचन कायसे छोड़ता हुआ।

वह मुनि निःशंकादि गुणोंके उलटे शंकादि आठ दोषोंको सर्वथा छोड़ता हुआ। इसप्रकार वह मुनि ज्ञानरूपीजलसे सम्यक्त्वके पचीसमलोंको धोकर उसको निर्मल करता हुआ ' दर्शन विशुद्धि ' भावनाका पालन करता हुआ। वह मुनि, संवेग वैराग्य

उपशम भक्ति वात्सल्य अनुकंपा आदि गुणोंकर रहित तीर्थंकर पदवीकी पहली सीढ़ी रूप दर्शनविशुद्धिके ऊपर चढ़ता हुआ।

वह योगी ज्ञान दर्शन चारित्र और व्यवहारविनय तथा ज्ञानादि गुणोंके धारण करनेवालोंकी विनय मनवचन कायकी शुद्धिसे पालता हुआ। अठारह हजार शील और पांच महाव्रतोंको सावधानीसे अतीचार (दोष) रहित पालता हुआ। वह संजमी अज्ञानके नाशक अंगपूर्वादिके ज्ञान करानेवाले शास्त्रोंको निरंतर आप पढ़ता हुआ। पापोंकी शांतिके लिये निरालस्य होकर शिष्योंको पढाता हुआ। वह मुनि सब अनर्थोंके करनेवाले देह भोग संसारसे परमसंवेगको चिंतवन करता हुआ। अर्थात् इन तीनोंसे भयभीत होता हुआ। वह नंदनामा योगी मुनियोंको ज्ञानदान, अन्य जीवोंको अभयदान और सब जीवोंको सुख देनेवाला धर्मोपदेश करता हुआ।

वह रातदिन दुष्टकर्मरूपी वैरियोंको नाश करनेके लिये अपनी शक्तिके अनुकूल बारह प्रकारका पूर्व कहा हुआ तप निर्दोष पालता हुआ। रोगसे पीड़ित इसीलिये समाधि धारण करनेमें असमर्थ ऐसे साधुओंकी सेवा उपदेशादि द्वारा करता हुआ, जिससे कि उनकी समाधि स्थिर होवे। आचार्य उपाध्याय शिष्य तपस्वी ग्लान गणगुरु कुल

संघ साधु मनोज्ञ–इन दस प्रकारके महात्मा मुनियोंकी वैयावृत्य (टहल) मोक्षके लिये करता हुआ, जो कि अपने और परके लाभ पहुंचानेवाला है।

वह मुनि धर्म अर्थ काम और मोक्षके देनेवाली अर्हंत भगवानकी महान भक्ति मनवचनकायसे निरंतर करता हुआ। संघसे पूजित पंच आचारोंमें लीन और छत्तीस गुणोंके धारक ऐसे आचार्यकी रत्नत्रयको प्राप्त करानेवाली भक्ति करता हुआ। संसारको प्रकाश करनेवाले और अज्ञानरूपी अंधकारको नाश करनेवाले ऐसे उपाध्याय मुनीश्वरोंकी ज्ञानकी खानि भक्तिको धारण करता हुआ। वह मुनि एकांतमतरूपी अंधकारको नाश करनेवाली समस्ततत्त्वोंके स्वरूपसे पूर्ण ऐसी जिनवाणी माताकी भक्ति करता हुआ।

वह योगी समता १ स्तुति २ त्रिकालवंदना ३ प्रतिक्रमण ४ प्रत्याख्यान ५ और व्युत्सर्ग ६ ये सिद्धांतमें कहेहुए छह आवश्यक पापोंके नाशार्थ योग्यकालमें नियमसे करता था। भेदविज्ञानसे, तपस्यासे तथा उत्कृष्ट आचरणोंसे हमेशा जीवोंका हित करनेवाली श्रेष्ठ जैनधर्मकी प्रभावना करता हुआ। सम्यग्ज्ञानी पुरुषोंका अच्छीतरह आदर करके वह मुनि धर्मको देनेवाले धर्मात्माओंसे वात्सल्य [प्रीति] रखता हुआ।

इस तरह तीर्थंकरकी विभूति देनेवाली सोलह कारण भावनाओंको शुद्ध मन-

वचन कायसे प्रतिदिन विचारता हुआ। उन भावनाओंके चिंतवनके फलसे शीघ्र ही तीन जगत्को क्षोभ करनेवाले अनंत महिमायुक्त ऐसे तीर्थंकर नाम कर्मको बांधता हुआ। जिस तीर्थंकर नामके प्रभावसे इन्द्रोंके आसन कंपायमान (चलायमान) हो जाते हैं और मोक्षरूपी लक्ष्मी स्वयं आकर आलिंगन देती है अर्थात् मोक्ष उसी भवसे होती है॥ उसके बाद वह मुनि मौतके समय तक निर्दोष चरित्रको पालता हुआ अपनी आयुको थोड़ी जानकर आहार और शरीरकी क्रियाको छोड़ मोक्षके लिये तीनजगतके सुखको करनेवाले और व्रतोंको सफल करनेवाले ऐसे संन्यास मरणको परम शुद्धिसे धारण करता हुआ। फिर सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तपरूपी मोक्षकी कारण चार आराधनाओंको सेवनकर वह बुद्धिमान् मुनि सब जीवोंके रक्षक अपने प्राणोंको छोडता हुआ।

उसके बाद उस समाधिके फलसे वह नंद नामा मुनि सोलवें स्वर्गमें देवोंकर पूज्य अच्युतेन्द्र हुआ। वहां पर वह इंद्र अंतर्मुहूर्तमें उत्तम और रमणीक माला गहने वस्त्र जवानी कर सहित शरीर पाता हुआ। रत्नोंकी उत्पादशिलापर कोमल शय्यासे हर्षके साथ उठकर आश्चर्यकारक और सुंदर सब चीजें देखने लगा। स्वर्गकी विमान आदि संपदाओंको देख चित्तमें अचंभित हुआ धीरे सोतेसे उठे हुएकी तरह वह इंद्र अपने मनमें ऐसा विचारता हुआ कि, मैं पुण्यवान् कौन हूं, सुखोंकी खानि यह कौन

देश है, कौन ये प्रीतिमान् चतुर विनयवाले देव हैं। कौन ये सुंदर देवांगना हैं जो कि दिव्य रूपकी खानि हैं और ये रत्नमयी, आकाशमें अधर रहनेवाले महल किनके हैं।

ये सात तरहकी देवरक्षित मनोज्ञ सेना किसकी है और ये बहुत ऊंचा सभामंडप किसका है। ये दिव्य रत्नमयी ऊंचा सिंहासन किसका है और ये उपमारहित बहुतसी संपदायें किसकी हैं। किसकारणसे अतिसुंदर विनयवान ये सब लोग मुझे देखकर आनंद मानरहे हैं। अथवा सब संपदाओंको ठिकाने इस जगहमें मुझे कौन पूर्वकृत शुभ कर्म ले आया है। इत्यादि चिंता वह देवोंका इन्द्र अपने मनमें कर रहा था और संदेहका नाशक निश्चय भी नहीं हुआ था इतनेमें ही उसके चतुर मंत्री अवधिज्ञानरूपी नेत्रसे उसके अभिप्रायको जानकर उसके समीप आये और उसके चरण कमलोंको नमस्कार कर दोनों हाथ जोड़के उसके संशय दूर करनेके लिये प्रियवचन खुशीके साथ कहते हुए।

हे देव! हे स्वामी नम्रीभूत हम लोगोंपर प्रसन्न दृष्टि करके अपने संदेह निवारणेवाले वचन सुनो। हे नाथ आज हम धन्य हैं हमारा जीवन आज सफल होगया, क्योंकि अब आपने अपने जन्मसे यह स्थान पवित्र किया। सब संपदाओंका समुद्र यह अच्युत नामका स्वर्ग सब स्वर्गोंके ऊपर मस्तकमें चूडामणि रत्नके समान शोभित होरहा है।

यहांपर मनवांछित वस्तुकी प्राप्ति है और जो तीन लोकमें भी दुर्लभ वाणीके अगोचर
ऐसा इंद्रियसुख पुण्यात्माओंको यहां सुलभ है। यहां कामधेनु गाएं, सत्र कल्पवृक्ष और
चिंतामणि रत्न स्वभावसे ही प्राप्त होते हैं। उनके मिलनेमें परिश्रम नहीं करना पड़ता।
यहांपर कोई ऋतु दुःखका कारण नहीं है और काल भी जीवनपर्यंत सुख देता हुआ
शांतभावको प्राप्त है।

यहां कभी दिन रातका भेद नहीं होता, दिनकी शोभाको वढानेवाला केवल
रत्नोंका प्रकाश हमेशा वना रहता है। यहांपर कोई जीव दीन दुःखी रोगी अभागा कांति-
रहित पापी निर्गुणी और मूर्ख स्वप्नमें भी नहीं देखा जाता है। यहांपर हमेशा जिना-
लयोंमें जिनेश्वरकी महापूजा होती रहती है और नाचना गाना आदिसे प्रतिदिन महान्
उत्सव हुआ करते हैं। संख्यातयोजनोंके विस्तारवाले असंख्याते देवविमान यहांपर हैं।
उनमेंसे एकसौ तेवीस प्रकीर्णक व श्रेणीवद्ध और इंद्रक विमान बहुतसे हैं। दे दश
हजार सामानिक देव हैं, जो आपके समान महान ऋद्धिवाले हैं परंतु आज्ञा नहीं चला
सकते। ये तेतीस समूहदेव प्रेमकर भरे हुए तुमारे पुत्रके समान हैं।

ये आत्मरक्षक देव ४००००चालीस हजार हैं वे भी अंग रक्षा करनेवाले सिपाहि-
यांके समान केवल विभूति दिखानेके लिये ही हैं। ये अंदरकी सभाके देव सवासौ हैं और

ढाईसौ मध्यम परिषदके देव हैं और तुमारी आज्ञाके पालनेवाले पांचसौ वाहिरकी सभाके देव हैं। ये चार लोकपालदेव कोतवालकी तरह हैं, इन लोकपालोंकी हरएककी सुंदर बत्तीस २ देवीं हैं वे सुखकी खानि हैं। तुमसे प्रेम करनेवालीं तुमारी आज्ञा पालनेवालीं और रूप सुंदरतासे शोभायमान ये आठ महादेवीं आपके सामने मौजूद हैं।

इन महादेवियोंकी परिवारकी देवीं तीन ज्ञान तथा विक्रियासे पूर्ण ढाईसौ हैं। ये त्रेसठ वल्लभिका देवीं महानरूप संपदासे आपके चित्तको हरनेवाली हैं। ये दोहजार एक हत्तर देवियां सब पंडिता (पढानेवाली) हैं। वे महादेवीं हरएक दसलाख चौवीस हजार दिव्यरूपोंकी विक्रिया कर सकती हैं यानी एक देवी इतनी स्त्रियोंके रूप बना सकती है। हाथी घोडे रथ पयादे बैल गंधर्व नाचनेवालीं ये सात सेनाके देव हैं। इनमेंसे हर एक सेनाकी सात सात पलटनें हैं और प्रत्येक पलटनके सेनापतीदेव हैं। पहली हाथींकी सेनामें वीस हजार हाथी हैं और शेष सेनामें दूने २ हैं। इसीतरह घोडोंकी सेनाको आदि लेकर छह सेनाओंमें दूने २ हैं वे सब तुमारी सेवामें ही चितलगाये हुए हैं।

एक एक देवीकी अप्सराओंकी तीन सभाए हैं वहांपर गीत नृत्य बजानें आदिकी कला दिखाई जाती है। पहली परिषद (सभा)में पचीस अप्सरा हैं। दूसरीमें पचास और तीसरीमें सौ अप्सरायें हैं। हे नाथ तुमारे अद्भुतपुण्यके उदयसे ये दिव्य

संपदायें और दूसरी भी संपदाएं सामने आकर हाजिर हुई हैं। अब तुम सब स्वर्ग-राज्यके स्वामी होवो और अपने पुण्यसे अनुपम सब संपदाओंको ग्रहण करो।

इत्यादि मंत्रीके वचन सुनकर उसी समय अवधि ज्ञानसे पूर्व जन्मका वृत्तांत जानकर वह बुद्धिमान् अच्युतेंद्र धर्मका साक्षात् फल देखकर जिन भगवान् कथित धर्ममें तत्पर हुआ पूर्व भवके सूचक ये वचन कहता हुआ। अहो मैंने पहले जन्ममें निष्पाप घोर तप किया था और दुर्बलोंको भय देनेवाले शुभ ध्यान अध्ययन योग आदि किये थे। जगतकर पूज्य पंचपरमेष्ठीकी सेवा की और रत्नत्रयकी शुद्धिके लिये उत्कृष्ट भावनाओंका चिंतवन किया था।

मैंने विषयरूपी वन जलादिया था, कामदेव आदि वैरियोंको मारा था और कषायरूपी वैरी तथा परीषहोंको जीता था। पहले मैंने सब शक्तिसे उत्तम क्षमा आदि दशलाक्षणिक धर्म पाला था, उसीने अब इस इंद्रपदपर मुझे स्थापित किया है। अथवा ये अनुपम सब स्वर्गका राज्य सब सुखोंको देनेवाले धर्मका ही महान फल है। इसलिये तीन लोकमें धर्मके समान कोई दूसरा बंधु [हितू] नहीं है। ये धर्म ही संसार समुद्रसे रक्षा करनेवाला है और सब वांछित अर्थोंका साधनेवाला है। मनुष्योंको धर्म ही साथ देनेवाला है, धर्मही पापरूपी वैरीका नाश करनेवाला है, धर्म ही स्वर्ग मोक्षको देनेवाला है और धर्म ही सब जीवोंको सुख करनेवाला है। ऐसा समझकर सुख चाहनेवाले बुद्धिमानोंको सब

हालतोंमें निर्मल आचरणोंसे परम धर्म ही सेवन करना चाहिये। देखो जिस व्रतके पालनेसे सर्व जीव ऐसी संपदाको पाते हैं वह चारित्र यहां नहीं पल सकता इसलिये अब मैं क्या करूं ? अथवा एक दर्शनशुद्धि ही मुझे धर्मादिकी सिद्धके लिये ठीक है और श्रीजिननाथकी भक्ति तथा उनकी मूर्तिकी महान पूजा ही करना ठीक है।

ऐसा कहकर स्नानकी बावड़ीमें स्नान करके धर्मके उपार्जन करनेको वह इंद्र देवियों सहित अकृत्रिम जिनचैत्यालयोंमें जाता हुआ। वहां पर अत्यंत भक्तिसे नमस्कार पूर्वक अर्हंत विंबोंकी महान पूजा करता हुआ।

इच्छा मात्रसे प्राप्त हुए दिव्य जलादि आठ द्रव्योंसे और गाना वजाना स्तुति आदिसे चैत्य वृक्षोंके नीचे विराजमान जिन प्रतिमाओंकी पूजा करके वह देवोंका स्वामी भक्तिपूर्वक मनुष्यलोक मध्यलोकवर्ती जिनप्रतिमाओंको पूजकर तीर्थंकर गणधरादि मुनीश्वरोंको नमस्कार कर उनसे तत्वोंका व्याख्यान सुन महान् धर्मका उपार्जन करता हुआ।

वहांसे अपने घर आकर अपने धर्मके फलसे प्राप्त हुई अनेक प्रकारकी संपदाको स्वीकार करता हुआ। तीन हाथ ऊंचा, पसीना धातु मलसे रहित नेत्रोंकी टिमकार रहित ऐसे दिव्य शरीरको वह धारण करता हुआ। नरककी छठी पृथ्वीतकके मूर्तीक पदार्थोंको अपने अवधिज्ञानसे जानता हुआ और वहींतक विक्रिया ऋद्धिका प्रभाव फैलाता हुआ।

अपने ज्ञानके समान ही क्षेत्रमें गमन आगमन करनेमें समर्थ वह इंद्र भूषणोंसे शोभायमान

बावीस सागरकी आयु पाता हुआ।

वाईस हजार वर्ष वीत जानेपर सब अंगोंको तृप्ति देनेवाला मानसीक दिव्य अमृतका आहार करता हुआ। ग्यारह महीने वीत जानेपर दिशाओंको सुगंधित करनेवाली ऐसी सुगंधित श्वास लेता था। भक्तिसे पूर्ण वह सुरेश तीर्थंकरोंके पांचों कल्याणकोंको तथा सामान्य केवलियोंके दो कल्याणक करनेको जाता था। देवोंकर जिसके चरणकमल पूजे गये और धर्मकार्यमें मुखिया ऐसा वह इंद्र महान पूजा आदि महोत्सवोंसे अपने धर्मको बढ़ाता हुआ। वह सुरेश महादेवियोंके साथ अनेक तरहकी क्रीडाएँ करता हुआ मनसे विषयजन्य सुखको भोगता हुआ।

इस प्रकार परम आनंदयुक्त वह अच्युतेन्द्र सब देवोंसे नमस्कार किया गया सुखसागरमें मग्न होता हुआ। इसतरह धर्मके फलसे प्राप्त सकलसंपदाओंसे पूर्ण श्रेष्ठ स्वर्गका राज्य पाकर वह देवोंका स्वामी दिव्य भोगोंका भोगता हुआ। ऐसा जानकर हे बुद्धिमान् भव्यो तुम भी शम दम संयमसे एक धर्मका सेवन करो॥

इस प्रकार श्री सकलकीर्तिदेवविरचित महावीर पुराणमें नंदराजाको तपके फलसे अच्युतेन्द्र होनेको कहनेवाला छठा अधिकार पूर्ण हुआ॥ ६॥

सातवां अधिकार ॥ ७ ॥

कृत्स्नविघ्नौघहंतारं त्रिजगन्नाथसेवितम् ।
वंदे श्रीपार्श्वतीर्थेशं पंचकल्याणनायकम् ॥ १ ॥

भावार्थ—सब विघ्नोंके नाश करनेवाले तीन लोकके स्वामियोंकर सेवा किये गये और पंचकल्याणके स्वामी ऐसे श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकरको मैं नमस्कार करता हूं।

अथानंतर इसी भरतक्षेत्रमें विदेह नामका वड़ा भारी देश है वह श्रेष्ठधर्म और मुनीश्वरोंके संघसे विदेहक्षेत्रके समान शोभायमान मालूम पड़ता है। वहांके कितने ही मुनि शुद्ध चारित्रसे देहरहित मोक्षको प्राप्त होते हैं इसीलिये उसका नाम गुणको लिये हुए सार्थक है। कोई जीव सोलहकारणादि भावनाओंके विचारसे श्रेष्ठ तीर्थंकर नामकर्मका वंध करते हैं, कोई पंचोत्तर नामके अहमिंद्रस्थानमें गमन करते हैं। कोई जीव भक्तिपूर्वक उत्तम पात्रदान करनेके फलसे भोगभूमिमें जन्म लेते हैं और कोई भव्यजीव भगवान्‌की पूजाके फलसे स्वर्गमें इंद्र पदवी पाते हैं।

जिस देशमें अर्हंतकेवली भगवानोंकी मोक्षभूमि जगह जगहपर देखनेमें आती हैं जिनभूमियोंको मनुष्य देव विद्याधर नमस्कार करते हैं। जिस देशके वनपर्वत वगैरः

ध्यानी योगियोंसे अति शोभा देते हैं और ऊंचे २ जैनमंदिरोंसे नगर शोभायमान मालूम पड़ते हैं। जिस देशके ग्राम मौहल्ले वगीचे ऊंचे जिनालयोंसे शोभायमान होते थे। जिस जगह मुनियोंके समूह और चार प्रकारके संघसहित गणधर, केवली भगवान् धर्मकी प्रवृत्तिके लिये विहार करते थे।

इत्यादि वर्णनवाले उस देशमें कुंडलपुर नामका नगर नाभिकी तरह वीचावीचमें धर्मात्माओंके रहनेसे शोभित है। जो नगर ऊंचे परकोटे दरवाजे खाईसे रक्षा किया गया शत्रुओंसे अलंघ्य अयोध्या नगरीके समान है। जिस नगरमें केवली तीर्थंकरोंके कल्याणकोंके लिये आये हुए देवोंकी यात्रासे महान् उच्छव होता था। जहांपर ऊंचे २ जैनमंदिर सोंने व रत्नोंके वने हुए बुद्धिमानोंकर सेवित धर्मके समुद्रकी तरह मालूम होते थे। जय जय शब्द स्तुति वगैरः व गाना वजाना नृत्य करने वगैरःसे और सुंदर सोंनेके उपकरणोंसहित रत्नोंकी प्रतिमाओंसे वे जिनालय अत्यंत शोभायमान होते थे।

उन मंदिरोंमें पूजाके लिये आये हुए मनुष्योंके जोड़े जाना आना प्रति-दिन करते थे इसलिए वे गुणोंसे देवोंके जोड़के समान मालूम होते थे। जिस नगरके दानीपुरुष भक्तिसे भरे हुए प्रतिदिन पात्रदानके लिये अपने घरके दरवाजोंपर वार २ देखते थे कि कव पात्र आवें। जो नगर ऊंचे २ महलोंकी धुजारूपी हाथोंसे

स्वर्गवासी देवोंको बहुत ऊंचापद देनेके लिये मानों बुला रहा है जिस नगरके लोक दाता, धर्मात्मा, शूरवीर, व्रतशीलादि गुणोंवाले जिनदेव निर्ग्रंथगुरुकी भक्ति सेवा पूजामें लीन रहते थे। जिस नगरमें ऊंचे २ महलोंमें सुंदर नर नारी देवोंके समान रहते थे जो कि न्यायमार्गमें लीन चतुर इस लोक परलोकके हित करनेमें उद्यमी धर्मात्मा सदाचारी धनवान सुखी और बुद्धिमान् थे।

ऐसे उस नगरके स्वामी श्रीमान सिद्धार्थ राजा थे। वे हरिवंशरूपी आकाशको शोभायमान करनेके लिये सूर्यके समान व काश्यप गोत्री थे। वे महाराज, मति आदि तीन ज्ञान धारी, बुद्धिमान, नीतिमार्गको चलानेवाले, जिनदेवके भक्त, महादानी, दिव्यलक्षणोंसे युक्त, धर्मकर्ममें आगे होनेवाले, धीर, सम्यग्दृष्टि, सत्पुरुषोंसे अति प्रेमरखनेवाले, कला विज्ञान चतुराई विवेक आदि गुणोंके आधार, व्रतशील शुभध्यान भावना आदिमें तत्पर, विद्याधर भूमि गोचरी और देवोंकर जिनके चरणकमल सेवित हुए, राजाओंमें मुख्य, दीप्ति कांति प्रतापादि युक्त, दिव्य स्वरूप वस्त्र आभूषणोंकर सहित, धर्मके प्रवर्तानेवाले और अत्यंत पुण्यवान् थे। वे राजा देवोंमें इंद्रके समान सब राजाओंके मध्यमें शोभायमान थे।

उनके त्रिसला नामकी प्राणप्यारी महाराणी थीं। वे अनुपम गुणोंसे जगत्का हित

करनेवालीं थीं। जो महारानी अपनी कांतिसे चन्द्रमाकी कलाके समान जगतको आनंद देनेवाली कलाविज्ञान चतुराईसे सरस्वतीके समान जनोंको प्यारीं, अपने चरणोंसे कमलोंको जीतनेवालीं, नखरूपी चंद्राकिरणोंसे शोभायमान मणिमयी पैरके आभूपणोंके शब्दसे सब दिशाओंको शब्दायमान करनेवालीं केलेके समान कोमलजांघवालीं, सुंदर दोनों जानुओंसे रमणीक, कामदेवके रहनेका स्थान ऐसे स्त्रीचिन्हसे शोभायमान, करधनीकर शोभित कमरवालीं, मध्यभागमें कृश (पतलीं) और सब शरीरमें पुष्ट, गहरी नाभिवालीं, मणिके हारसे शोभायमान ऊंचे सुन्दर स्तनोंवालीं, जिन्होंने अशोकके पत्तोंको जीतलिया है ऐसे कोमल हाथोंवालीं, कंठके आभूपणोंसे शोभित, सुंदर कंठवालीं, अतिकोमल शरीरवालीं, महान् कांति कला वचनालाप दीप्तिकर मुखको शोभित करनेवालीं, कानोंके कुंडलोंसे शोभायमान, अष्टमीके चंद्रमाके समान मस्तकवालीं, सुंदर नासिकावालीं, मनोज्ञ व भौंहें नीलकेश (वाल) सहित, मालाको धारण करनेवालीं, अत्यंत रूप सुंदरता लावण्य सहित, और तीनलोकके उत्तम परमाणुओंसे ही मानों बनाई गई हैं ऐसीं थीं।

इत्यादि अन्य भी सब शुभ स्त्रीचिन्होंसे और गुणोंसे वे इंद्राणीके समान शोभायमान होतीं थीं। वे महादेवीं गुणरत्नोंकी खानिके समान, सबसंपदाओंकी खानि अनेक शास्त्र-

रूपी समुद्रके पारको प्राप्त सरस्वती देवीके समान मालूम पड़तींथीं । वे त्रिसला रानी इंद्रको इंद्राणीकी तरह स्वामीको प्राणोंसे भी अधिक प्यारीं अत्यंत स्नेहका स्थान होतीं हुईं । वे दोनों महाराज महाराणी महापुण्यके उदयसे महान् भोगोंको भोगते हुए सुखसे रहते थे ।

अथानंतर सौधर्मस्वर्गका इंद्र अच्युतस्वर्गके इन्द्रकी छह महीनेकी आयु शेष जानकर कुबेरको बोला । हे धनद इस जंबूद्वीपके भरतक्षेत्रमें सिद्धार्थ महाराजके महलमें अंतिम तीर्थंकर श्री वर्द्धमान स्वामी जन्म लेंगे, इसलिये तुम यहांसे जाकर उनके महलमें रत्नोंकी वर्षा करो और शेष आश्चर्य भी स्वपरके हितकरनेवाले करो । ऐसी इंद्रकी आज्ञाको शिरपर रख वह यक्षाधिपति मध्यलोकमें आया । फिर प्रतिदिन वह कुबेरदेव खुशीके साथ महाराज सिद्धार्थके मंदिरमें प्रतिदिन सोनेकी वर्षासहित रत्नोंकी वर्षा करता हुआ ऐरावत हाथीकी सूंडके समान मोटी अनेक रत्नोंकी धारा पुण्यकल्पवृक्षके प्रभावसे पड़ने लगीं । दैदीप्यमान रत्नसुवर्णमयी वर्षा आकाशसे पड़ती हुई ऐसी मालूम पड़ने लगी मानौं प्रकाशमान माला मातापिताकी सेवा करनेको ही आई है ।

गर्भाधानसे पहले छह महीनेतक महाराज सिद्धार्थके मंदिरपर वह कुबेरदेव श्रीजिनेश्वरकी सेवा करनेके लिये प्रतिदिन कल्पवृक्षोंके फूल तथा सुगंधित जलकी वर्षाके

साथ महामूल्य मणि सुवर्णमयी रत्नोंकी वर्षा करता हुआ । उस समय दैदीप्यमान
माणिक्य और सुवर्णकी राशियोंसे पूर्ण वह राजमहल रत्नकिरणोंकी ज्योतिसे सूर्यादि ग्रह-
चक्रके समान प्रकाशमान होता हुआ। कोई बुद्धिमान् राजाके आंगनको मणि सुवर्ण
आदिसे भरा हुआ देख आपसमें ऐसा कहने लगे। अहो देखो यह तीन जगत्के
गुरुकी ही महिमा है जो कि यह यक्षोंका स्वामी इस महाराजका मंदिर रत्नोंसे
पूर्ण कर रहा है ।

यह वात सुनकर दूसरे लोग भी कहने लगे, देखो इसमें कुछ अचंभा नहीं है
लेकिन ये देवेन्द्र भक्तिसे अर्हंत होनेवाले पुत्रकी सेवा कर रहे हैं, । यह वात सुनके
अन्य कोई लोक ऐसा वोले देखो यह सव धर्मका ही उत्तम फल है जो कि होनहार
अर्हंत पुत्रकी खुशीमें यह रत्नोंकी वर्षा हो रही है । क्योंकि धर्मके प्रसादसे ही तीन
लोककर पूज्य तीर्थंकर पदकी संपदाको प्राप्त ऐसे पुत्रका जन्म होता है। इत्यादि दुर्लभ
वस्तुएं भी धर्मसे सुलभ हो जातीं हैं। फिर कोई ऐसा कहने लगे कि यह वात सच
कही है कि धर्मके विना पुत्रादि इष्ट वस्तुकी प्राप्ति नहीं हो सकती ।

इसलिये सुखके चाहनेवालोंको हमेशा प्रयत्नसे अहिंसालक्षण धर्म सेवन करना
चाहिये, जो कि निर्दोष अणुव्रत और महाव्रतोंसे दो प्रकारका है। अथानंतर किसी दिन

महारानी महलके अंदर कोमल सेजपर सुखसे निश्चित: सोई होई शुभ रातके पिछले पहरमें पुण्योदयसे इन कहे जानेवाले सोलह स्वप्नोंको देखती हुई, जो कि जगतके कल्याण करनेवाले व सबके सौभाग्यके सूचक हैं। उन सोलहमेंसे पहले बड़े मदोन्मत्त हाथीको देखा, बाद गंभीर आवाजवाला ऊंचे कंधेवाला चंद्रमासमान सफेद बैल देखा। तीसरा महाकांतिवान् बड़े शरीरवाला तथा लाल कंधेवाला ऐसा सिंह देखा। चौथा कमलमयी सिंहासनके ऊपर बैठी हुई लक्ष्मी देवीको देवहस्तियोंकर पकड़े गये सुवर्णके घटोंसे स्नान करते हुए देखा। पांचवां सुगंधित दो मालायें देखीं और छठा ताराओंकर मंडित संपूर्ण चंद्रमाको देखा जिसने कि अंधकारको हटा दिया है।

सातवां अंधकारको विलकुल नाश करनेवाले प्रकाशमान सूर्यको उदयाचलपर्वतसे निकलता हुआ देखा। आठवां कमलके पत्तोंसे ढके हुए मुंहवाले सोनेके दो घड़े देखे। नवमां स्वप्न कमोदनी और कमलिनी जिसमें खिल रहीं हैं ऐसे तालावमें क्रीडा करती हुई दो मछलियां देखीं। दशवां स्वप्न एक भरा हुआ सरोवर (तालाव) देखा जिसमें कमलोंकी पीली रज तैर रहीं हैं। ग्यारवां स्वप्न गंभीरशब्द करता हुआ चंचल लहरोंवाला समुद्र देखा। बारवां स्वप्न दैदीप्यमान मणिमयी ऊंचा उत्तम सिंहासन देखा। तेरवां स्वप्न बहुमूल्य रत्नोंसे प्रकाशमान स्वर्गका विमान देखा। चौदवां स्वप्न पृथ्वीको फाड़-

कर ऊपर आता हुआ फणींद्रका (भवनवासीदेव) का ऊंचा भवन देखा। पंद्रहवां स्वप्न
रत्नोंकी राशि देखी उसकी किरणोंसे आकाश प्रकाशमान होगया था। सोलवें स्वप्नमें
वह जिनमाता दैदीप्यमान धूआं रहित अग्नि देखती हुई।

उन सोलह स्वप्नोंके देखनेके बाद उस त्रिसला महारानीने पुत्रके आगमनका सूचक
ऊंचे शरीरवाला उत्तम हाथी मुखकमलमें घुसता हुआ देखा। तदनंतर प्रातःकाल
(सवेरा) होते ही तुरई वगैरः बाजे बजने लगे और उसके जगानेके लिये वंदीजन स्तुति-
पाठ करते हुए। कोइलकेसे कंठवाले वे वंदीजन मंगलगीत गाते हुए कहने लगे, हे
देवि जगनेका समय (टाइम) तेरे सामने आकर उपस्थित हुआ है। हे देवी शय्याको
छोड़ और अपने योग्य शुभरूप कार्यकर जिससे तू जगत्में सार सब कल्याणको पावेगी।

प्रातःकालके समय समता सहित चित्तवाले कोई श्रावक तो सामायिक करते हैं, जो
कि कर्मरूपी वनको जलानेके लिये आगके समान है। कोई शय्यासे उठकर सब विघ्नों-
के नाश करनेवाले लक्ष्मीसुखको देनेवाले अर्हंतादि पंच परमेष्ठीके नमस्काररूप मंत्रको
जपते हैं। दूसरे महाबुद्धिमान् तत्त्वोंका स्वरूप जानकर मनको रोकके कर्मोंके नाश करने-
वाले सुखके समुद्र ऐसे धर्मध्यानको सेवन करते हैं। अन्य कोई धीरजधारी मोक्षकी
प्राप्तिके लिये शरीरसे ममता छोड़ व्युत्सर्ग तप धारते हैं, जो तप कर्मोंका नाशक और

स्वर्ग मोक्षका साधक है। इत्यादि शुभभावोंसे अब इस प्रभातकालमें ये सब बुद्धिमान् लोक अपने हितके लिये धर्मध्यानमें प्रवर्त हो रहे हैं।

जिस तरह जिनदेवरूपी सूर्यके उदयसे मिथ्यामत आगिया (रातमें चमकनेवाले कीडे) की तरह कांतिरहित होजाते हैं उसी तरह सूर्यके उदय होनेसे चंद्रमा और तारे प्रभारहित होगये हैं। जैसे अर्हंतरूपी सूर्यके उदयसे कुलिंगी (भेष धारी) रूप चोरें भाग जाते हैं उसी तरह सूर्यके उदय होनेसे भयभीत चोर भाग गये हैं। जैसे जिनरूपी सूर्य दिव्य ध्वनिरूप किरणोंसे अज्ञानरूपी अंधकारको नाश कर देते हैं उसी तरह इस सूर्यने भी अपनी किरणोंसे रातके अंधकारको नाश कर दिया है।

जैसे तीर्थनाथ शुद्धज्ञानरूपी किरणोंसे श्रेष्ठ मार्ग और पदार्थोंका स्वरूप दर्शाते हैं उसीतरह यह सूर्य भी अपनी किरणोंसे सब पदार्थोंको प्रकाश कर रहा है। जैसे अर्हंतके वचनरूपी किरणोंसे भव्यजीवोंके मनरूपी कमल निश्चयकर प्रसन्न होजाते हैं उसीतरह सूर्यकी किरणोंसे कमल खिल रहे हैं। जैसे अर्हंतके दिव्यवचनरूपी किरणोंसे मिथ्यातियोंके हृदयरूपी कुमुद (चंद्रमासे खिलनेवाले) शीघ्र ही मलिन हो जाते हैं उसीतरह सूर्यकी किरणोंसे ये कुमुद मलिन होरहे हैं। हे देवी अब प्रातःकाल (तड़का) होगया जो कि सबको सुख देनेवाला है, सब संपदाओंका साधनेवाला है

और धर्मध्यानके योग्य है। इसलिये हे पुण्यशालिनी तुम जल्दी शय्यासे उठकर पुण्य-
कार्य करो और सामायिक (जाप) स्तवन आदिसे सैकड़ों कल्याणोंकी भोगनेवाली होवो।

इसप्रकार कानोंको अच्छे लगनेवाले मंगलगानसे और तुरई आदि बाजोंके बजनेसे
वह महारानी एकदम जाग उठी। फिर स्वप्नोंको देखनेसे उत्पन्न हुए आनंदसे प्रसन्न-
चित्त होकर वह महारानी शय्यासे उठकर एकाग्रचित्तसे मोक्ष होनेके लिए स्तवन सामायिक
आदि उत्तम नित्यकर्म करती हुई। जो नित्यक्रिया कल्याणके करनेवाली है व सबको
सुख देनेवाली है।

उसके बाद वह रानी स्नान शृंगार गहने आदिसे सजकर कुछ अपने नोकरोंको
साथ ले राजाकी सभामें जाती हुई। वे महाराज आई हुई अपनी प्राणप्यारीको देख प्रेमसे
मीठे वचन कहकर उसे अपना आधा आसन देते हुए। उसके बाद वह रानी भी सुखसे
बैठी हुई प्रसन्नमुख होके सुंदर वाणीसे अपने पतिको ऐसा निवेदन (अर्ज) करती
हुई। हे देव ! आज रातके पिछले पहर सुखसे सोई हुई मैंने अचंभा करनेवाले सोलह
स्वप्न देखे हैं। अब हे नाथ ! हाथी आदि अग्निपर्यंत महान आश्चर्य करनेवाले इन सोलह
स्वप्नोंका फल मुझे जुदा २ कहो।

ऐसे उस रानीके वचन सुनकर मति आदि तीन ज्ञानके धारी वे सिद्धार्थ महाराज

बोले, हे सुंदरि ! इन स्वप्नोंका उत्तम फल मैं कहता हूं सो तू सावधान होकर चित्त लगाके सुन। हे कांते हाथीके देखनेसे तेरा पुत्र तीर्थंकर होगा और बैल देखनेसे जगत्से पूज्य महान धर्मरूपी रथका चलानेवाला होगा। सिंहके दर्शनसे वह पुत्र कर्मरूपी हाथियोंको नाश करनेवाला अनंत बलसहित होगा और लक्ष्मीका अभिषेक देखनेसे सुमेरु पर्वतकी चोटी पर इन्द्रादिकोंसे उसको स्नान कराया जाइगा।

मालाओंके देखनेसे सुगंधी देहवाला और श्रेष्ठ धर्मज्ञानी होगा तथा पूर्ण चंद्रमाके दर्शनसे श्रेष्ठधर्मरूपी अमृतका वर्षानेवाला व बुद्धिमानोंको आनंद करनेवाला होगा। सूर्य देखनेसे अज्ञानरूपी अंधकारको नाश करनेवाला सूर्यके समान कांतिवाला होगा और दो भरे हुए घड़ोंके देखनेसे अनेक निधियोंका स्वामी ज्ञान ध्यानरूपी अमृतका घट होगा। मछलीके जोड़ेके देखनेसे सबको कल्याणकारी महान् सुखी होगा और सरोवर (तालाव) के देखनेसे शुभलक्षण तथा व्यंजनोंसे शोभित शरीरवाला होगा। समुद्रके देखनेसे नौ केवल लब्धियोंवाला केवल ज्ञानी होगा तथा सिंहासनके देखनेसे महाराजपदके योग्य जगत्का गुरु होगा। स्वर्गविमानके देखनेसे वह पुत्र स्वर्गसे आकर अवतार (जन्म) लेगा और नागेन्द्रके भवनके अवलोकनसे वह अवधिज्ञानरूपी नेत्रका धारी होगा। रत्नोंकी राशिके दर्शनसे सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रादि रत्नोंकी खानि होगा और निर्धूम अग्निके दर्शनसे

कर्मरूपी काठको भस्म करनेवाला होगा। पीछेसे गजेन्द्र (हाथी) के मुखमें प्रवेश होनेसे निर्मलगर्भमें अंतिम तीर्थंकर स्वर्गसे आकर प्रवेश करेगा।

इसप्रकार उन सोलह स्वप्नोंका श्रेष्ठ फल सुननेसे वह पतिव्रता रोमांचित होकर मानों पुत्रको पा लिया है ऐसा समझ बहुत संतुष्ट होती हुई। उसीसमय पहले स्वर्गके सौधर्म इन्द्रकी आज्ञासे पद्म आदि सरोवरोंमें रहनेवालीं श्रीआदि छह देवीं महलमें आईं। आकर तीर्थंकरकी उत्पत्तिके लिये स्वर्गसे लाई हुईं पवित्र वस्तुओंसे गर्भको सोधतीं हुईं, जिससे कि पुण्यकी प्राप्ति हो। फिर वे देवियें अपने २ गुणोंको जिनमातामें स्थापित करतीं हुईं सेवा करने लगीं। वे गुण इसतरह हैं–

श्रीदेवी शोभाको, ह्री देवी लज्जा (शरम) को, धृतिदेवी धीरजको, कीर्तिदेवी स्तुतिको, बुद्धिदेवी श्रेष्ठ बुद्धिको और लक्ष्मीदेवी भाग्यशालीपनेको—इसतरह मातामें ये गुण होते हुए। वह महारानी पहले तो स्वभावसे ही निर्मल थी फिर देवियोंने वस्तुओंसे शुद्ध की तब तो मानों स्फटिकमणिसे ही बनाई गई हो ऐसी शोभने लगी। तदनंतर आषाढ महीनेके शुक्लपक्षकी शुद्धतिथी छठिको आषाढा नक्षत्रमें शुभ लग्नमें वह अच्युतेंद्र स्वर्गसे चयकर शुद्धगर्भमें आता हुआ। उस महावीर प्रभुके गर्भमें आनेके

प्रभावसे स्वर्गलोकमें तो कल्पवासी देवोंके विमानोंमें घंटा वजने लगा और इंद्रोंके आसन कंपायमान हुए।

ज्योतिषीदेवोंके यहां सिंहनाद अपने आप होने लगा। भवनवासी देवोंके महान् शंखकी ध्वनि हुई और व्यंतरदेवों के महलोंमें भेरीकी आवाज़ हुई तथा अन्य वहुतसे अचंभेके कार्य सव जगह हुए। इत्यादि अनेक तरहके आश्चर्योंको देख चारों जातिके देव श्रीमहावीर प्रभुका गर्भावतरण जानते हुए। उसके वाद वे स्वर्गपति जिनेंद्रदेवके गर्भकल्याणकका उच्छव करनेके लिये उस श्रेष्ठ नगरमें आते हुए। कैसे हैं वे स्वर्गके स्वामी। जो अपनी २ संपदासे शोभित हैं, अपनी २ सवारियोंपर चढे हुए हैं, उत्तमधर्म पालनेको उद्यमी हैं, अपने अंगके आभूषण और तेजसे दसों दिशाओंको प्रकाशित करनेवाले हैं, ध्वजा छत्र विमानादिकोंसे आकाशको ढक दिया है, देव और अपनी देवियोंसहित हैं और जयजयशब्द कर रहे हैं।

उस समय वह नगर अनेक विमानोंसे, अप्सराओंसे और देवोंकी सेनासे चारों तरफ घिरा हुआ स्वर्ग सरीखा उत्तम मालूम होने लगा। देवोंकर सहित वे इंद्र जिन भगवान्के मातापिताओंको सिंहासनपर वैठाके परम उच्छवके साथ प्रकाशमान सोनेके घड़ोंसे भक्तिपूर्वक अभिषेक (स्नान) कराके और दिव्य आभूषण माला तथा वस्त्रोंसे

पूज गर्भके अंदर मौजूद जिनदेवको यादकर तीन प्रदक्षिणा देकर मस्तक नवाते हुए अर्थात् नमस्कार करते हुए ।

इसप्रकार वह सौधर्म इंद्र गर्भकल्याण कर और जिन माताकी सेवामें दिक्कुमारी देवियोंको रखकर दूसरे इंद्र और देवोंकर सहित परमपुण्यको उपार्जन करता हुआ खुशीके साथ अपने स्थान (स्वर्ग) को गया ।

इसतरह श्रेष्ठ धर्मके पालनेसे वह अच्युतेंद्र स्वर्गमें अत्यंत सुख भोगकर मोक्ष-सुखकी सिद्धिके लिये तीर्थंकर पदका अवतार लेता हुआ । ऐसा समझकर हे भव्य-जीवो ! यदि तुम भी सुख चाहते हो तो वीतराग भगवान्के उपदेशे हुए श्रेष्ठ धर्मका पालन करो ।

इसप्रकार श्रीसकलकीर्ति देवविरचित महावीरपुराणमें भगवान्के गर्भावतारको कहनेवाला सातवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ ७ ॥

आठवां अधिकार ॥ ८ ॥

पचकल्याणभोक्तारं दातारं त्रिजगच्छ्रियम् ।
त्रातारं संसृतेः पुंसां वीरं तच्छक्तये स्तुवे ॥ १ ॥

भावार्थ—गर्भादि पांचों कल्याणोंके भोगनेवाले, तीन जगतकी लक्ष्मीको देनेवाले और चार गतिरूप संसारसे रक्षा करनेवाले ऐसे श्रीमहावीर स्वामीको उनके गुणोंकी प्राप्तिके लिये नमस्कार करता हूं।

अथानंतर कोई देवीं माताके आगे मंगलद्रव्य रखती थीं कोई माताको स्नान कराती हुई। कितनी ही पान बनाके देती हुई। कोई रसोई करती हुई, कितनी ही देवियाँ सेज बिछाती हुई कोई पैर धोतीं हुई दिव्य आभूषण पहनाती हुई कोई दिव्य पुष्पोंकी माला बनाके देतीं हुई कोई रेशमी कपड़े कोई रत्नोंके गहने देतीं हुई। कितनी ही देवियां माताकी अंग रक्षाके लिए नंगी तलवारोंसे पहरा देतीं हुई और कितनी ही माताकी इच्छानुसार भोगादिकी सामग्री देतीं हुई कोई फूलोंकी धूलिसे भरेहुए राजमहलके आंगनमें बुहारी लगातीं हुई और कोई चंदनके जलसे छिड़काव करती हुई।

कितनी ही देवियां रत्नोंके चूर्णसे विचित्र सातिया वगैरःकी रचना करती हुईं और कोई कल्पवृक्षके पुष्पोंसे घर सजातीं हुईं। कोई आकाशमें ऊंचे महलोंकी चोटियों-पर रत्नोंके दीपक रातको जलातीं हुईं जो कि अंधकारको नाश करनेवाले हैं। जानेके समय कपड़े पहराना बैठनेके समय आसन बिछाना इसतरह वे देवियां माताकी सेवा करतीं हुईं। किसी समय जलक्रीडा किसी वक्त वनक्रीडा कोई समय पुत्रके गुणोंको कहनेवाले मिष्ठ गीत गाना किसीसमय नेत्रोंको प्रिय नाचना, वाजा बजाना, कथाकी गोष्ठी—इत्यादि विक्रिया ऋद्धिके प्रभावसे उत्पन्न विनोद क्रीड़ाओंसे जिन माताको सुख पहुँचाती हुईं। इसप्रकार वह जिन माता पतिव्रता दिक्कुमारी देवियोंसे सेवित हुई अनुपम शोभाको धारती हुई।

अथानंतर नौवें महीनेके निकट होनेपर गर्भवती महान् गुणोंवाली बुद्धिके आति-शयको प्राप्त हुई उस सती महारानीको वे देवियें गूढ अर्थ क्रियापदोंसे अनेक प्रश्नोंसे प्रहेलिका निरोष्ठ्य आदि विचित्र धार्मिक काव्य व श्लोकोंसे रंजायमान करतीं हुईं। वे इस तरह हैं—

विरक्तो नित्यकामिन्यां कामुकोऽकामुको महान्।
सस्पृहो निःस्पृहो लोके परात्मान्यश्च यः स कः॥ १॥

भावार्थ—जो वैरागी होनेपर भी हमेशा कामिनीको चांहता है और निस्पृही होनेपर भी इच्छावाला है ऐसा दुनियांमें विलक्षण पुरुष कौन है। यह पहेली हुई। उसका उत्तर इसी श्लोकमें परात्मा शब्दसे माताने दिया। क्योंकि परात्माका अर्थ एक तो विलक्षण पुरुष है दूसरा परमात्मा भी है। परमात्मा, नित्यकामिनी अर्थात् अविनाशी मोक्षरूपी स्त्रीमें अनुरागी है उसीको चांहनेवाला है ॥ १ ॥

दृश्यो दृश्यस्त्रिचिद्रूपः प्रकृत्या निर्मलोऽव्ययः ।
हंता देहविधेर्देवो नायं क्व वर्ततेऽद्य सः ॥ २ ॥

भावार्थ—जो अदृश्य (नहीं दीखता) है तौ भी देखने योग्य है स्वभावसे निर्मल होनेपर भी देहकी रचनाका नाशक है परंतु महादेव नहीं है। इस श्लोकमें देवोना शब्दसे उत्तर है कि देवरूपी मनुष्य श्रीअर्हंतदेव हैं। यह भी पहेली है।

हे सुंदरी असंख्याते मनुष्य देवोंकर सेवा किया गया तीन जगतका गुरु तेरा पुत्र उत्तम अनेक गुणोंसे जयवंत होवे। (इसके श्लोकमें ओठसे बोलनेमें आनेवाला कोई अक्षर नहीं है इसलिये यह निरोष्ठ्य है) ॥ जिसने दूसरी स्त्रियोंसे प्रेमका सुख छोड़ दिया है तौ भी अविनाशी मोक्षरूपी स्त्रीमें रागी है ऐसा गुणोंका समुद्र तीन जगतका स्वामी तेरा पुत्र हमारी रक्षा करो। (इसके श्लोकमें भी निरोष्ठ्य अक्षर हैं)।

हे जगतको कल्याण करनेवाली तीन लोकके स्वामीको दिव्य गर्भमें धारण करनेसे हरि
हरादिके मनकी रक्षा कर। (इसके श्लोकमें 'अव' क्रिया छिपी हुई होनेसे क्रिया गुप्त है)॥

जगतको कल्याण करनेके लिये अपने गर्भमें तीर्थंकरको धारण करनेवाली हे
माता धर्मतीर्थको करनेवालेकी उत्पत्तिमें देव विद्याधर भूमिगोचरी जीवोंका तीर्थस्थान
वन।) इसमें अट क्रिया गुप्त है)॥ हे देवी महारानी इस लोक और परलोकमें कल्याण
करनेवाला कौन है। (माताका उत्तर) जो धर्मतीर्थका प्रवर्तानेवाला है वही श्री अर्हंत-
देव तीन जगतको कल्याण करनेवाला है॥ (प्रश्न देवियोंका) गुरुओंमें सबसे महान्
गुरु कौन है? (उत्तर) जो तीन जगतका गुरु और सब अतिशयोंकर तथा दिव्य
अनंत गुणोंकर विराजमान ऐसा श्री जिनेंद्रदेव ही महान् गुरु है।

(प्रश्न) इस जगतमें किसके वचन श्रेष्ठ और प्रमाणीक हैं। (उत्तर) जो सबका
जाननेवाला, दुनियांका हित करनेवाला, अठारह दोष रहित और वीतरागी है ऐसे अ-
र्हंत भगवानके वचन ही श्रेष्ठ और मानने योग्य हैं इसके सिवाय दूसरे मिथ्यातियोंके
नहीं। (प्रश्न) जन्म मरणरूपी विषको दूरकरनेवाला अमृतके समान क्या पीना चाहिये
(उत्तर) जिनेंद्रके मुखकमलसे निकला हुआ ज्ञानामृत पीना चाहिये दूसरे मिथ्याज्ञानि-
योंके विषरूप वचन नहीं पीने। (प्रश्न) इस लोकमें बुद्धिमानोंको किसका ध्यान

करना चाहिये (उत्तर) पंचपरमेष्ठीका, जैनशास्त्रका, आत्मतत्वका धर्मशुक्लरूप ध्यान करना चाहिये दूसरा आर्त रौद्र रूप खोटा ध्यान कभी नहीं करना ।

(प्रश्न) शीघ्र (जल्दी) क्या काम करना चाहिये (उत्तर) जिससे: संसारका नाश हो ऐसे अनंत ज्ञान चारित्रको पालना चाहिये दूसरे मिथ्यात्वादिको नहीं ॥ (प्रश्न) इस संसारमें सज्जनोंके साथमें जानेवाला (सहाई) कौन है । (उत्तम) दयामयी धर्म ही सहायता करनेवाला बंधु है, जोकि सब दुःखोंसे रक्षा करनेवाला है, इसके सिवाय कोई सहगामी नहीं है । (प्रश्न) धर्मके कौन २ लक्षण व कार्य हैं । (उत्तर) बारह तप, रत्नत्रय, महाव्रत अणुव्रत, शील और उत्तम क्षमा आदि दश लक्षण—ये सब धर्मके कार्य व चिन्ह हैं ।

(प्रश्न) धर्मका इस लोकमें फल क्या है (उत्तर) जो तीनलोकके स्वामियोंकी इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्ती पदरूप संपदायें श्रीजिनेंद्रका अनंत सुख—ये सब धर्मके ही उत्तम फल हैं (प्रश्न) धर्मात्माओंके चिन्ह (पहिचान) क्या हैं (उत्तर) उत्तम शांतस्वभाव, अभिमानका न होना और रातादिन शुद्ध आचरणोंका पालन ये ही धर्मात्माओंकी पहचान है । (प्रश्न) पापके क्या २ चिन्ह हैं (उत्तर) मिथ्यात्वादि, क्रोधादि कषाय खोटी संगित और छह तरहके अनायतन—ये पापके चिन्ह हैं ।

(प्रश्न) पापका फल क्या है (उत्तर) जो अपनेको अप्रिय, दुःखका कारण है दुर्गतिको करनेवाला तथा रोग क्लेशादिको देनेवाला है—ये सर्वनिंदनीक कार्य पापके फल हैं। (प्रश्न) पापी जीवोंकी क्या पहिचान है। (उत्तर) बहुत क्रोध वगैरह कषायोंका होना, दूसरोंकी निंदा, अपनी प्रशंसा और रौद्रादिखोटे ध्यानका होना—ये पापियोंके चिन्ह हैं। (प्रश्न) असली लोभी कौन है (उत्तर) बुद्धिमान मोक्षका चांहनेवाला भव्य जीव निर्मलआचरणोंसे तथा कठिन तपोंसे एक धर्मका सेवन करनेवाला ही लोभी है।

(प्रश्न) इस लोकमें विचारवान कौन है। (उत्तर) जो मनमें निर्दोष देव शास्त्र गुरूका और उत्तम धर्मका विचार करता है, दूसरेका नहीं । (प्रश्न) धर्मात्मा कौन है (उत्तर) जो श्रेष्ठ उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्मको पालनेवाला है, जिनेन्द्र देवकी आज्ञाका पालनेवाला बुद्धिमान् ज्ञानी और व्रती है—वही धर्मात्मा है दूसरा कोई नहीं। (प्रश्न) परलोकके जाते समय रस्तेका भोजन (टोसा) क्या है। (उत्तर) जो दान पूजा उपवास व्रतशील संयमादिकसे उपार्जन कियागया निर्मल पुण्य है—वही परलोकके रस्तेका उत्तम भोजन है। (प्रश्न) इसलोकमें किसका जन्म सफल है (उत्तर) जिसने मोक्षलक्ष्मीके सुखको देनेवाला उत्तम भेदविज्ञान पा लिया—उसीका जन्म सफल है दूसरेका नहीं।

(प्रश्न) दुनियांके अंदर सुखी कौंन है (उत्तर) जो सब परिग्रहकी उपाधियोंसे रहित व ध्यानरूपी अमृतका चखनेवाला वन (जंगल) में रहता है—वह योगी ही सुखी है, अन्य कोई भी नहीं। (प्रश्न) इस संसारमें चिंता किस वस्तुकी करनी चाहिये (उत्तर) कर्मरूपी शत्रुओंके नाश करनेकी और मोक्षलक्ष्मीके पानेकी चिंता करनी चाहिये, दूसरी इन्द्रियादिके विषयसुखोंकी नहीं। (प्रश्न) महान उद्योग किस कार्यमें करना चाहिये। (उत्तर) मोक्षके देनेवाले जो रत्नत्रय तप शुभयोग सुज्ञानादिकोंके पालनेमें महान यत्न करना चाहिये। धनको इकट्ठे करनेका नहीं क्योंकि धन तो धर्मसे मिलैगा ही।

(प्रश्न) मनुष्योंका परम मित्र कौंन है। (उत्तर) जो तप दान व्रतादिरूप धर्मको जबरदस्ती समझाकर पालन करावे और पापकार्योंको छुड़ावे। (प्रश्न) इस संसारमें जीवोंका वैरी कौंन है। (उत्तर) जो हित करनेवाले तप दीक्षा व्रतादिकोंको नहीं पालने दे वह दुर्बुद्धि अपना परका दोनोंका शत्रु है। (प्रश्न) प्रशंसा करने योग्य क्या है। (उत्तर) जो थोडा धन होनेपर भी सुपात्रको दान देना और निर्बल शरीर होनेपर भी निष्पाप तपको करना—यही प्रशंसनीय है। (प्रश्न) हे माता तुमारे समान महाराणी कौंन है। (उत्तर) जो धर्मके प्रवर्तानेवाले जगतके गुरु ऐसे श्री तीर्थंकर देवाधिदेवको पैदा करे—वही मेरे समान है, दूसरी कोई नहीं। (प्रश्न) पंडिताई क्या है।

(उत्तर) जो शास्त्रोंको जानकर खोटे आचरण खोटा अभिमान थोड़ासा भी नहीं करना और दूसरीं भी पापको करनेवालीं क्रियायें नहीं करना—यही पंडिताई है। (प्रश्न) मूर्खता किसे कहते हैं। (उत्तर) जो ज्ञानसे हितका कारण निर्दोष तप धर्म क्रियाको जानकर आचरण नहीं करना। (प्रश्न) वड़े भारी चोर कौंन हैं। (उत्तर) जो मनुष्योंके धर्म रत्नको चुरानेवाले पापके कर्ता और अनर्थोंके करनेवाले ऐसे पांच इंद्रिय रूप चोर हैं।

(प्रश्न) इस संसारमें शूरवीर कौंन हैं (उत्तर) जो धैर्यरूपी तलवारसे परीषहरूपी महायोधाओंको, कषायरूपी वैरिओंको तथा काम मोह वगैरह शत्रुओंको जीतनेवाले हों। (प्रश्न) देव कौंन है (उत्तर) जो सबका जाननेवाला, क्षुधादि अठारह दोषोंसे रहित, अनंतगुणोंका समुद्र और धर्मका प्रवर्तानेवाला हो ऐसा अर्हंत प्रभु ही देव है। (प्रश्न) महान् गुरु कौंन है (उत्तर) जो इस संसारमें बाह्य अभ्यंतर दोनों तरहके परिग्रहोंसे रहित हो, जगतके भव्यजीवोंके हित करनेमें उद्योगी हो और आप भी मोक्षका चांहनेवाला हो वही महान् गुरु है। दूसरा मिथ्यामती धर्मगुरु नहीं हो सकता।

इस प्रकार उन देवियोंकर किये गये शुभके करनेवाले प्रश्नोंका उत्तर वह जिन-माता गर्भके प्रभावसे सबकी जानकार होकर साफ देती हुई। एक तो उस महारानीकी बुद्धि स्वभावसे ही निर्मल थी फिर अपने उदरमें तीन ज्ञानके धारी प्रकाशमान तीर्थं-

कर देवको धारण करनेसे तो और भी अधिक स्वच्छ होती हुई। इस रानीके उदरमें भी विराजमान पुत्र बिलकुल दुःख नहीं पाता हुआ, क्या सीपमें रहनेवाली जलकी बूंद विकारवाली हो सकती है कभी नहीं! उस देवीके त्रिवलीका भंग नहीं हुआ उदर वैसा ही पूर्ववत् रहा तौ भी गर्भ बढता हुआ। यह उस प्रभुका ही प्रभाव है।

वह महारानी गर्भमें स्थित उस पुरुषरत्न प्रभुसे ऐसी शोभायमान होने लगी मानों महान कांतिवाली रत्नोंको अंदर धारण करनेवाली दूसरी पृथ्वी ही हो। अप्सराओंके साथ इंद्रकी भेजी हुई इंद्राणी हर्षित होके यदि उस माताकी सेवा करे तो इससे अधिक दूसरी बातका क्या वर्णन करना। इत्यादि सैकड़ों महान् उत्सवोंसे नौमां महीना पूर्ण होनेपर शुभचैतके महीनेकी सुदि तेरसिके दिन यमाणि नाम योगमें शुभलग्नमें वह त्रिसला महादेवी सुखसे पुत्रको जनती हुई। वह पुत्र प्रकाशमान शरीरकी कांतिसे अंधकारको नाश करनेवाला, जगत्को हितकारी मति आदि तीन सुज्ञानका धारी देदीप्यमान और धर्मतीर्थका प्रवर्तानेवाला तीर्थंकर होता हुआ।

तब इसके जन्म होनेके प्रभावसे सब दिशायें निर्मल होगईं और आकाशमें सुगंधित ठंडी पवन चलनेलगी। स्वर्गसे कल्पवृक्षोंके खिले हुए फूलोंकी वर्षा होती हुई और चारों जातिके देवोंके आसन कांपने लगे। स्वर्गलोकमें विना बजाए हुए गंभीर

शब्दवाले घंटा वगैरह बाजे वजनेलगे मानों प्रभुके जन्म उत्सवको ही कह रहे हैं। और तीन जातिके देवोंके महलोंमें सिंह शंख महान भेरी आदिके शब्द अन्य सब आश्चर्योंके साथ अपने आप होने लगे।

इन कहे गये चिन्होंसे वे सौधर्म आदि सब इन्द्र जिनभगवानका जन्म जानकर देवों-सहित उस प्रभुके जन्मकल्याणक करनेका विचार करते हुए। उसी समय इन्द्रकी आ-ज्ञासे देवोंकी सेना स्वर्गसे चलनेके लिये महान शब्द (जय जय) करती समुद्रसे उठी हुई लहरोंकी तरह क्रमसे निकलती हुई। हाथी घोडे रथ गंधर्व नृत्यकरनेवालीं पैदल वैल—इसतरह सात प्रकारकी देवोंकी सेना निकली। उसके वाद सौधर्म स्वर्गका स्वामी ऐरावत हाथीपर इंद्राणी सहित चढके देवोंकर घिरा हुआ चलता हुआ।

उसके पीछे अपनी २ विभूतिसहित धर्ममें उद्यमी सव सामानिक आदि देव उस इंद्रके साथ चलते हुए। उससमय दुंदुभि वाजोंकी महान आवाजसे तथा देवोंके जयजय शब्दसे सातोंसेनाओंमें बडा भारी शब्द होता हुआ। रास्तेमें कितेन ही देव गाते हुए। कोई नाचते हुए, कोई देव खुशीके मारे आगे २ दौड़ते थे। फिर अपने २ छत्र ध्वजा सवारी विमानोंसे आकाश मार्गको रोककर वे चारनिकायके देव पृथ्वीपर परम विभूतके साथ देवियोंकर सहित क्रमसे कुंडलपुरमें पहुंचते हुए। उस समय ऊपर और वीचका

भाग चारों तरफसे देव देवियोंकर घिरगया तथा राजमहलका आंगन इंद्रादिकोंसे भरगया।

उसीसमय इंद्राणी शीघ्र हीं उत्तम प्रसूतिगृहमें घुसके दिव्य शरीरवाले कुमारको लिये जिनमाताको देखती हुई। फिर वार २ प्रदक्षिणा कर जगतके गुरुको मस्तक नवाकर जिनमाताके आगे खड़ी हो उसके गुणोंकी प्रशंसा करती हुई। हे देवी तीन जगतके स्वामीको पैदा करनेसे तुम सव जगतकी माता हौ और महान् देवरूप पुत्रके करनेसे महादेवी भी तुम ही हौ। और महान्देवरूप पुत्रके उत्पन्न करनेसे तुमने अपना नाम सार्थक करलिया। दूसरी स्त्रियां कोई भी तुमारे समान नहीं हैं।

इसप्रकार इंद्राणी माताकी स्तुति कर और उसको माया निद्रा सहित करके मायामयी वालक उसके आगे रख अपने हाथोंसे जिन भगवान्को उठाकर दीप्तिसे दिशाओंको प्रकाशित करनेवाले उनके शरीरका स्पर्श करती हुई और प्रभुका मुंह वार २ चूंवती हुई। ऐसी इंद्राणी उस प्रभूके दिव्यरूपसे उठी महान रूपसंपदाको उन्मेषरहित देखती संती वहुत प्रसन्न हुई। उसके वाद वह इंद्राणी आकाशमें उस वालक सूर्यको लेकर जाती हुई ऐसी शोभायमान होनेलगी मानों सूर्यसे पूर्व दिशा ही

शोभ रही हो । उस समय दिक्कुमारी देवियां छत्र धुजा शृंगार कलसा सातिया चमर दर्पण ठौंना इन आठ मंगलीक द्रव्योंको अपने हाथमें लेकर उस इंद्राणीके आगे चलती हुई।

उसके वाद वह इंद्राणी जगतको आनंद करनेवाले जिन देवको लाकर खुशीसे इंद्रके हाथमें सोंप देती हुई। उस जिनदेवके महान रूप सुंदरताको व कांति आदि लक्षणोंको देखकर वह देवोंका स्वामी उस जिनदेवकी स्तुति प्रारंभ करता हुआ। हे देव तुम हमको परम आनंद करनेके लिये वालचंद्रमाकी तरह लोकमें सब पदार्थोंके दिखानेको उदयरूप हुए हो ॥ हे ज्ञानी तुम जगतके स्वामी इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्तीके भी आप स्वामी हो। और धर्मतीर्थके प्रवर्तक होनेसे ब्रह्मा भी तुम ही हो ॥

हे देव ! मुनीश्वर तुमको केवल ज्ञानरूपी सूर्यके उदयाचल मानते हैं, भव्यजीवोंके रक्षक हो और मोक्षरूपी श्रेष्ठस्त्रीके पति हो ॥ हे स्वामिन् मिथ्याज्ञानरूपी अंधेकुएमें पड़े हुए वहुत भव्यजीवोंको धर्मरूपी हाथका सहारा देनेसे आप उद्धार करेंगे अर्थात् उन्हें दुःखोंसे छुड़ाएंगे। इस संसारमें विचारवान पुरुष आपकी दिव्यवाणी सुनकर मोह आदि दुष्ट कर्मोंका नाशकर परम पवित्रस्थान मोक्षको पाते हैं और कोई जीव स्वर्गको जाते हैं। हे देव आज तीन लोकमें आप तीर्थंकरके उदय होनेसे संत पुरुषोंको वहुत आनंद हुआ है क्योंकि आप ही धर्मप्रवृत्तिके कारण हैं।

इसलिये हे देव हम भी आपको मस्तक नवाते हैं सेवा करते हैं भक्ति करते हैं और खुशीसे आपकी आज्ञा पालते हैं अन्य मिथ्याती देवकी कभी नहीं। इस तरह वह देवोंका स्वामी सौधर्म इंद्र हाथीपर चढके जगतके स्वामी उन प्रभुकी स्तुतिकर गोदमें विठाके सुमेरुपर्वतको जानेके लिये हाथको उठाता हुआ कि सव चलो। उस समय सव देव 'हे प्रभो जय हो आनंद हो वृद्धिको पाओ' इस प्रकार ऊंची आवाजसे कहते हुए। इसलिये वह ध्वनि सवदिशाओंमें फैलती हुई।

अथानंतर इंद्रके साथ २ सव देवता जय जय शब्द करते आकाशमें उछलते हुए। जो देवता खुशीके मारे रोमांचित शरीर वाले होगये हैं। उससमय आकाशमें प्रभुके आगे लीला करतीं हुईं अप्सराएं वाजे वजनेके साथ अत्यंत खुशीसे नाचती हुईं। गंधर्वदेव भी दिव्य कंठसे वीणावाजेके साथ जन्माभिषेक संवंधी सुंदर अनेक गाने गानेलगे देवोंके दुंदुभी वाजे अनेक प्रकारके अद्भुत मधुर शब्द करते हुए, जिससे कि दिशाएं वधिर (वहरी) होगईं, कुछ दूसरा सुनाई नहीं पड़ता था। किन्नरीं हर्षित हो अपने किंनरोंके साथ जिनदेवके गुणोंके कहनेवाले मधुर गीत गातीं हुईं। उससमय सव देव असुर अपनी देवियोंके साथ भगवानका दिव्य शरीर देखते हुए निमेष रहित नेत्रोंको सफल समझते हुए। सौधर्म इन्द्रकी गोदमें विराजमान भगवानके माथे ऊपर ऐशान इंद्र चंद्रमाके समान स-

फेद छत्रको अपने हाथसे लगाता हुआ। सानत कुमार और माहेंद्र ये इंद्र भगवानके ऊपर क्षीरसमुद्रकी तरंगके समान चमर ढोरते हुए धर्मके नायककी सेवा करने लगे। उस समय जिनेंद्रकी उत्कृष्ट सम्पदाको देख कितने ही देव इंद्रके वचन प्रमाण (सच्चे) मानकर अपने मनमें सम्यग्दर्शनको धारण करते हुए। वे इंद्र वगैरः ज्योतिश्चक्रको लांघकर अपने शरीरके आभूषणोंकी किरणोंसे आकाशमें इंद्रधनुषको मानों फैलाते जाते हुए।

वे देवोंके पति उत्तम सैकड़ों महोत्सवोंके साथ तथा महान् विभूतिके साथ बहुत ऊंचे सुमेरु पर्वतपर पहुंचते हुए। उस मेरु पर्वतकी ऊंचाई पृथ्वीसे एक हजार कम लाख योजनकी है। उसकी पहली कटनीपर भद्रशाल वन है वह तीन परकोटे ध्वजाओंसे और चार महान् जैनमंदिरोंसे शोभायमान कल्याण करनेवाला है। उस भद्रशालवनकी जमीनसे दो हजार कोस ऊंचाईपर नंदनवन है उसमें भी सुवर्ण रत्नमयी चार जिनचैत्यालय हैं। उस नंदनवनसे साढे बासठ हजार योजनकी उंचाईपर महारमणीक सौमनसवन है उसमें सब ऋतुओंके फल देनेवाले एकसौ आठ वृक्ष तथा चार जिनचैत्यालय हैं।

फिर सौमनस वनसे छत्तीस हजार योजनकी उंचाईपर अंतका चौथा पांडुकवन है। वह वृक्षोंको समूहसे, ऊंचे चार जिनचैत्यालयोंसे तथा शिला सिंहासन वगैरहसे बहुत

शोभायमान मालूम होता है। उस पांडुकवनके बीचमें एक चूलिका है वह चालीस योजन ऊंची है उसके ऊपर स्वर्ग हैं। मेरुकी ईशान दिशामें सौ योजन लंबी पचास योजन चौड़ी आठ योजन ऊंची एक पांडुक नामकी महान् शिला है। वह शिला आधे चंद्रमाके समान आकारवाली क्षीर समुद्रके जलसे धोई गई है इसलिये अतिपवित्र आठवीं धराकी सिद्धशिलाकी तरह शोभायमान है। छत्र चामर भृंगार सांतिया दर्पण कलश ध्वजा ठोंना ये आठ मंगलद्रव्य उस पर रक्खे हुए हैं।

उस शिलाके बीचमें वैडूर्यमणिके समान रंगवाला एक सिंहासन है वह चौथाई कोस ऊंचा चौथाई कोस लंबा और उसका आधाप्रमाण चौड़ा है। वह जिन भगवानके स्नानसे पवित्र रत्नोंके तेजसे ऐसा मालूम होता है मानों सुमेरुपर्वतकी दूसरी चोटी हो। उसकी दक्षिण दिशाकी तरफ सौधर्म इंद्रका दूसरा सिंहासन है और उत्तरादिशाकी तरफ ऐशान इंद्रके बैठनेका सिंहासन है। वह सौधर्म इंद्र परमविभूति महोत्सव करते हुए देवोंके साथ तीर्थंकर देवको लाकर स्नान करानेके लिये पूर्वदिशाकी तरफ मुख करके उस प्रभुको बीचके सिंहासनपर विराजमान करता हुआ और देव व चारणमुनियोंसे सेवित ऐसे उस पर्वतराजकी परिक्रमा देता हुआ॥

इसप्रकार तीर्थंकरके पुण्योदयसे परमाविभूतिके साथ समस्त देवेन्द्र अंतिम

जिनेश्वर भगवानको शिलापर बैठाते हुए। ऐसा जानकर हे भव्यो यदि तुम भी ऐसी संपदा व सुख चाहते हो तो सोलहकारण भावनाओंसे निर्मल पुण्यको उपार्जन करो। क्योंकि पुण्य ही तीर्थंकरादि संपदाका कारण है, पुण्यसे ही यह जगत पवित्र होजाता है पुण्यके सिवाय दूसरा कोई सुखका देनेवाला नहीं है, पुण्यका मूल कारण व्रत हैं और प्राणियोंको पुण्यसे ही अनेक गुणोंकी प्राप्ति होती है।

इसप्रकार श्रीसकलकीर्ति देव विरचित महापुराणमें अंतिमतीर्थंकरका जन्म और सुमेरुपर्वतपर लाने आदिको कहनेवाला आठवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ ८ ॥

नवमां अधिकार ॥ ९ ॥
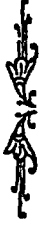
तमथावेष्ट्य सर्वत्र द्रष्टुकामा महोत्सवम् ।
जिनेन्द्रस्य यथायोग्यं तस्थुर्धर्मोद्यताः सुराः ॥ १ ॥

अथानंतर जिनेश्वरके महान् उत्सवको देखनेकी इच्छावाले और धर्ममें उद्यमी ऐसे देव उस पर्वतराजको सब तरफसे घेरकर अपने २ योग्य स्थानपर बैठते हुए। अपनी २ जातिवालोंके साथ दिक्पालदेव प्रभुकी जन्मकल्याण संपदाको देखनेकी इच्छासे अपनी २ दिशाओंकी तरफ हर्षित हुए बैठे। वहांपर देवोंने वड़ाभारी मंडप ऐसा बनाया कि जिसमें सब देव सुखसे बैठसकें। उस मंडपमें कल्पवृक्षके फूलोंकी मालायें लटकाईं गईं थीं उनपर भौंरे गूंजते हुए ऐसे मालूम पड़ने लगे मानों प्रभुके गुण गा रहे हैं।

वहांपर गंधर्व देव और किन्नरी देवियें जिनदेवके कल्याणके गुणोंको मधुर आवाजसे गाने लगीं। और दूसरी देवियाँ बहुत हावभाव तथा शृंगारादि रससे भरा हुआ नृत्य करने लगीं। देवोंके अनेक तरहके बाजे बजने लगे। शांतिपुष्ट्यादिकी इच्छा

वाले देव फूल वगैरःकी वर्षा करने लगे और बहुतसे देव 'जय हो आनंद हो' ऐसे शब्द जोरसे बोलने लगे इससे बहुत कोलाहल हुआ। उसके बाद सौधर्म इंद्र प्रभुके स्नान करानेके लिए प्रस्ताव करके कलशोंकी रचना करता हुआ। कलशोंके बनानेके मंत्रको जाननेवाला ऐशान इंद्र भी आनंदके साथ मोतियोंकी माला व चंदनसे पूजित पूर्ण कलशको हाथमें लेता हुआ। बाकीके सब कल्पवासी देव हर्षके साथ जय २ शब्द करते हुए यथायोग्य सेवा चाकरी करने लगे। मंगलद्रव्य लिये हुए इंद्राणी आदि देवियां भी उससमय धर्म करनेमें उत्कंठित हुई टहल करने लगीं। स्वयंभू भगवान्का शरीर स्वभावसे ही पवित्र है और उनकी देहका लोही दूधके समान है इसलिये क्षीरसमुद्रके जलके सिवाय दूसरा जल स्पर्श करानेके योग्य नहीं है। ऐसा समझकर वे देव निश्चयसे क्षीरसमुद्रका जल लानेके लिये पर्वतेंद्रसे लेकर क्षीरसमुद्रतक हर्षके साथ लेंन बांधके खड़े होगये। उससमय वह इंद्र जिनेंद्रके स्नानके लिये आठ योजन गहरे और एक योजन मुखवाले मोतियोंके हारसे शोभायमान ऐसे प्रकाशमान सुवर्णमयी कलशोंको पकडनेके लिये दिव्य आभूषणोंसे मंडित ऐसी हजार भुजायें बनाता हुआ। वह इंद्र आभूषणोंसे मंडित और एक हजार कलशोंसहित एक हजार हाथोंसे ऐसा शोभायमान होने लगा मानों भाजनांग जातिका कल्पवृक्ष ही है। उससमय सौधर्म इंद्र 'जय' ऐसा शब्द तीन वार कहके जिन भगवानके मस्तकपर बहुत मोटी पहली

जलधारा डालता हुआ। उससमय बहुतसे देव 'जय हो चिरकाल जीवौ हमारी रक्षा करो' ऐसा मधुर शब्दोंसे बडाभारी कोलाहल मचाते हुए। इसीतरह दूसरे देवेन्द्र भी उन महान् कलशोंसे सौधर्मेन्द्रके साथ साथ गंगाके प्रवाहके समान मौटी धारा प्रभुके ऊपर डालते हुए।

उससमय प्रभुके ऊपर धारा ऐसी पड़ने लगी कि यदि दूसरे पहाड़ोंपर पड़े तो उनके सैकड़ों टुकड़े हो जावें परंतु अपरिमित (अतुल) बलके कारण उन प्रभुको फूलोंके समान मालूम होने लगी। जलके छींटे आकाशमें बहुत ऊंचे उछलते हुए ऐसे मालूम होने लगे मानों जिनेंद्रके शरीरके स्पर्श होनेसे ही पापोंसे छूटकर ऊर्ध्वगतिको जा रहे हैं। कितनेही स्नानजलके कण तिरछे फैलते हुए ऐसे मालूम होने लगे मानों दिशारूपी स्त्रियोंके मुखके सजानेके लिये मोती ही हों। स्नानके जलका ऊंचा प्रवाह उस पर्वतके वनमें ऐसा बढ़ता हुआ मानों पर्वतराजको ऊपर तैरा रहा है।

उन भगवान्के स्नान किये जलसे डूबे हुए वृक्षोंवाला वह वन ऐसा दीखने लगा मानों दूसरा क्षीर समुद्र ही हो। इत्यादि अनेक प्रकारके दिव्य महान उत्सवोंसे, दीप धूपादि पूजासे गाना नाचना बाजे आदिसे तथा अन्य भी उत्कृष्ट सामग्रीके साथ अपनी आत्मशुद्धिके लिये वे इंद्र प्रभुको शुद्धस्नान कराते हुए।

इस प्रकार श्रीतीर्थंकर भगवानको महान् उत्सवके साथ सुगंधी जलसे भरे हुए महान् कलशोंसे स्नान कराते हुए। प्रभुके अंगके ऊपर पड़ती हुई सुगंधवाली जलधारा प्रभुके शरीरके स्पर्शमात्रसे अत्यंत पवित्र होती हुई। सव पुण्योंको करनेवाली जगतकी इच्छाको पूर्ण करती पुण्यधाराके समान वह जलधारा हम भव्यजीवोंको मोक्षलक्ष्मी दो, जो जलधारा पुण्यास्रवधाराके समान सब मनवांछित कार्योंको सिद्ध करनेवाली है वह धारा हम भव्यजीव्योंको भी सब इच्छित संपदाओंको विस्तारो।

जो पैनी तलवारकी धाराके समान सत्पुरुषोंके विघ्नोंको नाशकर देती है ऐसी वह जलधारा हम भव्योंके मोक्षसाधनमें विघ्नोंको नाश करो। जो अमृतकी धाराके समान पुरुषोंके सव दुखोंको नाश कर देती है वह हम भव्योंके मोक्षमार्गमें मैल करनेवाली वेद-नाको नाश करो, जो धारा श्रीमान् वीर प्रभुके दिव्य शरीरको पाकर अति पवित्र होगई ऐसी वह जलधारा हमारे मनको दुष्टकर्मरूपी मैल हटाकर पवित्र करै। इस तरह वे देवोंके स्वामी शांतिके लिये गंधजलसे प्रभुका अभिषेक करके 'भव्योंको शांति होवे' ऐसा वहुत जोरसे बोलते हुए। उस सुगंधितजल (गंधोदक) को वे देव मस्तकमें तथा सब अंगमें अपनी शुद्धिके लिये हर्षित होकर लगाते हुए।

अभिषेकके हो जानेके वाद वे इंद्र मनुष्यदेवोंकर पूजित ऐसे उस महावीर प्रभुको

दिव्य गंध, मोतियोंके अक्षत, कल्पवृक्षोंके फूल, अमृतके पिंडरूप नैवेद्य, रत्नोंके दीप, अष्टांगधूप, कल्पवृक्षके फल, मंत्रसे पवित्र महान अर्घ और पुष्पांजलिकी वर्षासे महान भक्तिके साथ पूजते हुए। अनिष्टोंके नाश करनेवाली इष्टप्रार्थना करते हुए वे इंद्र प्रभुका जन्माभिषेक समाप्त करते हुए। फिर हर्षित हुए वे इंद्र अपनी इंद्राणी और देवोंके साथ तीन प्रदक्षिणा देकर उन जिनेंद्रको मस्तकसे प्रणाम करते हुए।

उस समय आकाशसे सुगंधित जलके साथ फूलोंकी वर्षा होती हुई और मंद सुगंध ठंडी पवन देवोंने चलाई। जिस प्रभुके जन्माभिषेकका सिंहासन सुमेरु पर्वत है और स्नान करानेवाला इंद्र है, मेघके समान दूधके भरे हुए कलश हैं, सब देवियां नाच-नेवाली हैं, स्नानके लिये क्षीरसमुद्र है और जिस जगह देव नौकर हैं ऐसे जन्माभिषेक-की महिमा कौन बुद्धिमान् वर्णन करसकता है अर्थात कोई नहीं।

जलसे स्नान किये गये उस प्रभुके शिर नेत्र मुखादि अंगोंमें लगे हुए जलकणोंको इन्द्राणी अति उज्वल कपडेसे पोंछती हुई। फिर वह इन्द्राणी स्वभावसे सुगंधी प्रभुका शरीर होनेपर भी भक्तिसे सुगंधी द्रव्योंका लेपन करती हुई। तीन जगत्के तिलक वे प्रभु थे तौभी केवल भक्तिके प्रेमसे उन प्रभुके मस्तकपर तिलक लगाती हुई। जगत्का चूडामणी उस प्रभुके मस्तकमें चूडामणी रत्न केवल भक्तिसे बांधती हुई। सब संसा-

रका नेत्ररूप उस प्रभुके स्वभावसे ही काले नेत्र थे तौभी व्यवहार दिखलानेके लिये नेत्रोंमें अंजन लगाती हुई।

तीन जगत्के पतीके छिद्र रहित सुंदर कानोंमें वह इंद्राणी रत्नोंके कुंडल पहनीता हुई। उस प्रभुके कंठमें रत्नोंका हार, वाहोंमें वाजूबंद, हाथोंके पहुंचोंमें कड़े और उंगलियोंमें अंगूठी पहनाती हुई। कमरमें छोटी घंटियोंवाली मणियोंकी करधनी पहनाई, जिसके तेजसे सब दिशायें प्रकाशमान होगई। उस प्रभूके पैरोंमें मणिमयी गोमुखी कड़े पहनाये। इसप्रकार असाधारण दिव्य मंडनोंसे (गहनोंसे), स्वभावसे हुई कांतिसे और स्वाभाविक उत्तमगुणोंसे वे प्रभु ऐसे मालूम होने लगे मानों लक्ष्मीके पुंज ही हों, अथवा तेजके खजाने हों, सुंदरताके समूह ही हों और श्रेष्ठगुणोंके समुद्र ही हों।

भाग्योंके स्थान ही हों अथवा यशोंकी राशि ही हों इस प्रकार उन प्रभूका स्वभावसे सुंदर निर्मल शरीर आभूषणोंसे अत्यंत शोभायमान हो गया। इसतरह आभूषणोंसे सजे हुए तथा इंद्रकी गोदमें विराजमान महावीर प्रभुको देखकर इंद्राणी प्रभुकी रूपसंपदाको देखती हुई आप आश्चर्यवाली होगई। इंद्र भी उस समयकी प्रभुके सब अंगकी शोभाको देख दो नेत्रोंसे तृप्त न होकर आश्चर्यसहित हुआ निमेष रहित हजार नेत्र करता हुआ। सब देव और देवियां भी प्रभुकी रूपसंपदाको दिव्य लोचनोंसे हर्षित होके देखतीं हुई।

उसके वाद वुद्धिवान् वह इंद्र हर्षित हुआ प्रभुकी स्तुति करनेको उद्यमी होता हुआ और तीर्थंकरपुण्यके उदयसे उत्पन्न गुणोंकी प्रशंसा करने लगा । हे देव ! स्नानके विना ही पवित्र अंगवाले आपको केवल अपने पापोंकी शांतिके लिये हमने आज भक्तिसे स्नान कराया है । हे तीन जगतके आभूषण ! तुम आभूषणोंके विना ही अतिसुंदर हौ तौ भी हमने अपने सुखहोनेके लिये प्रीतिसे आपको आभूषणोंसे सजाया है । हे प्रभो तुमारी महान गुणोंकी राशि आज सव विश्वको पूरके इंद्रोंके हृदयमें विचर रही है ।

हे देव कल्याणकी इच्छावाले तुमसे ही कल्याण पावेंगे और मोहमें फंसे हुए आपकी वाणीसे ही मोहरूपी शत्रुका नाश करेंगे । तुमसे प्रवर्तित धर्मतीर्थरूपी जिहाजसे रत्नत्रय धनवाले भव्यात्मा अपार संसारसमुद्रको पार करेंगे । हे नाथ आपके वचनरूपी किरणोंसे भव्यजीवोंका मिथ्याज्ञानरूप अंधकार शीघ्र ही नाश हो जाइगा इसमें संदेह नहीं है । हे ईश मोक्षका कारण ऐसे सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रयकी वर्षा आप करेंगे इस कारण आप सत्पुरुषोंके लिये महान दाता हैं । हे स्वामिन् आप केवल अपनी मोक्ष-प्राप्तिके लिये नहीं उत्पन्न हुए हैं किंतु वुद्धिमान भव्यजीवोंको मोक्षमार्ग दिखलानेसे उनको भी स्वर्ग मोक्षकी सिद्धि करानेके लिये आपने जन्म धारण किया है ।

हे महाभाग मोक्षरूपी स्त्री तुममें ही आसक्त होरही है और भव्यजीव भी आपके

गुणोंमें रंजायमान होनेसे आपसे ही प्रेम रखते हैं। देखो बुद्धिमान पुरुष आपको ही मोहरूपी महायोधाके जीतनेवाले, शरणमें आये हुओंको मोहरूपी अंधे कुएसे रक्षा करनेवाले, कर्मरूपी वैरियोंको नाश करनेवाले, भव्य समूहोंको अविनाशी मोक्षमार्गपर लेजानेवाले मानते हैं। हे नाथ आज आपका जन्माभिषेक करनेसे हम पवित्र हुए हैं और आपके गुणोंको याद करनेसे हमारा मन भी निर्मल होगया है।

हे गुणोंके समुद्र आपकी स्तुति करनेसे हमारे वचन सफल हो गये और आपके शरीरकी सेवासे हमारा शरीर भी सफल हुआ। हे स्वामी जैसे उत्तम खानीसे निकला हुआ रत्न संस्कार किये जानेपर अधिक चमकने लगता है वैसे ही स्नान वगैरहसे संस्कार कियेगये आप भी अधिक शोभायमान होरहे हैं। हे नाथ इस पृथ्वीके ऊपर आप तीन जगतके स्वामियोंके भी स्वामी हो और विनाकारण जगतके हितकरनेसे बंधु भी आप ही हो। इसलिये परमआनंदको देनेवाले आपके लिये नमस्कार है और तीन ज्ञानरूपी नेत्रवाले हे परमात्मन् आपको नमस्कार है।

हे भगवान् धर्मतीर्थके प्रवर्तानेवाले, श्रेष्ठगुणोंके समुद्र और मल पसीना आदिसे रहित ऐसे दिव्य शरीरवाले आपको नमस्कार है। हे देव निर्वाणके दिखलाने वाले, कर्मरूपी

वैरियोंके नाश करनेवाले, पंच इंद्रियां और मोहके जीतनेवाले, गर्भादि पंचकल्याणकोंके भागी, स्वभावसे पवित्र, स्वर्ग मोक्षके देने वाले, अत्यंत महिमाको प्राप्त, विनाकारण सबके हितू, मोक्षरूपी स्त्रीके भर्ता (पति), सब संसारको ज्ञानसे प्रकाश करनेवाले, तीन जगतके स्वामी, और सत्पुरुषोंके परम गुरु आपके लिये वारंवार नमस्कार है ।

हे देव खुशीसे ऐसी आपकी स्तुतिकरके तीन जगतकी सब संपदा हम नहीं लेना चाहते हैं किंतु जगतको हितकारी मोक्षकी साधनेवाली ऐसी सब सामग्री हमें कृपाकरके दो । क्योंकि इस संसारमें आपके समान दूसरा कोई महान दाता नहीं है इस प्रकार वे इंद्र इच्छित वस्तुकी प्रार्थना करके व्यवहारकी प्रसिद्धिकेलिये सार्थक और श्रेष्ठ प्रभुके दो नाम रखते हुए । एक तो कर्मरूपी वैरियोंके जीतनेसे महावीर नाम रखा, दूसरा गुणोंकी वृद्धि होनेसे 'वर्धमान' नाम रक्खा । इस प्रकार दो नाम रखकर अत्यंत महोत्सवके साथ प्रभुको ऐरावत हाथीपर वैठाकर वह इंद्र तथा देव जय जय शब्द करते हुए उस कुंडलपुर महान नगरमें आये । उस समय सब नगर, आकाश तथा वनको घेरकर सब सेना और चार जातिके देव देवियें ठहरते हुए । उसके वाद वह देवोंका स्वामी सौधर्म इंद्र कुछ देवोंको साथ लेकर अतिशोभासे राज मंदिरमें प्रवेश करता हुआ । वहांपर रमणीक गृहके आंगनमें रत्नोंके सिंहासनपर गुणकांति आदिकसे तो वच्चा नहीं किंतु उमरकी

अपेक्षा शिशु ऐसे प्रभुको वैठाता हुआ। बंधुओंके साथ हर्षयुक्त मुखवाले वे सिद्धार्थ महाराज प्रीतिसे आखें फैलाकर अद्भुत कांतिवाले उस पुत्रको देखते हुए।

मायानिद्रामें सोई हुई रानीको उस इंद्राणीने जगाया उस समय वह जिनमाता भी हर्षित होके अपने पुत्रको सब आभूषणोंसे सजा हुआ तेजका समूह ही हो ऐसा देखती हुई। जगत्पतिके माता पिता इंद्राणी सहित इंद्रको देखते हुए मनोरथ सिद्ध होजानेसे संतुष्ट होते हुए। उसके बाद सब देवोंने जगत्पूज्य उन मातापिताओंको अनेकतरहके रत्नोंके आभूषणोंसे और दिव्य वस्त्रोंसे पूजा। फिर प्रीतियुक्त वह सौधर्म इंद्र देवोंके साथ प्रशंसा (स्तुति) करता हुआ कि तुम दोनों इस जगतमें धन्य हो। महान् पुण्यवान हो, सबमें मुख्य हो। लोकमें तुम दोनों ही गुरु हो क्योंकि तीन जगतके पिताके माता पिता हो।

तीन जगतके पतिको पैदा करनेसे तीन जगतसे मान्य हो और सब संसारका उपकार करनेवाले तीर्थंकर पुत्रको पैदा करनेसे आप भी सबके उपकारी और कल्याणके भागी हो। चैत्यालयके समान इस घरको आज हम मानते हैं और हमारे गुरुके संबंधसे आप दोनों पूज्य तथा मान्य हो। इसप्रकार मातापिताओंकी स्तुति करके और श्रीमहावीर प्रभुको सौंपकर वह इंद्र सुमेरुकी उत्तम कथा सुनाता हुआ क्षणभरके लिये

खड़ारहा । वे महोदय दोनों जन्माभिषककी सब बातें सुनकर आश्चर्य सहित हुए खुशीकी परम सीमाको प्राप्त हुए अर्थात् बहुत प्रसन्न हुए ।

वे दोनों मातापिता इंद्रकी सम्मति लेकर बंधुओंके साथ अपने पुत्रका जन्ममहोत्सव करते हुए । सबसे पहले श्रीजैनमंदिरमें महान् सामग्रीके साथ भगवानकी महामह पूजा करते हुए, जो कि सब संपदाओंको सिद्ध करनेवाली है । उसके वाद अपने बंधुओंको तथा नौकरोंको अनेक तरहके दान देते हुए और बंदिगण व दीन अनाथोंको योग्यतानुसार दान दिया । उससमय तोरणोंसे (मालाओंसे) ऊंची धुजाओंसे, गाने नाचने और वाजोंसे, तथा अन्यभी सैकड़ों उत्सवोंसे वह नगर स्वर्गके समान मालूम पड़ने लगा और राजमंदिर स्वर्गके महलोंके समान दीखने लगा ।

ऐसा देखकर सब कुटुंबी और प्रजाके लोग बहुत आनंदयुक्त होते हुए । वह देवेन्द्र सब बंधुओंको और पुरवासियोंको खुश हुआ देखकर आप भी अपनी खुशी प्रगट करता हुआ । वह इंद्र उससमय आनंदसे भरेहुए त्रिवर्ग फलका साधन ऐसे दिव्य नाटकको गुरुकी सेवाके लिये देवियोंके साथ करता हुआ । उस इंद्रके नृत्यके आरंभ होनेपर गंधर्वदेव सुंदरगाना दिव्य वाजोंके साथ गाते हुए । उस सभामें नाटक देखनेके लिये सिद्धार्थ वगैरः राजा पुत्रको गोदमें लिये हुए और उनकी रानियें तथा

दूसरे भी देखनेवाले लोग बैठते हुए। वह इंद्र पहले २ नेत्रोंको आनंदित करनेवाला जन्माभिषेक संबंधी दृश्य दिखाता हुआ। फिर जिनेन्द्रके पूर्वजन्मके अवतारोंको नाटककी तरह दिखलाता नृत्य करता हुआ वह इंद्र कल्पवृक्षके समान मालूम होने लगा। लयके साथ पैरोंको चलाता हुआ वह इंद्र रंगभूमिके चारों तरफ फेरी मारकर विमानकी तरह शोभायमान होता हुआ।

पुष्पांजलि बखेरकर तांडव नृत्यको आरंभ करनेवाले उस इंद्रके ऊपर भक्तिवंत देव पुष्पोंकी वर्षा करते हुए। उस नृत्यके समय उसके योग्य करोड़ों बाजे बजते हुए, वीणा और बांसुरी भी मधुर शब्द करते हुए। किन्नरी देवियें भी श्रीजिनेन्द्रके गुणोंको कहनेवाले गीतोंको लयके साथ गाती हुईं। क्रमसे पूर्वरंग करके वह इंद्र अद्भुतरस दिखलाता हुआ रत्नोंके अलंकारोंसे भूषित हजार भुजाओंसे तांडव नृत्य करने लगा।

विक्रिया ऋद्धिके प्रभावसे उत्तम नृत्य करता हुआ वह इंद्र पैर कमर कंठ हाथोंको फड़काता राजा वगैरः सब लोगोंको प्रसन्न करता हुआ। हजार भुजाओंसे नृत्य करते हुए उस इंद्रके चरणोंके चलनेसे उससमय पृथ्वी चलायमान होने लगी।

सब तरफ आखोंके तारोंको (कटाक्षोंको) फैंकता हुआ व वस्त्र और आभूषणोंको चलायमान करता हुआ वह कल्पवृक्षके समान नृत्य करता हुआ। क्षणभरमें एक

रूप, कभी दूसरे क्षणमें बहुत रूप, कभी अति सूक्ष्म शरीर और कभी बहुत बड़ा शरीर करता हुआ। क्षणभरमें समीप, क्षणभरमें दूर क्षणभरमें आकाशमें, क्षणभरमें पृथ्वीपर, क्षणभरमें दो हाथोंसे क्षणभरमें बहुत हाथोंसे नृत्य करता वह इंद्र विक्रिया ऋद्धिसे अपनी सामर्थ्य प्रगट करता हुआ इंद्रजालके समान नाटक दिखाता हुआ। फिर अप्छरायें भी अंगोंको चलातीं हुईं भौंएं मटकाती हुईं हर्षयुक्त नाचने लगीं। कितनी तो बड़ी लयके साथ और कोई तांडव नृत्यके साथ तथा कोई विचित्र हाव भाव वगैरःके साथ वे अप्छरायें नांचतीं हुईं। कोई ऐरावत हाथीके ऊपर इंद्रकी भुजाओंमेंसे निकलतीं प्रवेशकरतीं हुईं कल्पवृक्षकी शाखापर लगी हुई कल्प वेलिके समान शोभायमान होने लगीं। कोई अप्सराएं इंद्रके हाथकी उंगलिओंपर अपने शुभ हाथ रखतीं हुईं लीला सहित नृत्य करने लगीं। कोई इंद्रकी हस्तांगुलिके ऊपर नाभि रखकर उस अंगुलीको लाठीके समान भ्रमातीं हुईं। इंद्रकी हर एक भुजापर चढके नाचतीं हुईं वे देवांगनायें मनुष्योंकी आखोंको मोहित करतीं हुईं।

वे अप्सरायें कभी आकाशमें उछलकर नृत्य करती हुईं क्षणभर तो नहीं दिखाई मालूम पड़तीं थी फिर क्षणभरमें लोगोंको दीख पड़ती थीं। इस प्रकार वह इंद्र अपनी भुजाओंको इधर उधर चलाता हुआ लोकमें महान् इंद्र जालिया मालूम होने लगा। उस

इंद्रके हरएक अंगमें जो रमणीक कलायें थीं वे देवियोंके नाचनेसे उन देवियोंमें वंट गईं इत्यादि विक्रिया ऋद्धिसे देवियोंके साथ अनेक तरहके हाव भावोंसे नृत्यकरनेसे आनंद नाटकको दिखलाता हुआ वह इंद्र माता पिता आदि सब सभासदोंको आनंद उत्पन्न करता हुआ।

उसके वाद वे सब इंद्र जिनेन्द्रकी सेवा भक्तिके लिये देवियोंको तथा जिनेन्द्रके समान रूप उमर भेष वनानेवाले असुर कुमारोंको वहां रखकर अति पुण्य उपार्जन करके देवोंके साथ अपने २ स्वर्गस्थानको जाते हुए। इस प्रकार पुण्यके फलसे वह तीर्थंकर स्वामी इंद्रोंकर पूजित सब संपदाओंकर पूर्ण होता हुआ। ऐसा जानकर हे भव्यो यदि सुख संपदा चाहते हो तो तुम भी सब सुखोंका बीज एक धर्मको ही यत्नसे हमेशा पालन करो॥

इस प्रकार श्रीसकलकीर्ति देवविरचित महावीर पुराणमें भगवान
महावीरके जन्माभिषेकको कहने वाला नौमा
आधिकार पूर्ण हुआ॥ ७॥

दशवाँ अधिकार ॥ १० ॥
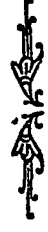
नमः श्रीवर्धमानाय हताभ्यंतरशत्रवे ।
त्रिजगद्धितकर्त्रे मू-र्धानंतगुणसिंधवे ॥ १ ॥

भावार्थ—जिसने कामक्रोधादि अंतरंग शत्रुओंको जीतलिया है, तीन जगतको हित करनेवाले और अनंत गुणोंके समुद्र ऐसे श्री महावीरस्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ।

अथानंतर कोई देवी धाय वनकर उस श्रेष्ठ वालकको स्वर्गसे लाये गये वस्त्र आ-भूषण माला और लेपन द्रव्यसे सजातीं हुईं । कोई देवियें अनेक तरहके खिलोंने व वोलचालसे उस वालकको रमाती (खिलाती) हुईं । कितनीं ही देवियें अपने हाथोंको फैलातीं हुईं 'हे स्वामी यहां आओ' ऐसा वार वार कहतीं हुईं । उस समय वह वालक महावीर कुछ मुसकराता हुआ रत्नोंकी जमीनपर लोटता सुंदर वातें व चेष्टाओंसे मातापिताको आनंदित करता हुआ । तव उस वालककी शिशु अवस्था (वचपन) चंद्रमाकी कलाके समान उज्वल, उत्सवकरनेवाली सव जनोंकर वंदनीक होती हुई । इस प्रभुके मुखरूप

चन्द्रमाकी मुसकरानेरूप निर्मल चांदनीसे मातापिताके मनका सन्तोषरूपी समुद्र वढता हुआ ।

क्रमसे बढते हुए श्रीमान् महावीरके मुखरूपी कमलसे सरस्वतीकी तरह वाणी निकलती हुई । रत्नोंकी पृथ्वीपर धीरे २ गिरते हुए पैरोंके रखनेसे विचरता हुआ वह बालक आभूषणोंकी तेज किरणोंसे सूर्यके समान मालूम होता था। कोई देव, हाथी घोड़ा वंदर वगैरःका सुंदररूप रखकर तथा अन्य क्रीडाओंसे उसे खेलाते हुए । इत्यादि दूसरी भी वालचेष्टाओंसे कुटुंबियोंको हर्ष उत्पन्न करता हुआ वह बालक अमृतरूप अन्नपानादिकसे कुमार अवस्थाको प्राप्त हुआ । उससमय उस कुमारके जो पहलेका निर्दोष क्षायिक सम्यक्त्व था उससे सब पदार्थोंका अपने आप निश्चय होगया ।

उस प्रभुके उसीसमय दिव्यशरीरके साथ २ स्वाभाविक मति श्रुत अवधिज्ञान वृद्धिको प्राप्त हुए प्रगट होने लगे। उन ज्ञानोंसे सब कलाओंका जानना, सब विद्यायें तथा धर्मरूपी विचार अपने आपही प्रगट होगये इसकारण वह प्रभु मनुष्य तथा देवोंका बड़ा गुरु होता हुआ । परंतु इस स्वामीका गुरु व पढ़ानेवाला कोई नहीं था यह अचंभेकी वात है । आठवें वर्षमें वह देव गृहस्थधर्म पालनेके लिये आपही अपने योग्य वारह व्रतोंको ग्रहण करता हुआ । उस प्रभुका शरीर पसीना रहित, चमकीला, मलसूत्र

रहित, दूधके समान सफेद रुधिरयुक्त, महान् सुगंधित, एक हजार आठ शुभलक्षणोंसे शोभायमान, पहले वज्रवृषभनाराच संहनन और समचतुरस्र संस्थानवाला, उत्तम रूपयुक्त, और अतुल बलकर सहित था।

सबको हितकरनेवाले कर्णोंको प्रिय उस प्रभुके निर्मल वचन निकलते हुए। इस प्रकार जन्मसे होनेवाले दिव्य दस अतिशयोंकर सहित, शांतता आदि अपरिमित गुण कीर्ति कांति कलाविज्ञानकी चतुराई तथा व्रत शीलादि भूषणों सहित, तपाये सोनेके समान वर्णवाला, दिव्यदेहका धारक, और वहत्तरि वर्षकी आयुवाला वह प्रभु धर्मकी मूर्तिके समान शोभायमान होता हुआ।

एक दिन इंद्रकी सभामें इस महावीर प्रभुकी महान पराक्रमको वतलानेवाली कथा देव आपसमें करते हुए। देखो वीर जिनेश्वर कुमारअवस्थामें ही धीर, शूरोंमें मुखिया अतुल पराक्रमी, दिव्यरूपका धारी, अनेक महान गुणोंसे शोभायमान, और निकट संसारी क्रीडा करता हुआ वहुत अच्छा दीखता है। ऐसे वचन संगम नामका देव सुनकर उसकी परीक्षा करनेके लिये स्वर्गसे चलकर महावनमें आया। वहांपर वहुत राजपुत्रोंके साथ महा तेजस्वी कुमारको क्रीडा करते हुए देखा। उस प्रभुको डरानेके लिये वह देव काले सर्पका आकार वनाता हुआ वृक्षकी जड़से लेकर स्कंधतक लिप-

टता हुआ। उसके भयसे वे अन्य राजकुमार वृक्षसे कूदकर घबराये हुए बहुत दूर भाग गये।

वह महावीरकुमार सैकड़ों जिह्वावाले उस डरावनी सूरतके सर्पपर चढकर शुद्ध हृदयसे शंकारहित हुआ ऐसे क्रीडा करने लगा मानों उस सर्पको तृणसमान समझ माताकी सेजपर क्रीडा करता हो। उस कुमारके महान धैर्यको देखकर वह देव आश्चर्य सहित हुआ प्रगट होकर उस प्रभुके उत्तम गुणोंकी स्तुति करता हुआ। हे देव तुम ही जगत्के स्वामी हौ, महान् धीर वीर भी तुम ही हौ, तुम सब कर्मरूपी वैरियोंके नाश करनेवाले और जगतके जीवोंकी रक्षा करनेवाले हौ।

हे देव चांदनीके समान अति निर्मल महापराक्रमसे उत्पन्न हुई आपकी कीर्ति किसीसे नहीं रुककर इस लोककी नाड़ीमें फैल रही है। हे देव तुमारे नामके स्मरण (याद) करनेसे ही पुरुषोंको सब प्रयोजनोंका सिद्ध करनेवाला धैर्य प्राप्त होता है। हे नाथ अत्यंत दिव्यमूर्तिवाले सिद्धिवधूके भर्ता महावीर आपको मैं वारंवार नमस्कार करता हूं। इसप्रकार वह देव स्तुति करके उन जगत्गुरूका महावीर ऐसा सार्थक नाम करता हुआ वारंवार प्रणाम करके स्वर्गको गया। कुमार भी कहीं चंद्रमाके समान निर्मल सबके कानोंको सुख देनेवाला अपने यशको गंधर्व देवोंसे गाया हुआ कानोंसे सुनता था।

कभी किन्नरी देवियोंसे अच्छे कंठसे गाये हुए अपने गुणोंको आदरपूर्वक सुनता था। कभी नेत्रोंको प्रिय इंद्रकी अप्सराओंका विचित्र नाच व बहुरूप धारने वाले देवोंका नाटक देखता हुआ। कभी दिव्य स्वर्गसे लाये गये आभूषण वस्त्र माला वगैरःको देखता हुआ। कभी देवकुमारोंके साथ खुशीसे बहुत जल क्रीडा करता हुआ और कभी अपनी इच्छासे वन क्रीड़ा करता हुआ। इत्यादि बहुत क्रीडा विनोदोंसे धर्मात्मा वह कुमार समयको सुखसे बिताता हुआ।

सौधर्म इंद्र भी अपने कल्याणके लिये अनेक तरहके नृत्य गीत बजाना वगैरः स्वर्गकी देवियोंसे कराता हुआ। काव्य वाद्य आदिकी गोष्ठी तथा धर्मकी चर्चासे काल-को बिताता हुआ वह कुमार अद्भुत पुण्यके उदयसे सुख भोगता संता क्रमसे जगत्को सुख करनेवाली जवान अवस्थाको धारण करता हुआ। तब इसका मस्तक मुकुटसे धर्मरूपी पर्वतकी शिखरके समान दीखने लगा। इसका मस्तक गालोंकी कांतिसे ऐसा मालूम पड़ने लगा मानों अष्टमीका चंद्रमा ही हो और भाग्यका खजाना ही हो। इस प्रभुके सुंदर भौंहोंके विभ्रमसे शोभित नेत्रकमलोंका वर्णन हो नहीं सकता; क्योंकि जिनके खुलने मात्रसे जगतके जीव तृप्त हो जाते हैं।

गीतोंको सुननेवाले इस प्रभुके कान रत्नोंके कुंडलके तेजसे ऐसे शोभायमान

होने लगे मानों ज्योतिषचक्रसे घिरे हुए हैं। उन प्रभुके मुखरूपी चंद्रमाकी उत्तम शोभा क्या वर्णन की जावे कि जिससे जगत्का हित करनेवाली दिव्य ध्वनि निकलती है। उस प्रभुके नासिका ओठ दांत और कंठकी स्वाभाविक सुंदरता जो थी उसके कहनेको कोई बुद्धिमान् समर्थ नहीं है। उस प्रभुका महान् वक्षःस्थल रत्नोंके हारसे सजा हुआ ऐसी शोभा देता था मानों वीरतालक्ष्मीका घर ही हो।

अंगूठी बाजू कंकणादिसे भूषित भुजायें ऐसी मालूम होती थीं मानों लोगोंको इच्छित वस्तुके देनेवाले दो कल्पवृक्ष ही हैं। हाथोंके आश्रित दस नख अपनी किरणोंसे ऐसे दीखते हुए मानों लोगोंको धर्मके दस अंग कहनेको उद्यत हो रहे हैं। उन प्रभुके अंगमें गहरी नाभि ऐसी मालूम होने लगी मानों सरस्वती और लक्ष्मीके क्रीडा करनेके- लिये सरोवर (तालाव) ही हो। वे प्रभु कपड़ेसे घिरी हुई कमरमें करधनी पहरते हुए ऐसे मालूम होने लगे मानों कामदेवरूपी वैरीको बांधनेके लिए नागफांस ही रख छोड़ी हो।

वे महावीर प्रभु प्रकाशमान दोनों जानु और केलेके मध्यभागके समान कोमल जांघोंको धारण करते हुए, परंतु वे जांघें कोमल होनेपर भी व्युत्सर्गादि तप करनेमें समर्थ थीं। इस प्रभुके चरणकमलोंकी महान् कांतिकी किससे बरावरी की जा सकती है जिन चरणोंकी सेवा इंद्र नोंकरकी तरह करते हैं। इत्यादि परम शोभा प्रभुके नखसे

लेकर चोटीतक स्वभावसे थी उसको कौन बुद्धिमान् वर्णन कर सकता है। तीन जगतमें रहनेवाले दिव्य प्रकाशमान पवित्र और सुगंधित परमाणुओंसे ब्रह्मा व कर्मने उस प्रभुका अद्वितीय शरीर बनाया है। उस शरीरका पहला वज्रर्षभनाराच संहनन था।

उस प्रभुके शरीरमें मद खेद वगैरः दोष, रागादिक दोष तथा वातादि तीन दोषोंसे उत्पन्न हुए रोग कोई समय भी जगह नहीं पाते हुए। इस प्रभुकी वाणी जगत्‌को प्यारी, शुभ और सबको सत् मार्गकी दिखाने वाली धर्म माताके समान थी। दूसरी खोटे मार्गको पहुँचाने वाली ऐसी नहीं थी। प्रभुके दिव्य शरीरको पाकर आगे कहे जानेवाले लक्षण ऐसे शोभायमान होते हुए, जैसे धर्मात्माओंको पाकर धर्मादिगुण शोभित होते हैं। वे लक्षण ये हैं—श्रीवृक्ष शंख पद्म सांतिया अंकुश तोरण चमर सफेद-छत्र धुजा सिंहासन दो मछलियां दो बड़े समुद्र कछुआ चक्र तालाव विमान नागभवन पुरुषस्त्रीका जोड़ा बड़ा भारी सिंह वाण तोमर गंगा इंद्र सुमेरु गोपुर पुर चंद्रमा सूर्य घोड़ा बीजना मृदंग सर्प माला वीणा वांसुरी रेशमीवस्त्र दुकान दैदीप्यमान कुंडल विचित्र आभूषण फल सहित वगीचा पके हुए अनाजवाला खेत हीरा रत्न बड़ा दीपक पृथ्वी लक्ष्मी सरस्वती सुवर्ण कल्पवेल चूड़ारत्न महानिधि गाय बैल जामुनका वृक्ष पक्षिराज सिद्धार्थ वृक्ष महल नक्षत्र तारे ग्रह प्रातिहार्य। इत्यादि दिव्य एकसौ आठ

लक्षण तथा नौसौ सब श्रेष्ठ व्यंजनोंसे, विचित्र आभूषणोंसे और मालाओंसे इस त्रिभुका स्वभावसे सुंदर दिव्य औदारिक शरीर अनुपम शोभता हुआ।

बहुत कहनेसे क्या फायदा है जो कुछ तीन जगत्में शुभलक्षणरूप संपदा प्रियवचन विवेकादि गुण हैं वे सब तीर्थंकर पुण्यकर्मके उदयसे उस प्रभुके अपनेआप अनेक सुखके कारण होते हुए। इत्यादि अन्य भी रमणीक गुणोंके अतिशयसे शोभायमान और मनुष्य विद्याधर देवोंके स्वामियोंसे सेवित होता हुआ। वह महावीरकुमार धर्मकी सिद्धिके लिये मनवचनकायकी शुद्धिसे अतीचाररहित गृहस्थके बारह व्रतोंको नित्य पालता था। और शुभध्यानका हमेशा विचार करता रहता था। वह कुमार दिव्य क्रीडाओंसे हर्षित हुआ राजा और इंद्रकर दिये हुए अपने पुण्यसे उत्पन्न शुभरूप महान् भोगोंको भोगता हुआ।

जगत्के स्वामी मंदरागी सन्मति वे महावीर प्रभु तीस वर्षकाल क्षणभरके समान सुखसे विताते हुए। अथानंतर एक समय महावीर स्वामी काललब्धिसे (अच्छी होनहारसे) प्रेरित हुए चारित्रमोह कर्मके क्षयोपशमसे अपने आप ही अपने पहलेके करोड़ों जन्मोंका संसारभ्रमण जानकर संसार शरीर व भोगोंसे परम वैराग्यको प्राप्त हुए। उसके बाद इस बुद्धिमान् प्रभुके चित्तमें ऐसा तर्क वितर्करूप विचार हुआ कि मोहरूप महान् वैरीका नाश करनेवाला रत्नत्रय व तप पालना चाहिये।

देखो अवतक इस संसारमें मेरे दिन चारित्रके विना अज्ञानीकी तरह वृथा गये जो कि अब नहीं मिल सकते। पहले जमानेमें जो श्रीऋषभादि तीर्थंकर होगये हैं उनकी आयु तो बहुत ज्यादा थी इससे वे सब कुछ कर सके थे और अब थोड़ी आयुवाले हमसरीखे संसारीक कार्य कुछ नहीं कर सकते। श्री नेमिनाथ वगैरः तीर्थंकर धन्य हैं कि जो अपना जीवन थोड़ा जानकर शीघ्र ही कुमार अवस्थामें मोक्षके लिये तपोवनको चले गये। इस लिये इस संसारमें हितके चाहनेवाले थोड़ी आयुवाले पुरुषोंको संयम (चारित्र) के विना एक क्षण भी वृथा नहीं जाने देना चाहिये।

जो थोड़ी आयु पाकर तपस्याके विना दिनोंको वृथा ही गँवाते हैं वे मूर्ख यमराजसे भक्षण किये गये इस दुनियांमें दुःख पाते हैं। परंतु यह बड़ा अचंभा है कि मैं तीनज्ञानरूपी नेत्रवाला आत्माका जाननेवाला भी संयमके विना अज्ञानीकी तरह वृथा ही गृहस्थाश्रममें रहकर काल विता रहा हूं। इस संसारमें तीन ज्ञान मिलनेसे क्या लाभ है जवतक कि आत्माको कर्मोंसे जुदा करके मोक्षलक्ष्मीका मुखकमल न देखा जाय। ज्ञान पानेका उत्तम फल उन्हीं पुरुषोंको है जो निष्पाप तपका आचरण करते हैं,। दूसरोंका ज्ञानाभ्यासरूप क्लेश करना निष्फल है।

जो नेत्रोंवाला होकर भी कुएमें गिरै उसके नेत्र वृथा हैं उसी तरह जो ज्ञानी

होकर मोहरूपी कुएमें फंस जावे तो उसका ज्ञान पाना किसी कामका नहीं। अज्ञानसे (नहीं जानकर) किया हुआ पाप ज्ञान होनेसे छूट जाता है लेकिन जो ज्ञानसे (जानकर) पाप किया जावे वह इस संसारमें किस चीजसे छूट सकेगा अर्थात् किसीसे नहीं। ऐसा समझकर ज्ञानियोंको प्राणोंके जानेपर भी मोह आदि निंदनीक कामोंसे कभी पाप नहीं करना चाहिये। क्योंकि मोहसे ही रागद्वेष होते हैं और रागद्वेषसे अत्यंत घोर पाप होता है तथा पापसे बहुतकाल तक दुर्गतियोंमें भटकना पड़ता है और भटकनेसे वचनसे नहीं कहा जावे ऐसा पराधीन होकर दुःख सहना पड़ता है।

ऐसा जानकर ज्ञानियोंको पहले मोहरूपी शत्रु प्रकाशमान वैराग्यरूपी तलवारसे मार देना चाहिये क्योंकि मोह ही सब अनर्थोंका करनेवाला दुष्ट है। वह मोह भी गृहस्थोंसे नहीं मारा जासकता इसलिये पापरूपी घरका बंधन दूरसे ही छोड़ देना चाहिये। क्योंकि गृहबंधन ही बालक अवस्थामें अथवा मदोन्मत्त जवान अवस्थामें सब अनर्थोंका करनेवाला है इसलिये धीर वीर पुरुष मोक्षकी प्राप्तिके लिये उस गृहबंधनको छोड़ देते हैं। वे ही जगत्में पूज्य हैं वे ही महापुरुष धीर वीर हैं जो जवान अवस्थामें दुर्जय कामदेवरूपी वैरीको जीतते हैं।

क्योंकि यौवन अवस्थारूप राजाने कामदेव और पंचेंद्रिय आदि चोर जीवोंका

बिगाड़ करनेके लिये भेजे हैं। जब यौवनराजाकी अवस्था मंद (ढीली) होजाती है तब आश्रयके न होनेसे बुढापेरूप फांसीसे बंधे हुए वे कामदेवादि भी ढीले पड़जाते हैं। इसलिये मैं ऐसा समझता हूं कि जवानअवस्थामें ही अत्यंत कठिन तप करूं जिससे कामदेव व पंचेंद्रिय विषयरूपी वैरियोंका नाश हो। ऐसा विचार कर वे महा बुद्धिमान् श्रीमहावीर स्वामी चित्तको निर्मल कर राज्यभोगादिकोंसे तो निस्पृह (इच्छा-रहित) हुए और मोक्षके साधनमें इच्छावाले होते हुए।

फिर वे महावीर प्रभु घरको कैदखाना समझकर राज्यलक्ष्मीके साथ उसे छोड़-नेका और तपोवनको जानेका उद्यम करते हुए। इसप्रकार काललब्धिके आनेपर शुभ परिणामोंसे वे तीर्थराजा महावीरकुमार कामदेवसे उत्पन्न होनेवाले सुखको नहीं भोगके सब सुखोंका भंडार ऐसे वैराग्यको प्राप्त होते हुए। ऐसे बालब्रह्मचारी वे महा-वीर प्रभु स्तुति करनेवाले मुझको अपनी गुणसंपदा देवें।

इसप्रकार श्रीसकलकीर्तिदेवविरचित महावीरपुराणमें महावीर भगवानको कुमार अवस्थामें वैराग्यकी उत्पत्तिको कहनेवाला दशवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १० ॥

ग्यारवां अधिकार ॥ ११ ॥

वंदे वीरं महावीरं कर्मारातिनिपातने ।
सन्मतिं स्वात्मकार्यादौ वर्धमानं जगत्त्रये ॥ १ ॥

भावार्थ—कर्मरूपी वैरियोंको नाश करनेमें महाबलवान्, अपने आत्माका कल्याण करनेमें श्रेष्ठ बुद्धिवाले तीन जगतमें जिनका सन्मान बढा हुआ है अर्थात् जिनको तीन लोकके स्वामी पूजते हैं ऐसे श्रीमहावीरस्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ।

अथानंतर वे महावीर प्रभु अपने वैराग्यको बढानेके लिये इन बारह भावनाओंको विचारते हुए । वे ये हैं—अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्मानुप्रेक्षा—इस प्रकार बारह भावना हैं, जो कि वैराग्यको पुष्ट करनेवाली हैं ।

अनित्य भावना—इस तीन लोकमें आयु तो हमेशा यमराजसे घिरी हुई है, जवान अवस्था बुढापेके मुंहमें है, शरीर रोगरूपी सर्पका बिल है और इंद्रियसुख क्षणविनाशी है । इत्यादि जो कुछ सुंदर वस्तु दीखनेमें आ रही है वह सब कर्मोंसे उत्पन्न

हुई है और अपना समय आनेपर नाश हो जायगी। इसमें कुछ संदेह नहीं है। जो करोड़ों जन्मोंसे भी दुर्लभ मनुष्यायु मौतसे क्षणभरमें नाश हो जाती है तो अन्यवस्तुओंकी स्थिर रहनेकी क्या आशा रखनी चाहिए। क्योंकि सबका नाश करनेवाला पापी यमराज इस प्राणीको गर्भसे लेकर समयादि कालके हिसाबसे अपने पास घसीट लाता है। जो यौवन धर्मसुखादिका कारण होनेसे सज्जनोंको माननीय है वह भी व्याधि (रोग) मौतसे घिरकर क्षणभरमें बादलोंके समान नष्ट हो जाता है। क्योंकि कोई जवान पुरुष रोग-रूपी आगसे ग्रसे जाते हैं और कोई बंदीखानेमें रखे गये अनेक तरहके दुःख भोगते हैं।

जिस कुटुंबके लिये नरकादिका कारण निंदनीक काम किया जाता है वह भी कालसे चलायमान हुआ साररहित ही है। इस संसारमें जब चक्रवर्तीके भी राज्य लक्ष्मी सुख आदिक बादलकी छाया समान विनाशीक चंचल हैं तो दूसरी वस्तुकी स्थिरता ही क्या हो सकती है ? कुछ भी नहीं। इस प्रकार जगत्‌की सब वस्तु क्षणवि-नाशी जानकर हे बुद्धिमानो हमेशा गुणोंका समुद्र अविनाशी ऐसी मोक्षको शीघ्र ही साधो। इति।

अशरण भावना—इस संसारमें निर्जनवनमें जैसे सिंहकी दाढके बीचमें आये हुए बच्चेको कोई भी शरण (बचानेवाला) नहीं है उसी तरह इस प्राणीको भी रोग

मृत्यु आदिसे कोई बचानेवाला नहीं है। जिस प्राणीको यमराज ले जाता है उसे इंद्र-सहित देव, चक्रवर्ती विद्याधर क्षणभर भी नहीं बचा सकते। देखो जब काल मनुष्योंके सामने आजाता है तब सब मणिमंत्रादिक और सब औषधियां व्यर्थ हो जातीं हैं। बुद्धिमानोंने जगत्‌में शरण जिन (अरहंत) भगवान् सिद्ध, साधु और केवलीकर उपदेशा हुआ भव्योंकी रक्षा करनेवाला साथ रहनेवाला धर्म—ये पदार्थ हैं। तप दान जिन-पूजा जाप रत्नत्रय आदि ये सब अनिष्ट और पापोंके नाशक होनेसे बुद्धिमानोंको शरण हैं। जो बुद्धिमान् संसारसे डर कर इन अर्हंत आदिकी शरणको प्राप्त होते हैं वे शीघ्र ही उनके गुणोंको पाकर उनके समान परमात्मा हो जाते हैं।

जो मूर्ख चंडी क्षेत्रपाल आदि मिथ्याती देवोंकी शरण लेते हैं वे अज्ञानी रोग दुखोंसे घिरे हुए नरकरूपी समुद्रमें गिरते हैं। ऐसा जानकर बुद्धिमानोंको पांच पर-मेष्ठीकी तथा तप धर्मादिकी शरण लेनी चाहिये जो कि अपने सब दुःखोंके नाश करने-वाली है। और दूसरी शरण बुद्धिमानोंको रत्नत्रयादिके द्वारा मोक्षकी लेनी चाहिये। मोक्ष अनंतगुणोंसे भरी हुई है और अनंतसुखका समुद्र है।

संसारानुप्रेक्षा—यह संसार अनादि अनंत है उसमेंसे अभव्य जीवोंको तो अनंत है और कहीं भव्य जीवोंकी अपेक्षा सांत है। इस संसारमें अज्ञानी जीवोंको

सुखदुख दोनों ही मालूम होते हैं परंतु ज्ञानियोंको बुद्धिबलसे हमेशा केवल दुःख ही दिखलाई देता है। क्योंकि जो अज्ञानी विषयोंसे उत्पन्न हुए को सुख मानते हैं उसी विषयसुखको बुद्धिमान नरकादिकका कारण होनेसे अधिक दुःख मानते हैं। द्रव्य क्षेत्र-काल भव भावरूप पांच प्रकारके भ्रमण वाली, दुःख रूपी सिंहोंसे सेवनकी गई इससे भयानक तथा इंद्रियरूप चोरोंसे भरी ऐसी संसाररूपी वनीमें कर्मरूपी वैरीसे गला दवाये हुए सब प्राणी रत्नत्रयरूपी वाणके विना बहुत काल तक भ्रमते (भटके) हुए भटक रहे हैं और भटकेंगे। संसारमें ऐसे कर्म और शरीरके पुद्गल कोई बाकी नहीं रहे कि जिनको भ्रमते हुए इस जीवने न ग्रहण किये हों न छोड़े हों—यह द्रव्य-संसार (भ्रमण) है। ऐसा लोकाकाशका कोई प्रदेश नहीं बचा कि जिसमें सब संसारी जीव न उत्पन्न हुए और न मरे हों यह—क्षेत्रसंसार है। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालका ऐसा कोई समय नहीं बचा कि जिसमें जीवने न जन्म लिया हो और न मरण किया हो—यह काल संसार है। नरकादि चार गतियोंमें ऐसी कोई योनि नहीं बची कि जिसको इस जीवने न ग्रहण किया हो, और न छोड़ा हो—यह भवसंसार है। देखो ये संसारी जीव मिथ्यात्वादि सत्तावन दुष्ट कारणोंसे भ्रमते हुए पाप कर्मोंको हमेशा उपार्जन करते हैं—यह भावसंसार है।

इस प्रकार जिस धर्मको नहीं पाकर ये प्राणी भटकते हैं उस संसारके नाशक धर्मको हे भवसे डरे हुए भव्यो तुम बहुत यत्नसे सेवन करो । भो शीघ्र ही सुख चाहनेवाले भव्यो ! रत्नत्रयरूप धर्मसे अनंत सुखवाली और दुःखसे अलग ऐसी मोक्ष मिलती है इसलिये यत्नसे धर्मको पालो ।

एकत्वभावना—यह प्राणी इस संसाररूपी वनमें अकेला ही जन्म लेता है, अकेला ही मरण करता है, अकेला ही भटकता है और अकेला ही महान् सुख भोगता है । अकेला ही रोगादिसे घिरा हुआ बहुत वेदना (दुःख) पाता है उसके एक ही हिस्सेको भी देखनेवाले कुटुंबी नहीं वांट सकते । यमराज कर घसीटा गया यह प्राणी अकेला ही बहुत जोरसे चिल्लाकर रोता है उसको क्षणभरभी भाई वगैरः नहीं बचा सकते ।

अकेला ही यह जीव अपने कुटुंबके पालनेके लिये निंदनीक हिंसादि पापोंसे अपनी खोटी गति होनेका कारण पापबंध करता है और उसके फलसे वही पापी नरकादि खोटी गती पाकर अत्यंत दुःख भोगता है उसके साथ दूसरा कोई कुटुंबी मनुष्य नहीं भोगता । अकेला ही यह जीव सम्यग्दर्शन तप ज्ञान चरित्रादि शुभ कामोंसे जिनेंद्र आदिकी संपदाको देनेवाला महान पुण्यबंध करके और उसके फलसे वह ज्ञानी स्वर्गादि सुगतियोंमें महान विभूतियां पाकर अनुपम सुख भोगता है । उसके समान दूसरा कोई महान पुरुष नहीं है ।

यह जीव अकेला ही तप रत्नत्रयादिसे अपने कर्मरूपी वैरियोंको नाश कर संसारसे अलग होके अनंत सुखवाली मोक्षको जाता है। इसप्रकार सब जगह अकेलापन समझकर हे ज्ञानवानो तुम भी मोक्षपदकी प्राप्तिके लिये एक ज्ञानस्वरूप अपने आत्माका ध्यान करो।

अन्यत्व भावना—हे प्राणी तू अपनेको सब जीवोंसे जुदा समझ और जन्ममरण शरीर कर्म सुखादिसे भी निश्चयसे जुदा मान। इस तीन जगतमें कर्मके उदयसे मातापिता भाई स्त्रीपुत्र वगैरः सब जीव अन्य ही होकर प्राप्त होते हैं असलमें ये तेरे नहीं है। जहां साथ साथ रहनेवाला अंतरंग शरीर ही मरणके समय छोड़ देता है ऐसा प्रत्यक्ष देखनेमें आता है तो वहिरंग घर स्त्रीवगैरः अपने कैसे हो सकते हैं। निश्चयसे पुद्गलकर्म कर उत्पन्न हुआ द्रव्य मन तथा अनेक संकल्प विकल्पोंसे भरा हुआ भाव मन और दोनों तरहके वचन ये भी आत्मासे जुदे हैं। कर्म और कर्मोंके कार्य अनेक तरहके सुखदुःख जीवसे दूसरे स्वरूप ही हैं।

जिन इंद्रियोंसे यह जीव पदार्थोंको जानता है वे इंद्रियां भी ज्ञानस्वरूप आत्मासे भिन्न हैं और जड़ पुद्गलसे उत्पन्न हुई हैं। जो कि राग द्वेषादि परिणाम जीवमई मालूम होते हैं वे भी कर्मोंकर किये गये कर्मोंसे उत्पन्न हुए हैं जीवमयी नहीं है। इत्यादि

अन्य भी जो कुछ वस्तु कर्मसे उत्पन्न हुई है वह सब असलमें अपने आत्मासे जुदी ही है। इस बाबत बहुत कहनेसे क्या फायदा; लेकिन सम्यग्दर्शन ज्ञानादि आत्ममयी गुणोंके सिवाय अपना कोई कभी नहीं होसकता। इसलिये हे योगीश्वरो तुम अपने ज्ञानस्वरूप आत्माको शरीरादिसे जुदा जानकर यत्नसे शरीरके नाश करनेके लिये उस आत्माका ही ध्यान करो।

अशुचिभावना—जो शरीर रुधिर वीर्यसे पैदा हुआ, रुधिर आदि सात धातुओंसे और मलमूत्रादिसे भरा हुआ है ऐसे शरीरकी कौन उत्तम ज्ञानी सेवा करेगा। देखो जहां भूख प्यास बुढापा रोगरूपी अग्नियां जला करती हैं उस कायरूपी झोंपड़ीमें सत्पुरुषोंको क्या रहना योग्य है कभी नहीं। जिसमें राग द्वेष कषाय कामदेव रूपी सर्प हमेशा रहते हैं ऐसे शरीररूपी विलेमें कौनसा श्रेष्ठज्ञानी रहना चाहेगा कोई नहीं। यह पापी शरीर आप तो अशुद्ध स्वरूप है ही लेकिन अपने आश्रित सुगंधी वस्त्र आदिकोंको भी दुर्गंधित (मैले) करडालता है। जैसे भंगीका टोकरा कहींसे भी अच्छा नहीं दीखता उसी तरह चाम और हड्डी आदिसे बना हुआ यह शरीर भी सुंदर नहीं दीखता।

जिस शरीरको चाहे पुष्ट करो या सुखाओ अंतमें भस्म (राख) की ढेरी अवश्य हो जाइगा, जो ऐसा है तो तपस्यासे शोषण करना ही ठीक है। क्योंकि अन्नादिसे

बहुत पुष्ट किया गया शरीर रोग आदि दुःखोंको देता है, इस लिये तपसे शोषण किया जायगा तो परलोकमें स्वर्गमोक्षादिके उत्तम सुख मिलेंगे। यदि इस अपवित्र शरीरसे केवलज्ञानादि पवित्रगुण सिद्ध होसकते हैं तो इस काममें अधिक विचारनेकी क्या बात है कर ही डालना चाहिये। ऐसा जानकर निर्मल ज्ञानियोंको शरीरजन्यसुखकी इच्छा छोड़ कर अनित्य शरीरसे शीघ्र ही अविनाशी मोक्षकी सिद्धि करनी चाहिये। बुद्धिमानोंको दर्शन ज्ञान तपरूपी जलसे, अपवित्रदेहके द्वारा सब कर्ममल हटाकर अपना आत्मा पवित्र करना चाहिये।

आस्रव भावना—जिस रागवाले आत्मामें रागादिभावोंसे पुद्गलोंका समूह कर्मरूप होकर आवे वह कर्मोंका आना ही आस्रव है, वह अनंत दुःखोंका देनेवाला है। जैसे छिद्रवाला जहाज पानीके आवनेसे समुद्रमें डूब जाता है उसी तरह यह जीव भी कर्मोंके आनेसे अनंतसंसाररूपी समुद्रमें गोते खाता है। उस आस्रवके कारण ये हैं—खोटे मतोंसे उत्पन्न अनर्थोंका घर ऐसा पांचतरहका मिथ्यात्व, बारह प्रकारकी अविरति, पंद्रह प्रमाद, महापापोंकी खानि पचीस कषायें और पंद्रह योग ये दुष्ट कारण कठिनाईसे दूर किये जाते हैं। मोक्षके इच्छक जीवोंको चाहिये कि वे सम्यक्चारित्र और महानतपरूपी पैंने हथियारोंसे कर्मास्रवके कारणरूपी वैरियोंको मार डालें। जो प्राणी

कर्मोंके आगमनके बड़े दरवाजेको ज्ञानादिसे नहीं रोक सकते उन पापियोंको कठिन तप करनेपर भी मोक्षसुख नहीं मिल सकता।

जिन्होंने ध्यान शास्त्राध्ययन और संयमादिसे अपने कर्मोंका आना रोक दिया उनका मनोवांछित मोक्षरूपी कार्य सिद्ध हो चुका, शरीरको दंड देनेसे क्या लाभ है। जबतक योगोंसे चंचल आत्माके कर्मोंका आगमन है तबतक मोक्ष नहीं होसकती परंतु उसके संबंधसे संसारकी परिपाटी ही बढ़ती जाती है। ऐसा समझकर हे योगियों तुम बड़े यत्न (तजवीज) से पहले सब अशुभ आस्रवोंको रोक रत्नत्रयादिके शुभध्यानसे अपने आत्माके स्वरूपको पाकर अपने मोक्ष होनेके लिये सब कर्मोंका नाशक ऐसे निर्विकल्प शुद्ध ध्यानसे कर्मास्रवको एकदम हटादो।

संवर भावना—जहां मुनीश्वर योग, व्रत, गुप्ति आदिसे कर्मास्रवके द्वारोंको रोकते हैं वही रोकना मोक्षका देनेवाला संवर है। कर्मास्रव रोकनेके इतने कारणोंको मुनीश्वर प्रयत्नसे सेवन करें। वे इसतरह हैं—तेरह प्रकारका चारित्र, दश तरहका धर्म, बारह भावना, बाईस परीषहोंका जीतना, निर्मल सामायिकादि पांच तरहका चारित्र, धर्म शुक्लरूप शुभ ध्यान और उत्तम ज्ञानाभ्यास। ये ही कर्मास्रवोंके रोकनेके उत्तम कारण हैं। जिन मुनीश्वरोंके प्रतिदिन कर्मोंका संवर तथा निर्जरा होती है उनके उत्तम

गुण अपनेआप ही प्रगट होजाते हैं। जो मुनि तपस्याका कष्ट सहते हुए भी पाप
कर्मोंका ही संवर करते हैं शुभकर्मोंका नहीं उन योगियोंको मोक्ष तथा निर्मल गुण
कैसे प्राप्त होसकते हैं। इसतरह संवरके गुणोंको जानकर हे मोक्षाभिलाषी हो तुम हमेशा
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्र और श्रेष्ठयोगोंसे सब तरह कर्मोंका संवर करो।

निर्जरानुप्रेक्षा—जो पूर्व किये कर्मोंका तपस्यासे क्षय करना ऐसी अविपाक
निर्जरा मोक्षके करनेवाली योगियोंके ही होती है। जो सब जीवोंके स्वभावसे ही
कर्मके उदय आनेपर निर्जरा होती है ऐसी सविपाक निर्जरा त्यागनी चाहिये जो कि
नवीन कर्मोंको करनेवाली है।

जैसे जैसे तप और योगोंसे अपने कर्मोंकी निर्जरा की जाती है वैसे २ मोक्ष रूपी
लक्ष्मी मुनीश्वरोंके निकट आती जाती है। जब सब कर्मोंकी निर्जरा पूरी हो जाती है।
उसी समय योगियोंके मोक्षलक्ष्मीका मेल हो जाता है।

वह निर्जरा सब सुखोंकी खानि है मोक्ष रूपी स्त्रीको देनेवाली है, अनंतगुणोंको
भी देनेवाली है, जिसकी तीर्थंकर व गणधर सेवा करते हैं, सब दुःखोंसे अलग है,
पुरुषोंको माताके समान हित करने वाली है, तीन लोक कर पूज्य है और संसारकी
नाशक है। इस तरह निर्जराके गुणोंको जानकर संसारसे डरे हुए भव्योंको तपस्यासे
कठिन परीसहोंको सहन करके सब यत्नोंसे मोक्षप्राप्तिके लिये लिये निर्जरा करनी चाहिये।

लोकभावना—जहां छह द्रव्य दीखनेमें आवें वह लोक है। वह लोक अधो मध्य ऊर्ध्व भागोंसे तीन भेदरूप, अकृत्रिम है यानी किसीका बनाया हुआ नहीं है और अविनाशी है। इस लोकके नीचले भागमें सातराजू[1] प्रमाण नरककी सात पृथ्वी हैं वे सब अशुभ रूप दुःखोंके देनेवाली हैं। उन पृथिवियोंके सब एक कम पचास ४९ पटल (खन) हैं और चौरासी लाख रहनेके विले हैं।

उन नरकोंके बिलोंमें जो पहले जन्ममें दुष्ट, महापापके करनेवाले, खोटे कामोंमें लीन, निंदनीक जुआ आदि सात विसनोंके सेवनेवाले महान् मिथ्याती हैं ऐसे जीव नरकगतिको प्राप्त हुए जन्म लेते हैं, वहांपर वे नारकी आपसमें वचनसे न कहा जाय ऐसा दुःख पाते हैं। छेदना अनेक तरहके भयंकर स्वरूप बनाना मारना कुचलना शूली आदिपर चढ़ाना तथा बहुत भूख प्यास आदि परीसहोंका सहना इत्यादि महान दुःखोंको पाते हैं। यह अधोलोकका कथन हुआ।

मध्यलोकमें जंबूद्वीपको आदि लेकर द्वीप और लवण समुद्रको आदि लेकर समुद्र असंख्यात हैं। पांच सुमेरु हैं और तीस कुलपर्वत हैं वीस गजदंत हैं एकसौ सत्तर विजयार्ध हैं अस्सी वक्षार पर्वत हैं चार इष्वाकार पर्वत हैं दस कुरुवृक्ष मानुषोत्तर पर्व-

---

१ राजूका प्रमाण बहुत है।

तके समान ऊंचे हैं–ये ढाई द्वीपमें हैं और जैनमंदिरोंसे शोभित हैं। एकसौ सत्तर बड़े बड़े देश और नगरी हैं मोक्षके देनेवालीं पंद्रह कर्मभूमियां हैं। पंचेंद्रियोंके सब भोगोंको देनेवालीं तीस भोगभूमियें हैं। महा नदियां तालाब कुंड वगैरः की संख्या अन्य शास्त्रोंसे जान लेना चाहिये। श्री आदि छह देवियें छह ह्रदोंपर रहती हैं। आठवें नंदीश्वर द्वीपमें अंजनगिरी आदिके ऊपर सब देवोंसे नमस्कार किये गये बावन जैनमंदिर हैं उनको मैं भी हमेशा नमस्कार करता हूं।

चंद्रमा सूर्य ग्रह तारे नक्षत्र ये असंख्याते ज्योतिषी देव मध्यलोकमें हैं। इनके सब विमानोंके मध्यमें सुवर्ण रत्नमयी अकृत्रिम जिन मंदिर हैं उनको पूजासहित मैं नमस्कार करता हूं। इस मध्य लोकके ऊपर सातराजू प्रमाण ऊर्ध्व लोकमें सौधर्म आदि सोलह कल्पस्वर्ग हैं उनके ऊपर नौ ग्रैवेयक नव अनुदिश पांच अनुत्तर–ये कल्पातीत स्वर्ग हैं। इनके विमानोंके त्रेसठ पटल (खन) हैं। इनके विमानोंकी संख्या चौरासी लाख सत्तावनै हजार तेवीस है। ये स्वर्गविमान सब इंद्रियसुखोंको देनेवाले हैं।

जो जीव पहले जन्ममें बुद्धिमान्, तप व रत्नत्रयसे भूपित, महान् धर्मके करनेवाले, अर्हतदेवके व निर्ग्रंथ गुरुके भक्त, जितेंद्री, श्रेष्ठ आचरणवाले हैं ऐसे जीव ही देवगतिको प्राप्त हुए स्वर्गमें जन्म लेते हैं और वहांपर अनेक तरहके महान् इंद्रिय सुखोंको

भोगते हैं । वह महान् इंद्रियसुख देवांगनाओंके साथ हमेशा अप्सराओंका नाच देखनेसे अपनी इच्छानुसार क्रीडा करनेसे गाना वगैरः सुननेसे भोगा जाता है । उस स्वर्गके ऊपर लोकके अग्रभागमें रत्नमयी मोक्षशिला है वह मनुष्य क्षेत्रके समान पैंतालीस लाख योजनकी है और बारह योजन मोटी है ।

उस शिलाके ऊपर सिद्ध भगवान् विराजमान हैं । वे सिद्ध भगवान् अनंत सुखमें लीन हैं, अनंत हैं, जिनका ज्ञान ही शरीर है दूसरा पुद्गल शरीर नहीं—ऐसे सिद्धोंको उनकी गति पानेके लिये मैं नमस्कार करता हूं । इस प्रकार इंद्रिय सुख दुःख वाले तीन लोकका स्वरूप जानकर सबसे रागको छोड़के लोकके अग्रभागमें जो मोक्षस्थान है उसको हे सुख चाहनेवाले भव्यो ! तुम रत्नत्रय तपस्यासे शीघ्र ही मन वचन कायके योगोंद्वारा सेवन करो । जो मोक्षस्थान अनंत गुण और अनंत सुखसे परिपूर्ण (भरा हुआ) है ।

बोधि दुर्लभ भावना—चार गतियोंमें हमेशा भटकते हुए और कर्म बंध करते हुए जीवोंको बोधि (भेदविज्ञान) का होना बहुत दुर्लभ (कठिन) है जैसे कि दरिद्रियोंको खजाना । उन चार गतियोंमेंसे पहले तो मनुष्य गतिका पाना ही कठिन है जैसे कि समुद्रमेंसे चिंतामणि रत्नका मिलना । उसमें भी आर्यक्षेत्र, उत्तमकुल,

दीर्घ आयु, पंचेंद्रियकी पूर्णता, निर्मल बुद्धि, मंद कषाय होना, मिथ्यात्वकी कमी, विनयादि श्रेष्ठ गुण इन सबका उत्तरोत्तर मिलना कठिन है। उनसे भी धर्मके करनेवाली देव गुरु शास्त्ररूपी सामग्रीका मिलना कठिन है, जैसे मनुष्योंको कल्पवेलि। उससे भी सम्यग्दर्शनकी शुद्धि ज्ञान चारित्र निर्दोष तप ये मिलने बहुत कठिन हैं।

इत्यादि सब सामग्रीको पाकर जो बुद्धिमान् मोहको नाश कर मोक्षकी सिद्धि करते हैं उन्हीं महान् पुरुषोंने बोधि (भेदज्ञान) को सफल किया। उस भेदविज्ञानको पाकर भी मोक्षकी सिद्धिमें जो प्रमाद करते हैं वे मानों जिहाजको छोकर संसारसमुद्रमें डूबते हैं। ऐसा समझकर विचारवान् पुरुषोंको मोक्षके साधनमें तथा समाधिमरणके समयमें महान् यत्न करना चाहिये।

धर्मानुपेक्षा—जो संसार समुद्रमें गिरते हुए जीवोंको पकड़कर अर्हंतादिपदमें अथवा मोक्षस्थानमें रक्खे वही उत्तम धर्म है। उस धर्मके उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन ब्रह्मचर्य ये दश लक्षण (चिन्ह) कहे गये हैं। धर्मके चाहनेवालोंको ये धर्मके बीज पालने चाहिये। क्योंकि इन्हींसे मोक्षका देनेवाला, खोटे कर्म और दुःखोंका नाशक तथा सब सुखोंका करनेवाला महान् धर्म उत्पन्न होता है। इसी प्रकार रत्नत्रयके पालनेसे मूल गुण उत्तर गुणोंके धारण करनेसे

और तपस्यासे मोक्षसुखका देनेवाला यतियोंका धर्म पाला जाता है। तीन लोकमें रहनेवाली उत्तम संपदाएं दुर्लभ होनेपर भी धर्मके प्रभावसे अपने आप प्रेमसे धर्मात्माओंके पास आजातीं हैं जैसे अपनी पतिव्रता स्त्री। धर्मरूप मंत्रसे खींचीं गई मुक्तिरूपी स्त्री धर्मात्माओंको निश्चयसे आपही आकर आलिंगन देती (चिपट जाती) है तो देवांगनाओंकी बात क्या है?।

लोकमें दुष्प्राप्य महामूल्य-जो कुछ सुखके साधन हैं वे सब धर्मके प्रसादसे पुरुषोंको जगह जगह मिल सकते हैं। धर्म ही मित्र पिता माता साथ चलनेवाला हितका करनेवाला है। धर्म ही कल्पवृक्ष, चिंतामणि और सब रत्नोंका खजाना है। वेही पुरुष इस लोकमें धन्य हैं जो प्रमादको छोड़ हमेशा धर्मको पालते हैं और वेही पुरुष सज्जनोंसे पूजा किये जाते हैं। जो मूर्ख धर्मके विना दिनोंको विता देते हैं वे घरके वोझेसे सींग रहित हुए बैल हैं ऐसा बुद्धिमानोंने कहा है। ऐसा जानकर बुद्धिमानोंको धर्मके विना एक समय भी वृथा नहीं जाने देना चाहिये; क्योंकि इस संसारमें आयुका भरोसा नहीं है।

इस प्रकार बुद्धिमानोंको हमेशा ऐसी भावनाओंको चित्तमें धारण करना चाहिये। जो भावनायें विकार रहित हैं तीव्र वैराग्यका कारण हैं सवगुणोंका खजाना हैं पापरागादिसे रहित हैं और जैनमुनि जिन भावनाओंकी सेवा करते रहते हैं। ये वारह भाव-

नाएं निर्मल हैं मोक्षलक्ष्मीकी माता हैं अनंतगुणोंकी खानि हैं संसारको छुड़ानेवाली हैं। इनको जो मुनीश्वर प्रतिदिन विचारते हैं उनको स्वर्ग मोक्षादिकी संपदा मिलना क्या कठिन हैं? कुछ भी नहीं। जो महावीर प्रभु पुण्यके उदयसे मनुष्य व देवोंकी अनेक तरहकी संपदाओंको भोगकर तीन जगत्का गुरु तीर्थंकर होकर कुमार अवस्थामें ही कर्मोंको नाश करनेवाले मोक्षके देनेवाले संसार शरीर भोगोंमें परम वैराग्यको प्राप्त हुआ ऐसे श्री महावीर भगवानको मैं भी दीक्षाकी प्राप्तिके लिये स्तुति व नमस्कार करता हूं ॥

इस प्रकार श्री सकलकीर्ति देवविराचित महावीर पुराणमें भगवान् महावीरको भावनाओंके चिंतवनका कहनेवाला ग्यारवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ ११ ॥

बारवां अधिकार ॥ १२ ॥

वीरं वीराग्रिमं नौमि महासंवेगभूषितम् ।
मुक्तिकांतासुखासक्तं विरक्तं कामजे सुखे ॥ १ ॥

भावार्थ——बलवानोंमें मुखिया, महान् वैराग्यसे शोभायमान, मोक्षके सुखमें लीन और कामजनित सुखसे विरक्त ऐसे महावीर प्रभुको मैं नमस्कार करता हूं ।

अथानंतर महावीर प्रभुके वैराग्य होनेके बाद सारस्वत आदित्य वन्हि अरुण गर्दतोय तुषित अव्याबाध और अरिष्ट ये आठ तरहके लौकांतिक देव अपने अवधिज्ञानसे उस प्रभुके तप कल्याणकका महोत्सव समय जानकर स्वर्गसे पृथ्वीपर उतर जगत्के गुरु महावीर प्रभुके निकट आते हुए । कैसे हैं वे देव ? पहले जन्ममें सब द्वादशांग श्रुतका अभ्यास किया है, वैराग्य भावनाओंको चिंतवन किया है चौदह पूर्व श्रुतके जाननेवाले, स्वभावसे बाल ब्रह्मचारी तप कल्याणका उत्सव करनेवाले निर्मल चित्तवाले एक भव (जन्म) मनुष्यका रखकर मोक्ष जानेवाले देवोंसे वंदनीक देवोंमें ऋषि (यति) हैं ।

बुद्धिमान् वे लोकांतिक देव कर्मरूपी वैरियोंके नाश करनेमें उद्यमी ऐसे महावीर

प्रभुको अत्यंत भक्तिसे नमस्कार कर तथा स्वर्गकी पवित्र जलादि द्रव्योंसे पूजकर वैराग्य-को उपजानेवाले वचनोंसे प्रार्थना व स्तुति करने लगे। हे देव तुम जगत्के स्वामी हौ, गुरुओंके भी महान् गुरु हौ ज्ञानियोंमें भी महान् ज्ञानी हौ समझदारोंको भी अच्छीतरह समझानेवाले हौ। इसलिए स्वयंवुद्ध और सब पदार्थोंके जाननेवाले आपको हम क्या समझावें ? क्योंकि आप स्वयं हम भव्यजीवोंको समझ देनेवाले हो इसमें कुछ भी संदेह नहीं। जैसे प्रकाशमान दीपक पदार्थोंका प्रकाश करता है उसीतरह तुम भी सब पदार्थोंको संसारमें प्रकाशित करोगे। परंतु हे देव हमारा ऐसा नियोग (फर्ज) ही है आपको संबोधन करनेमें स्तुतिके वहानेसे भक्ति प्रेरणा करती है क्योंकि आप तीन ज्ञान रूपी नेत्रवाले हौ हेय उपादेयके जाननेवाले हौ तुमको कौन शिक्षा देसकता है कोई नहीं। क्या सूर्यको देखनेके लिये दीपककी जरूरत होती है कभी नहीं। हे देव मोहरूपी वैरीके जीतनेका उद्योग करनेकी इच्छावाले तुमने अव सज्जनोंका बंधुकार्य किया है क्योंकि हे प्रभो आपसे ही दुर्लभ धर्म-रूपी जिहाजको पाकर कितनेही भव्यजीव दुस्तर संसारसमुद्रको तैर सकेंगे। कोई भव्य जीव आपके धर्मोपदेशसे रत्नत्रयको पाकर उसके फलके ऊंची सर्वार्थसिद्धिको जायँगे। कोई जीव आपकी वचनरूपी किरणोंसे मिथ्याज्ञानरूपी अंधेरेको हटाकर सब पदार्थोंको व मोक्षलक्ष्मीको देखेंगे। हे देव बुद्धिमानोंको तुमसे ही सब इष्ट पदार्थोंकी सिद्धि होगी। हे स्वामिन् स्वर्ग मोक्षसुखभी आपके प्रसादसे ही मिलसकेगा।

हे स्वामी मोहरूपी कीचडमें फँसे हुए भव्यजीवोंको तुम ही निश्चयसे हाथका सहारा दोगे क्योंकि आप ही धर्मतीर्थके प्रवर्तानेवाले हो। तुम्हारे वचनरूपी मेघसे वैराग्यरूपी अद्भुत वज्रको पाकर बुद्धिमान् भव्यजीव बहुत ऊंचे मोहरूपी पहाड़के सैकड़ों टुकड़े चूर्णरूप करदेंगे। आपके तत्वोपदेशसे पापी जीव तो पापोंको और कामीजन कामशत्रुको जल्दी ही नाश करेंगे, इसमें संदेह नहीं है। हे नाथ कोई तुमारे भक्त आपके चरणकमलोंके सेवनसे दर्शनविशुद्धि आदि सोलह भावनाओंको ग्रहण करके आपके समान हो जावेंगे।

हे प्रभो संसारसे द्वेष करनेवाले वैराग्यरूपी तलवारको रक्खे हुए आपको देखकर मोह और इंद्रियरूपी शत्रु अपने मरनेके भयसे बहुत कांप रहे हैं। क्योंकि हे उत्तम सुभट तुम दुर्जय परीषहरूपी योधाओंको लीलामात्रमें जीतनेको समर्थ हो। इसलिये हे धीर मोहइंद्रियरूपी वैरियोंके जीतनेमें तथा सब भव्योंके उपकारके लिये चारों घातिया कर्मोंरूपी वैरियोंके नाशमें उद्यम करो। क्योंकि अब यह उत्तम काल तपस्या करानेके लिये, कर्मोंके नाशके लिये और भव्योंको मोक्ष ले जानेके लिये आपके सामने आया हुआ है।

इसलिये हे स्वामी आपको नमस्कार है, गुणोंके समुद्र आपको नमस्कार है और हे जगत्के हित करनेवाले मोक्षरूपी सुंदर स्त्रीकी प्राप्तिके लिये उद्योगी आपको नमस्कार

है। अपने शरीरके भोगोंके सुखमें इच्छारहित आपको नमस्कार है मोक्षरूपी स्त्रीके सुखमें वांछासहित ऐसे आपको नमस्कार है। अद्भुत पराक्रमी वालब्रह्मचारी राज्य-लक्ष्मीसे विरक्त अविनाशी लक्ष्मी (मोक्ष) में रक्त तुमको नमस्कार है। योगियोंके भी गुरु होनेसे महान् गुरु आपको नमस्कार है। सब जीवोंके मित्र तुमारे लिये नमस्कार है और स्वयं जानकार ऐसे आपको नमस्कार है।

हे महान दानी इस स्तुतिसे इसलोक और पर लोकमें तपस्या और चारित्रकी सिद्धिके लिये आप अपनी सब शक्ति दो। हे नाथ वह शक्ति मोहरूपी शत्रुके नाश करने-वाली है। इसप्रकार जगत्‌के स्वामियोंसे पूजित ऐसे श्री महावीर प्रभुकी स्तुति और उनसे अपनी इष्टप्रार्थना करके अपना कर्तव्य पूरा कर परम पुण्यको उपार्जन कर सैंकडों स्तुति पूजाओंसे प्रभुके चरणकमलोंको वार २ नमस्कार कर वे देवर्षि लोकांतिकदेव अपने स्वर्गको गये।

उसीसमय देवोंसहित चारोंजातिके इंद्र घंटादिका शब्द होनेसे प्रभुका संयमोत्सव जानकर भक्तिसे अपनी इंद्राणियोंके साथ महान् विभूतिसे अपनी २ सवारियोंपर चढ़-कर अत्यंतउत्साहसे उस नगरमें आते हुए। देवोंकी सेना अपनी देवियों और सवारियों सहित उस नगरको वनको तथा रास्तेको चारों तरफसे घेरकर आकाशमें प्रसन्नतासे ठहरती हुई।

पहले वे सब इन्द्र मोक्षके स्वामी उन महावीर प्रभुको सिंहासनपर बैठाकर महान् उत्सवके साथ क्षीरसमुद्रके जलसे भरेहुए बहुत बड़े सोनेके घड़ोंसे गाना नृत्य बाजोंके साथ जयजय शब्दकरते स्नान कराते हुए। फिर वे इंद्र तीन जगत्के भूषण उस प्रभुको दिव्य कपड़े आभूषण और सुगंधित माला आदि द्रव्योंसे सजाते हुए। तब वे तीर्थंकर प्रभु, अपनी मोहवाली माता चतुर पिता बंधुओंको बड़े कष्टसे (कठिनाईसे) मीठे वचनोंसे सैकड़ों उपदेशोंसे तथा वैराग्यके करनेवाले वाक्योंसे अपनी दीक्षाके लिये समझाते हुए। उसके बाद संयमलक्ष्मीके सुखमें उद्यमी वे महावीर प्रभु खुशीके साथ लक्ष्मी और बंधुओंको छोड़कर दिव्य दैदीप्यमान इंद्रकर रचीहुई चंद्रप्रभा नामकी पालकीमें इंद्रके हाथके सहारेसे बैठकर दीक्षाके लिये प्रस्थान करते हुए। उस समय वे जगतके स्वामी सब आभूषणोंसे शोभित देवोंसे घिरे हुए तपरूपी लक्ष्मीके उत्तमवरके समान मालूम होने लगे।

पहले उस पालकीको भूमिगोचरी सात पैंड़ लेजाते हुए पीछे विद्याधर आकाशमें सात पैंड ले जाते हुए। उसके बाद धर्मानुरागी सब देव अपने कंधेपर रखकर उस प्रभुको आकाशमार्गसे ले जाते हुए। देखो इस प्रभुकी महिमाका कहांतक वर्णन करें कि जिसकी पालकीके लेजानेवाले इंद्रादिक हैं। उस समय देव हर्षित हुए चारों तरफसे फूलोंकी वर्षा करते हुए और वायुकुमार देव गंगाके कणोंको छिटकानेवाली वायुको चलाते हुए।

इस प्रभुके गमनके मंगलगान देव वंदीगण करते हुए और दूसरे देव गमन करनेके भेरी-वाजे वजाते हुए। इंद्रकी आज्ञासे वे देव ऐसी घोषणा करते हुए कि अब यह समय जगत्के स्वामीका मोहादि वैरियोंके जीतनेका है।

हर्षित हुए सुर असुर आकाशको घेरकर उस प्रभुके सामने ऐसा महान् शोर करते हुए कि हे प्रभो तुम जयवंत हो आनंदयुक्त होवौ और वृद्धिको पाओ। देवेंन्द्रोंके सैकड़ों दुंदुभि वाजे वजने लगे और अप्सरायें विचित्र वेष वनाके नाचने लगीं। किन्नरी देवियां मधुर आवाजसे मोहरूपी शत्रुके जीतनेका यशगान गाने लगीं जो कि सुखको देनेवाले हैं। इधर करोड़ों ध्वजा छत्र वगैरः दौड़ने लगे। उस प्रभुके आगे दिक्कुमारी देवियां मंगल अर्घ लेकर चलतीं हुईं।

इस प्रकार वह महावीर प्रभु नगरसे वनको जाता हुआ नगर वासियोंकर ऐसा प्रशंसा किया गया कि हे जगतगुरु सिद्धिके लिये जा शत्रुओंको जीत अपना कार्य कर आज मार्गमें तेरा कल्याण होवे और करोड़ों कल्याणोंका पात्र वन। कैसा वह प्रभु। जिसकी महिमा प्रगट हो रही है प्रकीर्णदेव पंखा कर रहे हैं मस्तकपर सफेद छत्रसे शोभायमान है और इंद्रोंसे सव तरफ घिरा हुआ है। अथानंतर कितने ही लोक उस प्रभुको भोगसंपदाको नहीं भोगके तपोवन जाते हुए देख आपसमें ऐसा कहने लगे। अहो

देखो बड़े अचंभेकी बात है कि यह जिनराज कुमारअवस्थामें ही कामरूपी वैरीको मारकर तपोवनको जा रहा है।

ऐसा सुनकर दूसरे लोग भी ऐसा कहने लगे कि हे भाइयो मोह इंद्रिय कामदेवरूपी वैरियोंको मारनेमें यह प्रभु ही समर्थ है दूसरा कोई नहीं हो सकता। उसके बाद कोई सूक्ष्म विचारवाले ऐसा बोले कि यह सब वैराग्यका ही महात्म है जो कि अंतरंग शत्रुओंका नाशक है। जिस वैराग्यके प्रभावसे स्वर्गके भोग और तीन जगतकी संपदाएं पंचेंद्रियरूपी चोरोंके मारनेके लिये छोड़ दी जातीं हैं। क्योंकि वैरागी ही चक्रवर्तीकी संपदाएं तृणके समान छोड़ सकता है परंतु रागी पुरुष दरिद्र अवस्थासे दुःखी होनेपर फूंसकी झोंपड़ी भी नहीं छोड़ सकता।

ऐसा सुनकर कोई ऐसा कहने लगे कि देखो यह कहावत सच है कि वैराग्यके विना मन निस्पृह नहीं हो सकता। इत्यादि वार्तालापोंसे कोई तो स्तुति करते हुए कोई पुरवासी नमस्कार करते हुए और तमाशा देखने लगे। इस प्रकार वह तीन जगतका स्वामी अनेक प्रकारके वचनालापोंसे प्रशंसा किया गया नगरके किनारे आ पहुंचा। अथानंतर वह जिनमाता अपने पुत्रके घरसे निकलनेपर मनमें अत्यंत शोककर घवराई हुई पुत्रके वियोगरूपी अग्निसे तपी हुई वेलिके समान मुरझागई। और दुःखित

हो बंधुओंके साथ रोती हुई विलाप करती हुई अपने पुत्रके पीछे गई। वह ऐसा विलाप करती हुई कि हे पुत्र तू मुक्तिमें रागी हुआ आज मुझे छोड़कर कहां गया। हे मेरे चित्तको प्यारे तुझे मैं आंखोंसे देखना चाहती हूं क्योंकि अब मैं तेरा वियोग क्षणभर भी नहीं सह सकती इस लिये तेरे विना मैं अब वहुत कैसे जीवूंगी। हाय अतिकोमलशरीरवाले तू दूर्जय परीषहोंको और घोर उपसर्गोंको कैसे जीत सकेगा।

हे पुत्र बड़ी कठिनाईसे वशमें आनेवाले इंद्रियरूप हाथियोंको, तीनलोकको जीतनेवाले कामदेवको और कषायरूपी वैरियोंको तू कैसे धीरपनेसे मार सकेगा। हा पुत्र वहुत छोटा बच्चा तू अकेला क्रूर मांसाहारी जीवोंसे भरे वड़े भयानक जंगलमें और गुफा आदिमें कैसे रह सकेगा। इस प्रकार विलाप करती हुई और रास्तेमें पैरोंको गेरते हुई। उस जिनमाताके पास महत्तरदेव आकर वोले, हे माता क्या इस जगतगुरूका हाल तू नहीं जानती, यह तीन जगतका स्वामी अद्भुत पराक्रमवाला तेरा पुत्र है। यह आत्मज्ञानी तीर्थराजा संसार समुद्रमें गिरनेसे पहले ही अपना उद्धार कर पीछे वहुत भव्योंका उद्धार निश्चयसे करेगा। जैसे रस्सीकी फांसीसे वंधा हुआ सिंह कभी दुर्जय नहीं होता उसी तरह हे देवी यह तेरा पुत्र भी मोहादि वंधनोंसे वंधा हुआ है जिसको संसारका किनारा पार करना वहुत निकट रहा है ऐसा जगतको उद्धार करनेमें समर्थ

तेरा पुत्र दीन (भिखारी) की तरह अशुभ घरमें कैसें प्रीति कर सकता है। और फिर भी यह तीन ज्ञानरूपी नेत्रवाला है इसलिये सब संसारको जानलिया है। इस कारण विरक्त चित्त हुआ इस मोहरूपी अंध कुएमें किस कारण गिरे (पडै)।

ऐसा जानकर हे महान् चतुर माता ! पापोंकी खानि ऐसे शोकको छोड़ो और तीन जगतको अनित्य जानकर घरमें जाकर धर्मका सेवन करो। क्योंकि इष्टके वियोगसे मूर्ख जन ही शोक करते हैं और बुद्धिमान् जन संसारसे भयभीत होकर सब अनिष्टोंका नाशक ऐसे धर्मका सेवन करते हैं। इत्यादि उन देवोंके वचन सुनकर वह जिनमाता सचेत हुई विवेकरूपी किरणोंसे चित्तके शोकरूपी अंधकार को शीघ्र हटाकर और अपने हृदयमें धर्मको धारणकर संसारसे भयभीत हुई अपने कुटुंबियों और नोकरोंके साथ अपने महलको गई।

वे जिनेन्द्र महावीर प्रभु भी कुछ निकट ही देवोंके साथ मनुष्योंके मंगल गानेके आरंभमें ही संयम धारण करनेके लिये खंका नामके बड़े वनमें आये। वह वन अच्छी छायावाला फल सहित रमणीक ध्यान अध्ययनको वृद्धि देनावाला था। वहां एक चंद्रकांतमयी पवित्र शिलापर वे महावीर स्वामी अपनी पालकीसे उतरकर बैठ गये। कैसी है वह शिला। जो शिला देवोंने पहले आकर बनादी है गोल है वृक्षोंकी छायासे ठंडी है

चंदनके घिसे हुए जलसे जिसपर छींटे दिये गये हैं इंद्राणीके हाथसे रत्नोंके चूर्णसे सांतियां वनाये गये हैं धुजा और मालाओंसे जिसका कपड़ेका मंडप शोभायमान है धूपका धुआं जिसके चारों तरफ है जिसके निकट मंगल द्रव्य रक्खे हुए हैं।

वे महावीर प्रभु भी शरीरादिसे इच्छा रहित वैरागी और मोक्षके साधनेमें इच्छावाले हुए मनुष्योंका कोलाहल (शोर) शांत होनेपर उस शिलापर उत्तरको मुखकर वैठे हुए शत्रु मित्रादि सव जगहपर उत्तम समान भावको चिंतवन करते हुए। वे महावीर स्वामी क्षेत्रादि दश चेतन अचेतनरूप बाह्य परिग्रहोंको, मिथ्यात्व आदि चौदह अंतरंग परिग्रहोंको तथा कपड़े आभूषण माला आदिको छोड़ते हुए। और मनवचनकायसे शुद्ध हुए शरीरादिमें निस्पृह और आत्मसुखमें इच्छावाले होते हुए।

उसके वाद सिद्धोंको नमस्कार कर पल्यंकासन लगाके मोहकी फांसीके समान वालोंको पांच मुष्टियोंसे लोंच करते (उखाड़ते) हुए। वे महावीर जिनेश्वर मन वचन कायसे सव पापक्रियाओंसे निवृत्त होकर अट्ठाईस मूलगुणोंको पालते हुए। आतापनादियोगसे उत्पन्न श्रेष्ठ उत्तर गुणोंको तथा महाव्रत समिति गुप्तिको धारण करते हुए वे महावीर प्रभु सवमें समताको प्राप्त होकर सव दोषों रहित सामायिक संयमको स्वीकार करते हुए। जो संयम गुणोंकी खानि और सवमें उत्तम है।

इस प्रकार वे महावीर स्वामी मगसिर कृष्णा दशमीको सायंकाल हस्त और उत्तरा नक्षत्रके मध्यभागमें शुभ मुहूर्तमें मोक्षरूपी कामिनीकी उत्तम सखी और दुर्लभ ऐसी जिन दीक्षाको अकेले ग्रहण करते हुए । भगवान् महावीरके केशोंको मस्तकमें वहुत कालतक रहनेसे पवित्र हुए समझकर वह इंद्र अपने हाथसे प्रकाशमान रत्नोंकी पिटारीमें रखकर और पूजाकर दिव्यवस्त्रसे ढंककर बडे उच्छवके साथ लेजाकर क्षीरोदधि समुद्रके स्वभावसे शुद्ध जलमें डालते हुए । देखो जिनेश्वरके आश्रयसे वे काले अचेतन केश ऐसी पूजा पाते हुए तो साक्षात् जिनेश्वरसे पुरुषोंको क्या इष्टसिद्धि नहीं होसकती सब हो सकती है ।

इस संसारमें जिन भगवानके चरणकमलोंके आश्रयसे जैसे यक्ष सन्मान पाते हैं उसीतरह अर्हंत प्रभुका सहारा लेनेवाले नीच पुरुष भी पूजे जाते हैं यह वात ठीक ही है । अथानंतर उस समय वह महावीर प्रभु दिगंवर स्वरूपको धारता तपे हुए सोनेके समान शरीरवाला स्वाभाविक कांति दीप्ति आदि तेजका पुंज सरीखा शोभता हुआ । वाद संतुष्ट हुए इंद्र उस महावीर परमेष्ठीके गुणोंकी स्तुति करते हुए । हे देव इस संसारमें तुम ही परमात्मा हो जगतके महान् गुरु तुम ही हो तुम ही गुणोंके समुद्र हो जगतके स्वामी हो तुमने ही शत्रुओंको जीत लिया है अति निर्मल तुम ही हो ।

हे स्वामी जो असंख्याते आपके गुण श्री गणधरादिदेव भी नहीं वर्णन करसकते तो हम सरीखे अल्प बुद्धि कैसे उन गुणोंकी तारीफ कर सकते हैं ऐसा समझकर हमारा मन आपकी स्तुतिकरनेमें झूलेकी तरह झोके लेरहा है। तौभी हे ईश आपके ऊपर हमारी एक निश्चलभक्ति है वही आपकी स्तुति करनेमे हमें बुलवा रही है। हे योगीश बाह्य और अंतरंगके मैलके नाश होनेसे तेरे निर्मल गुणोंके समूह आज मेघरहित किरणोंकी तरह प्रकाशमान होरहे हैं।

हे स्वामिन् आद्यंत दुःखसे मिले हुए चंचल विषयजन्य सुखको छोड़कर आप उत्कृष्ट आत्मीक सुखकी इच्छा करते हैं सो आपको निरीह (इच्छा रहित) कहना कैसे बन सकता है। अत्यंत दुर्गंधी ऐसा स्त्रीके खोटे शरीरमें राग (प्रीति) छोड़कर मोक्षरूपी स्त्रीमें महान् प्रेमकरनेवाले आपको रागरहित वीतरागी कैसे कहाजासकता है। ये निंदास्तुति हैं। रत्ननामवाले पत्थरोंको छोडकर सम्यग्दर्शनादि महान् रत्नोंको धारण करनेवाले ऐसे आपके लोभका त्याग कैसे कहा जासकता है। क्षणविनाशी, पापको देनेवाला राज्य छोड़कर नित्य और अनुपम तीन जगतके राज्यकी इच्छा करनेवाले आपका मन निस्पृह कैसे हो सकता है।

हे जगत्के प्रभु चंचल लक्ष्मीको छोडकर उत्तम लोकाग्रपर रहनेवाली मोक्षलक्ष्मीकी इच्छा करनेवाले आपके इस संसारमें आशा रहितपना कैसे कहा जा सकता है ? । हे देव ! कामदेवरूपी शत्रुको ब्रह्मचर्यरूप बाणों द्वारा मार देनेसे उसकी स्त्री रतिको विधवा कर देनेसे आपके हृदयमें कृपा कैसे कही जा सकती है । हे नाथ ! ध्यानरूपी महान् बाणोंसे मोहराजाके साथ सब कर्मरूपी वैरियोंको मार देनेसे आपके दिलमें दया कहां है ? । हे देव ! अपने थोड़ेसे बंधुओंको छोड़कर अपने गुणोंके प्रभावसे जगत्के साथ परम बंधुपना करनेसे आपको बंधुरहित कैसे कहसकते हैं ? । हे चतुर सर्पके फणके समान भोगोंको छोडकर शुक्लध्यानरूपी अमृतको पीनेसे आपके प्रोषधव्रत कैसे होसकता है ? ।

हे स्वामिन् ! जिसने जगत्का ताप शांत कर दिया है और बुद्धिमानोंकर पूजित ऐसी तेरी यह पवित्र महान् दीक्षा पुण्यधाराके समान हम भव्यजीवोंकी रक्षा करो । हे देव जगत्को पवित्र करनेमें समर्थ ऐसी शुद्ध दीक्षाको मन वचन कायकी शुद्धिसे धारण करनेवाले तथा मोक्षकी इच्छावाले आपको नमस्कार है । शरीर आदिके सुखमें निस्पृही मोक्षके मार्गमें वांछावाले तपरूपी लक्ष्मीसे प्रीति करनेवाले और दोनोंतरहके परिग्रहोंको छोडनेवाले आपको नमस्कार है ।

हे ईश ! सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप रत्नत्रयके अमूल्य भूषणोंसे भूषित और अचेतन भूषणोंरहित तुमको नमस्कार है । सब वस्त्रों रहित दिशारूपी वस्त्रको धारण करनेवाले महान् ईश्वरपनाको साधनेके लिये उद्यमी ऐसे आपको नमस्कार है । सब परिग्रहसे रहित गुणसंपदासे युक्त मुक्तिको महान् प्यारे ऐसे हे जिनेश्वर तुमको नमस्कार है । हे नाथ ! अतींद्रिय सुखमें मन लगानेवाले वैरागी उपवास करनेवाले परंतु शुक्लध्यानरूपी अमृतका भोजन करनेवाले ऐसे आपको नमस्कार है ।

हे देव दीक्षित चार ज्ञानचक्षुके धारण करनेवाले स्वयंबुद्ध तीर्थेश बालब्रह्मचारी आपको नमस्कार है । कर्मरूपी वैरीकी संतानको नाश करनेवाले गुणोंके समुद्र और उत्तम क्षमा आदि शुभलक्षणोंवाले आपको नमस्कार है । हे देव जगत्की आशाको पूरण करनेवाले ऐसे आपके स्तवन करनेसे जगत्की संपदा हम नहीं लेना चाहते हैं किंतु बालअवस्थामें तपदीक्षा स्वीकार करनेवाली ऐसी आपकीसी शक्ति हमको भी मुक्तिके लिये मिलै । इस प्रकार देवोंके इंद्र उस महावीरप्रभुको पूजकर और नमस्कार कर स्तुति नमस्कार पूजा आदिसे अनेक प्रकारका पुण्य कमाते हुए ।

अथानंतर वह महावीर प्रभु निश्चल अंग हुआ कर्मरूपी शत्रुओंका नाश करनेवाले योगको रोकनेरूप ध्यान रखके पत्थरकी मूर्तिके समान बैठता हुआ । उसी

समय उस ध्यानसे उत्तम चौथा मनःपर्ययज्ञान उस विभूके प्रगट हुआ जो कि निश्चयसे केवलज्ञान होनेका सूचक है। इस प्रकार विकाररहित हुआ वह महावीर प्रभु मनुष्य देवगतियोंमें होनेवाली राज्यभोग वगैरः संपदाको बालअवस्थामें ही तृणके समान छोड़ शीघ्र ही दीक्षाको धारण करता हुआ। ऐसे अनुपम गुणधारी श्रीवीरनाथको मैं स्तुति व नमस्कार करता हूं।

इस प्रकार श्री सकलकीर्ति देव विरचित महावीर पुराणमें भगवानके दीक्षा
कल्याणको कहनेवाला बारवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १२ ॥

तेरवां अधिकार ॥ १३ ॥

निस्संगं विगताबाधं मुक्तिकांतासुखोत्सुकम् ।
ध्यानारूढं महावीरं वंदे वीरगुणाप्तये ॥ १ ॥

भावार्थ—परिग्रहरहित बाधारहित मोक्षस्त्रीके सुखको चाहनेवाले और ध्यानमें लीन ऐसे श्री महावीर प्रभुको उनके गुणोंकी प्राप्तिके लिये मैं नमस्कार करता हूं ॥

अथानंतर वे महावीर प्रभु छह महीने आदि अनशन तप करनेमें अत्यंत समर्थ थे तौ भी दूसरे मुनीश्वरोंकी चर्या मार्गकी प्रवृत्तिके दिखानेके लिये पारणा करनेकी बुद्धि करते हुए। जो पारणा (उपवासके अंतमें भोजन करना) शरीरकी स्थिति रखने वाला है। बादमें वे ईर्यापथ शुद्धिसे चलते हुए ऐसा कुछ विचार करते हुए कि यह निर्धन है या धनवान् इसके आहार शुद्ध है या नहीं। अपने चित्तमें तीन प्रकार वैराग्य चिंतवन करते हुए वे प्रभु दानियोंको संतोष करते हुए स्वयं शुद्ध आहार ढूंढते हुए। न तो बहुत धीरे चलना और न एकदम तेजीसे चलना इस प्रकार पैर रखते हुए क्रमसे वे महावीर प्रभु कूल नामके रमणीक नगरमें प्रवेश करते हुए। वहां कूल राजा

उत्तमपात्र श्री जिनदेवको देख कठिनाईसे पाये हुए खजानेकी तरहं मनमें अत्यंत आ-
नंद पाता हुआ। फिर वह धर्मबुद्धि राजा तीन प्रदक्षिणा दे पृथ्वीपर पांच अंग रखके प्रणाम
कर तिष्ठ तिष्ठ (विराजो विराजो) ऐसा खुशीके साथ कहता हुआ। फिर उन प्रभुको
ऊंचे पवित्र स्थानपर वैठाकर उनके चरण कमलोंको शुद्ध जलसे धोकर उस प्रक्षालित
जलको सब अंगमें लगाकर वह राजा जलादि आठ तरहकी प्रासुक द्रव्यसे पूजा करता
हुआ। फिर ऐसा विचार कर कि 'आज मैं पुण्यात्मा हुआ! सुपात्रके लाभसे अब मेरा
गृहस्थपना सफल हुआ' वह राजा मनकी शुद्धि करता हुआ।

हे! देव हे नाथ! आज मैं धन्य हूं आपने अपने आगमनसे यह घर अतिपवित्र कर
दिया ऐसा कहकर वचन शुद्धि करता हुआ। आज मेरा शरीर पवित्र हुआ और पात्र-
दानसे ये श्रेष्ठ हाथ पवित्र हुए--ऐसा मानकर वह राजा काय शुद्धि करता हुआ। कृत
आदि दोषोंसे रहित प्रासुक अन्नसे होनेवाली निर्मल एषणा (आहार) शुद्धि करता
हुआ। इस प्रकार वह राजा पुण्योपार्जनके कारण नव प्रकार की विधिसे उसी समय
महान पुण्यका उपार्जन करता हुआ।

इस समय बहुत दुर्लभ यह पात्रदान मेरे भाग्यसे संपूर्णपनेको प्राप्त होवे ऐसा
विचारकर दानमें परम श्रद्धा करता हुआ वह राजा अपनी शक्ति प्रगट करके पात्र-

दानमें उद्योग करता हुआ और उस दानसे होनेवाली रत्नवृष्टि कीर्ति आदिको त्यागता हुआ । सेवा आज्ञा आदिसे उस प्रभुकी भक्तिमें लगा हुआ वह महाराज धर्मसिद्धिके लिये अन्य सब कार्योंको छोडता हुआ । वह राजा ऐसा जानता हुआ कि यह प्रासुक आहार है यह दानका उत्तम समय है इस विधिसे दान देना चाहिये यह संयमी बहुत उपवासोंके क्लेश कैसे सहता होगा, इस प्रकार उत्तमा क्षमासे परम कृपाको धारण करने-वाला वह राजा ऐसा विचारता हुआ ।

इस प्रकार महान् फलको करनेवाले उत्तम दाताके गुणोंको वह बुद्धिमान् राजा स्वीकार करता हुआ । फिर वह राजा हितके करनेवाले उत्तमपात्रको मन वचन कायकी शुद्धिसे विधिपूर्वक भक्तिसे खीरका भोजन देता हुआ । वह आहार प्रासुक स्वादिष्ट निर्दोष तपकी वृद्धि करनेवाला और भूखप्यासको शांत करनेवाला था । उस समय उस दानसे खुश हुए देव पुण्योदयसे राजाके आंगनमें आकाशसे रत्नोंकी वर्षा करते हुए । अमूल्य रत्नोंकी मोटी धाराके साथ २ फूल और सुगंध जलकी भी वर्षा की । उसीसमय आकाशमें दुंदुभी बाजोंका शब्द बहुत जोरसे हुआ ऐसा मालूम होने लगा मानों दाताके महान् पुण्य और यशको कह रहा हो ।

उस समय देव जय जय आदि शब्दोंके साथ ऐसे श्रेष्ठ वचन कहते हुए कि हे प्राणियो! यह उत्तमपात्र श्रीमहावीर प्रभु दाताको संसार समुद्रसे तारनेवाला है और यह दाता भी महान् धन्य है कि जिसके घरमें यह जिनराज आया। यह उत्तम दान पुरुषोंको स्वर्गमोक्षका कारण है। देखो इस लोकमें जैसे पात्रदानके प्रभावसे अमूल्य करोडों रत्नोंकी प्राप्ति होती है और निर्मल यश फैलता है उसीतरह परलोकमें भी अमूल्य संपदायें स्वर्ग और भोगभूमिमें मिलतीं हैं जो कि महान् भोगोंके देनेवालीं हैं। उस वर्षाके होनेसे राजमहलका आंगन रत्नोंकी ढेरियोंसे भरगया। उसे देखकर कोई बुद्धिमान आपसमें ऐसा कहने लगे कि दानका उत्तम फल यहांपर भी देखो कि जिसके प्रभावसे यह राजमंदिर रत्नोंकी वर्षासे पूरित हो रहा है।

यह वात सुनकर कोई बुद्धिमान् कहने लगे कि यह तो थोडा फल है किंतु दानके प्रभावसे स्वर्ग और मोक्षके सुख मिल सकते हैं। उनके वचन सुनकर और दानका फल प्रत्यक्ष आखोंसे देखकर कितने ही जीव स्वर्गलक्ष्मीके भोगोंके देनेवाले पात्रदानमें बुद्धि करते हुए। उस दानके समय वीतरागी श्रीमहावीर तीर्थंकर रागादिकको दूरसे छोड़कर पाणिपात्रसे खड़े हुए शरीरकी स्थितिके लिये वह क्षीरका आहार लेकर दानके फलसे उसका घर पवित्र करके वनको गये। उस उत्तमदानसे राजा भी

अपने जन्मगृहको और धनको महान् पुण्यका करनेवाला तथा सफल समझता हुआ। उस दानकी अनुमोदना (मन वचन कायसे खुशी जाहिर करने) से और दाता व पात्रकी प्रशंसासे बहुतसे लोक भी उसीके समान पुण्यको उपार्जन करते हुए। तदनंतर वह जिनेश महावीर भी बहुत देश तथा अनेक नगर ग्राम वनोंमें हवाकी तरह भ्रमता हुआ। जो महावीर प्रभु ममतारहित हुआ रातिको सिंहके समान अकेला ध्यानादिकी सिद्धिके लिये पहाड़ गुफा स्मशान तथा निर्जनवनमें रहता था। और छठे आठवें उपवासको आदि लेकर छह महीनातकके अनशन तपको करता हुआ।

कभी पारणाके दिन अवमौदर्य तप करता था कभी लाभांतरायके अजमानेके लिये और पापोंकी हानिके अर्थ चतुष्पथादिकी प्रतिज्ञा करके वृत्तिपरिसंख्यान तप पालता हुआ। कभी निर्विकार करनेवाले रस त्याग तपको कभी उत्तमध्यानके लिये वनादिकमें विविक्त शय्यासन तपको करता हुआ। वर्षाऋतुमें वे महावीर प्रभु झंझावातसे घिरे हुए वृक्षके नीचे धैर्यरूपी कंबल ओढे हुए महान समाधिको धारण करते हुए। शीतकालमें चौरायेपर व नदीके किनारे ध्यान लगाते हुए। और जिसने वृक्षोंको जला दिया है ऐसी ठंडको ध्यानरूपी अग्निसे जलाते हुए।

गरमीके दिनोंमे सूर्यकी तेजकिरणोंसे गर्म ऐसी पर्वतकी शिलापर ध्यानरूपी अमृतज-
लका छिड़कावं करते हुए ठहरते थे, इत्यादि कायक्लेश तपको शरीरके सुखकी हानिके लिये
सेवन करते हुए । इस प्रकार अत्यंत कठिन छह तरहका बाह्य तप पालते हुए । प्राय-
श्चित्तादि तपकी आवश्यकता न होनेसे वे महावीरस्वामी प्रमादरहित और जितेंद्री हुए
मनको विकल्परहित करके कायोत्सर्गकर कर्मरूपी वैरियोंका नाश करनेके लिये अपनी
आत्मामें ही ध्यान लगाते हुए । जो ध्यान सवकर्मरूपी वनके जलानेको आगके समान है
और परम आनंदका कारण है । उस आत्मध्यानके प्रभावसे सब आस्रवोंको रोकनेसे
संपूर्ण अभ्यंतर तप तो पहले ही हो जाता है । इस प्रकार वे महावीर प्रभु अपनी साम-
र्थ्य प्रगट कर बारह उत्तम तपोंको सावधानीसे बहुतकालतक पालते हुए । वे महावीर
प्रभु क्षमागुणकरके पृथिवीके समान निश्चल हुए और प्रसन्न स्वभावसे निर्मल जलके स-
मान दीखने लगे । वे स्वामी दुष्टकर्मरूपी वनको जलानेमें जलती हुई आगके समान
होते हुए और कषाय तथा इंद्रियरूपी वैरियोंको मारनेके लिये दुर्जय शत्रुके समान होते
हुए । वे प्रभु धर्मबुद्धिसे महान् धर्मके करनेवाले और इस लोक परलोकमें सुखके समुद्र
ऐसे उत्तम क्षमा आदि दस लक्षणोंको सेवन करते हुए ।

अतोल पराक्रमवाले वे वीर प्रभु अपनी शक्तिसे भूख प्यास आदिसे होनेवाली

कठिन परीषहोंको तथा वनके सब उपद्रवोंको जीतते हुए। बुद्धिमान् वे स्वामी भावनासहित और अतीचाररहित पांच महाव्रतोंको महान् ज्ञानके लिये पालते हुए। वे प्रभु पांच समिति और तीन गुप्ति इस तरह आठ प्रवचन माताओंको प्रतिदिन पालते हुए, जो कि कर्मरूपी धूलिके नाश करनेवाली हैं। वे विवेकी स्वामी सब उत्तर गुणोंके साथ सब मूलगुणोंको आलसरहित होके पालते हुए दोषोंको स्वप्नमें भी नहीं आने देते थे। इत्यादि परम चारित्रसे शोभित वे देव महावीर पृथ्वी पर विहार करते हुए उज्जयिनी नगरीके अतिमुक्त नामके स्मशानमें आपहुंचे।

उस भयानक स्मशानमें वे महावीर देव मोक्षकी प्राप्तिके लिये कायसे ममता छोड़के प्रतिमायोग धारण कर पर्वतके समान निश्चल होके ठहरते हुए। परमात्माके ध्यानमें लीन सुमेरुपर्वतकी चोटीके समान ऐसे श्रीमहावीर जिनेंद्रको देखकर वह पापी स्थाणु नामका अंतिम रुद्र (महादेव) दुष्टपनेसे उनके धैर्यके सामर्थ्यकी परीक्षा करनेको उपसर्ग करनेकी बुद्धि करता हुआ, क्योंकि जिनेन्द्रके पूर्वकृत कुछ पापका उदय उसी समय आया था। वह पापी रुद्र मोटे पिशाचोंके अनेकरूप रखकर अपनी मंत्रविद्यासे जिनेन्द्रको ध्यानसे चलायमान करनेका उद्यम करता हुआ। वह रौद्र रातके समय ललकारते हुए आंखें फाड़कर देखते हुए एकदम दांत फाडकर हंसते हुए अनेक लयोंसे और बाजोंसे नाचते

हुए मुंह फाडते हुए और हाथोंमें पेनैं हथियार लिये हुए अनेक स्वरूपोंसे उस गुरुके ध्यानको नाश करनेवाला बडा उपसर्ग करता हुआ।

ऐसे उपद्रव होनेके समय मेरुके शिखरके समान वह महावीर प्रभु उन करोड़ों उपद्रवोंके होनेपर भी ध्यानसे थोडासा भी चलायमान नहीं होता हुआ। उसके बाद वह पापी रुद्र श्रीजिनस्वामीको निश्चल जानकर फिर वह धूर्त सर्प सिंह हाथी हवा अग्नि आदि दूसरे कारणोंसे तथा भयानक वचनोंसे निर्बलोंको भय देनेवाला ऐसा महान् घोर उपसर्ग श्रीमहावीर प्रभुको करता हुआ। तौभी वह महावीर देव अपने स्वरूपसे कुछ भी चलायमान नहीं हुआ किंतु (बल्कि) अपने आत्मध्यानको पकड़ सुमेरुपर्वतकी तरह निश्चल रहा।

उसके बाद पापोंके कमानेमें चतुर वह दुष्ट उन महावीर प्रभुको धीरतावाले और महा बुद्धिमान् जानकर अन्यभी परीसहायें देता हुआ। कभी हथियार हाथमें लिये हुए डरावने दुस्सह निर्बलोंको भय देनेवाले अनेक तरहके भीलोंके आकारोंसे उपसर्ग करता हुआ। इत्यादि अनेक कठिन उपद्रवोंसे घिरा हुआ भी वह जगत्का स्वामी था तौभी पर्वतके समान निश्चल मनमें थोडासा भी खेद नहीं करता हुआ। आचार्य कहते हैं कि कभी अचलपर्वत चलायमान हो जावें तो हो जाओ परंतु योगियोंका चित्त सैंकड़ों

घोर उपद्रवोंसे थोडासा भी चलायमान नहीं होता। वे ही पुरुष इस लोकमें धन्य हैं कि जिनका चित्त ध्यानमें ठहरा हुआ सैंकडों घोर उपद्रवोंसे थोडा भी विकाररूप नहीं होता।

उसके बाद वही रुद्र निश्चलस्वरूपवाले महावीरको जानकर लज्जित हुआ इस तरह स्तुति करने लगा। हे देव इस संसारमें तुम ही बलवान् हो जगतके गुरु हो वीरोंमें मुख्य हो इसीसे महावीर हो। महाध्यानी जगतके नाथ सब परीषहोंके जीतनेवाले वायुके समान संगरहित वीर, कुलपर्वतकी तरह निश्चल क्षमागुणसे पृथ्वीके समान, चतुर, समुद्रके समान गंभीर, निर्मल जलके समान प्रसन्नचित्त कर्मरूपी वनके लिये अग्निके समान हो। हे नाथ! तुम ही तीन जगतमें वर्धमान हो श्रेष्ठबुद्धि होनेसे सन्मति हो तुम ही महाबली व परमात्मा हो। हे स्वामी निश्चलस्वरूपके धारण करनेवाले और प्रतिमायोगके रखनेवाले परमात्मास्वरूप आपके लिये हमेशा नमस्कार है।

इस प्रकार उस महावीर प्रभुकी वारंवार स्तुति करके तथा चरणकमलोंको नमस्कार कर अति महावीर ऐसा नाम रखकर मत्सरता छोड़ अपनी प्यारी स्त्री पार्वतीके साथ नाचकर आनंदमें भरा हुआ तथा चारित्रसे चलायमान वह रुद्र अपने स्थानको गया। देखो अचंभेकी बात है कि इस संसारमें दुर्जन भी महान पुरुषोंको योगजन्य

महान् साहसको देखकर बहुत खुश होते हैं तो सज्जनोंका कहना ही क्या है उनका तो स्वभाव ही है।

अथानंतर चेटक राजाकी चंदना नामकी पुत्री महान् सती वनक्रीडामें लीन हुईको कोई कामसे पीडित पापी विद्याधर देखकर किसी उपाय (तजवीज) से शीघ्र ले जाता हुआ। पीछे अपनी स्त्रीके डरसे बडे भारी जंगलमें उस सतीको छोडता हुआ। वह महासती अपने पापकर्मका उदय जानकर वहींपर पंच नमस्कार मंत्र जपती हुई धर्मध्यानमें लीन होती हुई। उस जगह कोई भीलोंका स्वामी उसे देख धनकी इच्छासे वृषभसेन सेठके पास ले जाकर सौंप देता हुआ।

सेठकी सुभद्रा नामकी स्त्री उस सतीकी रूपसंपदाको देख यह मेरी सौत होगी ऐसी शक मनमें रखती हुई। उसके वाद वह सेठानी उस सतीके रूपको विगाड़नेके-लिये पुराने कोदोंका भात आरनालसे मिला हुआ हमेशा सरवेमें रखकर चंदना सतीको देती थी और फिर लोहेकी सांकलसे वांध देती थी तौ भी वह बुद्धिमती सती धर्मकी भावना नहीं छोड़ती थी। किसी दिन वत्सदेशकी उसी कौशांवी नगरीमें रागसे रहित वे महावीर प्रभु कायकी स्थिरताके लिये आहारार्थ प्रवेश करते हुए। ऐसे उत्तम पात्र प्रभुको देखकर वह सती वंधन रहित होगई और पुण्यके उदयसे पात्रदानके लिये वह

चंदना प्रभुके पास गई । माला भूषण पहरे हुए वह सती नमस्कार कर विधिसहित उन प्रभुको पड़गाती हुई ।

उसके शीलकी महिमासे कोदोंका भात सुगंधित चावलोंका भात हो गया और मट्टीका सरवा सोंनेका वासन हो गया । देखो पुण्यकर्म ही पुरुषोंके न होनेवाली वस्तुको उसी समय तयार कर देता है चाहें वे कितनी ही दूर हों ऐसे मनोवांछित कार्योंको सिद्ध कर देता है इसमें कुछ शक नहीं समझना । उसके बाद वह सती नव प्रकारकी पुण्यरूप परम भक्तिसे खुशीके साथ उस प्रभुको आहार दान देती हुई । उस समयके उपार्जन किये हुए महान् पुण्यसे वह सती रत्नवर्षा आदि पांच आश्चर्य करनेवाली वस्तुओंको पाती हुई और अपने कुटुंवियोंको पाती हुई । हे प्राणियो देखो उत्तम दानसे क्या क्या वस्तु नहीं मिलसकती सभी मिलसकती है । उस चंदना सतीका चंद्रमाके समान निर्मल यश उत्तम दानके प्रभावसे सब दुनियांमें फैलगया और बंधुओंसे मेल भी हो गया ।

अथानंतर वे महावीर भगवान् भी छद्मस्थ अवस्थामें मौनी होकर विहार करते हुए वारह वर्ष विताकर जूंभिका गांवके बाहर मनोहर वनमें ऋजुकूला नदीके किनारे महान् रत्नोंकी शिलापर शालवृक्षके नीचे प्रतिमायोग धारकर षष्ठोपवासी होके ज्ञानकी

सिद्धिके लिये ध्यान करते हुए ॥ अठारह हजार शीलरूपी बख्तर पहने हुए चौरासी लाख गुणोंसे भूषित महाव्रत अनुप्रेक्षा शुभ भावनारूपी वस्त्रसे सजे हुए संवेगरूपी गजराजपर पर चढे हुए चारित्ररूपी युद्धभूमिमें खड़े रत्नत्रयरूपी महाबाणोंको धारण किये हुए तपरूपी धनुषको हाथमें लिये ज्ञान दर्शनरूपी फणिच चढाए हुए गुप्ति आदिसेनासे घिरे तथा अन्य भी सामग्रीसे शोभायमान महान् योधा वे महावीर प्रभु बहुत दुष्ट कर्मरूपी शत्रुओंको मारनेके लिये शीघ्र ही उद्यम करते हुए।

उसमें सबसे पहले कर्मोंके नाशक शरीर रहित ऐसे सिद्धोंके सम्यक्त्वादि आठ गुणोंको मोक्षके लिये चाहते हुए वे प्रभु ध्यान करने लगे। जो सिद्धोंके गुणोंको चाहनेवाले हैं उन्हें क्षायिक सम्यक्त्व अनंत केवलज्ञान केवल दर्शन अनंतवीर्य सूक्ष्मत्व अवगाहन अगुरुलघु अव्याबाध इन आठ उत्तम गुणोंका ध्यान हमेशा करना चाहिये ॥ फिर वे विवेकी प्रभु निर्मलचित्तसे सदा आज्ञाविचय आदि चार महान् धर्म-ध्यानोंका चिन्तवन करते हुए। पहली चार कषाय मिथ्यात्वकी तीन प्रकृति तिर्यंचायु देवायु नरकायु ये दश कर्मरूपी वैरी इस प्रभुके चौथेसे सातवें गुणस्थानमें ठहरनेपर डरके मारे आपही नष्ट हो गये। उन बड़े कर्मरूपी वैरियोंके नाश करनेसे जयको प्राप्त वे महावीर प्रभु उत्तम योधाके समान हुए शुक्ल ध्यानरूपी महान् हथियार लिये मोक्ष

महलको चढनेके लिये नसैनी ऐसी क्षपकश्रेणीपर चढकर कर्मरूपी वैरियोंके मारनेमें उद्यम करते हुए ।

स्त्यानगृद्धिनामका दुष्टकर्म निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला नरकगति तिर्यंचगति एकेंद्री दो इंद्री ते इंद्री चौइंद्रीरूप चार जाति अशुभ नरकगति—प्रायोग्यानुपूर्वी तिर्यग्गति प्रायोग्यानुपूर्वी आतप उद्योत स्थावर सूक्ष्म साधारण इन सोलह कर्मरूपी वैरियोंको उत्तम सुभटकी तरह मारते हुए । फिर वे महायोधा स्वामी पहले शुक्लध्यानरूपी तलवारसे अपने आप अनिवृत्तिकरण नामके नौवें गुणस्थानके पहले भागमें ठहरते हुए । पुनः उसी गुणस्थानके दूसरे भागमें चारित्रकी घातक आठ कषायोंको, तीसरे भागमें नपुंसकवेदको चौथे भागमें स्त्रीवेदको पांचवें भागमें हास्यादि छहको छठे भागमें पुरुषवेदको सातवें भागमें संज्वलनक्रोधको आठवें भागमें संज्वलन मानको नवमें भागमें संज्वलनमायाको उसी शुक्लध्यानरूपी हथियारसे नाश करते हुए ।

उसके वाद कर्मरूपी वैरियोंकी संतानको मारकर महाबलवान् हुए वे महावीर जिन दशवें गुणस्थानकी भूमिपर चढ़के सूक्ष्म संज्वलनलोभको चौथे ध्यानसे मारकर क्षीणकषायी होते हुए । इस प्रकार कर्मोंका राजा मोहकर्मरूपी महान् शत्रुको सेनासहित मारके वे महावीर प्रभु शूरोंमें मुख्य शोभायमान होने लगे । अथानंतर ग्यारवें गुणस्था-

नको लांघकर वे जिनपती बारवें गुणस्थानको पाकर केवलज्ञानके राज्यको स्वीकार करनेके लिये उद्यमी हुए।

वे प्रभु बारवें गुणस्थानके अंतके दो समयोंमेंसे पहले समयमें निद्रा प्रचला इन दोनों कर्मोंका नाश शुक्लध्यानके दूसरे हिस्सेसे करते हुए। फिर वे जगत्के गुरु शुल्कध्यानके उसी दूसरे भागरूप बाणसे कपड़ेके परदोंके समान पांच ज्ञानावरणकर्म और बाकीके चार दर्शनावरण कर्मोंको और पांच अंतरायकर्मोंको इस तरह चौदह घातिया कर्मोंको मार डालते हुए। इस प्रकार बारवें गुणस्थानके अंतके समम त्रेसठ कर्मोंका नाश करके तेरवें गुणस्थानमें केवलज्ञानको पाते हुए। कैसा है केवलज्ञान ? अंतरहित है लोक अलोकके स्वरूपको प्रकाश करनेवाला है अनंतमहिमासहित है मुक्तिके राज्य पानेको कारण है।

वे जिनेश्वर श्रीमहावीर प्रभु वैशाखसुदि दशमीके दिन सांझके समय हस्त और उत्तरा नक्षत्रके बीचमें शुभ चंद्रयोगमें मोक्षका देनेवाला, क्षायिकसम्यक्त्व यथाख्यातसंयम (चारित्र) अनंतकेवलज्ञान केवलदर्शन क्षायिकदान लाभ भोग उपभोग और क्षायिकवीर्य इन अनुपम नौ क्षायिक लब्धियोंको स्वीकार करते हुए।

इस प्रकार घातिकर्मशत्रुके जीतनेवाले भगवानको केवलज्ञानलक्ष्मीकी प्राप्ति होनेके प्रभावसे आकाशमें देव जय जय शब्द करते हुए और देवोंके दुंदुभि आदि बाजे बजने लगे। देवोंके विमानोंसे आकाश ढंक गया। आकाशसे पुष्पोंकी वर्षा होने लगी। सब इंद्र परमभक्तिसे उन प्रभुको प्रणाम करते हुए आठों दिशायें निर्मल होगईं और आकाश भी निर्मल होगया। उस समय मंद सुगंध ठंडी पवन वहने लगी सब इंद्रोंके आसन कंपायमान होते हुए और अनुपमगुणोंके खजाने ऐसे श्रीमहावीर प्रभुकी भक्तिसे यक्षोंका राजा कुवेरदेव शीघ्र ही समवसरणसंपदाकी रचना करता हुआ। इस प्रकार जो श्रीमहावीर प्रभु घातिकर्मरूपी वैरियोंको जीतकर अनुपम अनंत क्षायिक गुणोंको पाकर सब भव्यजीवोंको अत्यंत आनंद करता केवलज्ञानरूपी राज्यको स्वीकार करता हुआ। ऐसे भव्योंमें चूड़ामणिरत्नके समान तीनलोकके तारनेमें चतुर श्रीमहावीर प्रभुको मैं उन गुणोंकी प्राप्तिके लिये स्तुति करता हूं॥

इस प्रकार श्रीसकलकीर्तिदेव विरचित महावीर पुराणमें भगवान् महावीरको केवलज्ञानकी उत्पत्ति कहनेवाला तेरवां अधिकार पूर्ण हुआ॥ १३॥

चौदहवां अधिकार ॥ १४ ॥

श्रीवीरं त्रिजगन्नाथं केवलज्ञानभास्करम् ।
अज्ञानध्वांतहंतारं वंदे विश्वार्थदर्शिनम् ॥ १ ॥

भावार्थ—तीन जगत्के स्वामी केवल ज्ञानसे सूर्यस्वरूप अज्ञानरूपी अंधकारको नाश करनेवाले सबपदार्थोंके दिखानेवाले ऐसे श्री महावीर स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ।

अथानंतर महावीर प्रभुके केवल ज्ञान उत्पन्न होनेके प्रभावसे स्वर्गमें अपने आप घंटा बजनेका मेघके समान शब्द होने लगा, देवहाथी कमलपुष्पोंको बखेरते हुए नांचने लगे । कल्पवृक्ष पुष्पांजलिकी तरह फूलोंकी वर्षा करते हुए सब दिशायें धूलि आदिसे रहित निर्मल हो गईं और आकाश भी बादलोंसे रहित निर्मल होगया । इंद्रोंके आसन एकदम कंपित होने लगे मानों श्रीकेवल ज्ञानके उत्सवमें इंद्रोंका अभिमान नहीं सह सकते। इंद्रोंके मुकुट अपने आप नमते हुए । इस तरह ये आश्चर्य स्वर्गमें अपने आपही केवलज्ञानकी सूचना देनेके लिये होते हुए । इन चिन्होंसे वे इंद्र प्रभुके केवल ज्ञानका

उदय जानकर खुशीके साथ आसनसे उठके प्रभुकी भक्तिसे नम्र हुए धर्ममें उत्सुक होते हुए।

उसी समय ज्योतिषी देवोंके यहां महान् सिंहनाद हुआ और सिंहासन कंपित हुए। भवनवासियोंके महलोंमें शंखकी ध्वनि होती हुई अन्य सब आश्चर्य पूर्ववत् हुए। व्यंतर देवोंके महलोंमें भी भेरी बाजेकी बहुत आवाज होती हुई और सब आश्चर्य ज्ञानके सूचक पूर्वकी तरह जानना। इन आश्चर्योंसे उन प्रभुके केवल ज्ञानका होना जानकर मस्तक नवाते हुए सब इंद्र ज्ञान कल्याणक: उत्सव करनेकी बुद्धि करते हुए। उसके वाद पहले स्वर्गका सौधर्म इंद्र केवल ज्ञानकी पूजाके लिये यात्राके बाजोंको बजवाता हुआ देवों सहित स्वर्गसे निकला।

उस समय बलाहक देव मेघके आकार कामक नामका विमान बनाता हुआ। वह विमान जंबूद्वीपके बराबर रमणीक मोतियोंकी मालाओंसे शोभायमान अनेक रत्नमयी दिव्य तेजसे जिसने सब दिशाओंको घेर लिया है छोटी २ घंटियोंकी आवाजसे वाचाल ऐसा था। उसी समय नागदत्त नामका आभियोग्य जातिका देव बहुत ऊँचे ऐरावत हाथीको रचता हुआ। वह ऐरावत हाथी ऊंची सूंड़वाला बड़े शरीरवाला गोल और ऊंचे मस्तकवाला बलवान् दिव्य व्यंजन लक्षणोंसे युक्त शरीरवाला स्थूल बड़ी अनेक

सूड़ोंवाला गोल शरीरका धारक इच्छित रूप बनानेवाला जिसकी श्वास उच्छ्वास सुगंधित लंबीं, बड़े होठोंवाला दुंदुभिबाजेके समान शब्दवाला सुंदरस्वभावी कानरूपी चमरोंसे शोभित दो महान् घंटाओं सहित घुंघुरुओंकी मालासे शोभायमान सोंनेके सिंहासनका धारक जंबूद्वीपके समान विस्तारवाला अपने श्वेतरंगसे सब दिशाओंको सफेद करने-वाला मदके झरनेसे जिसका अंग भीग रहा है पर्वतके समान विक्रिया ऋद्धिमई ऐसा था

उस हाथीके बत्तीस मुंह और हरएक मुखमें आठ २ दांत, हरएक दांतपर रमणीक तालाव जलसे भरे हुए थे। प्रत्येक सरोवरमें एक एक कमलिनी हरएक कमलिनीके आसपास बत्तीस २ कमल प्रत्येक कमलके बत्तीस २ रमणीक पत्ते उन पत्तों-पर दिव्यरूपवालीं मनको हरनेवालीं बत्तीस अप्सरायें नाचनेवालीं थीं। वे अप्सरायें लयसहित मुसकरातीं हुईं भौंहें मटकातीं मृदंगकी ताल आदिसे गीत गातीं शृंगारादिरस दिखलातीं नाचतीं हुईं। इत्यादि वर्णन सहित उस गजेंद्रपर अति पुण्यात्मा वह इंद्र अपनी इंद्राणी सहित बैठता हुआ अत्यंत शोभायमान होने लगा।

वह इंद्र श्रीमहावीर स्वामीके केवलज्ञानकी पूजाके कारण जाता हुआ अपने अंगके आभूषणोंकी किरणोंसे तेजकी खानिके समान मालूम होने लगा। प्रतींद्र भी बड़े ठाठसे अपनी सवारीपर चढके अपने परिवार सहित इंद्रके साथ भक्तिसे निकलता हुआ।

आज्ञा ऐश्वर्यके सिवाय बाकी इंद्रके समान ठाठवाले ऐसे सामानिक जातिके चौरासी हजारदेव निकलते हुए। पुरोहित मंत्री अमात्यके समान तेतीस त्रायस्त्रिंशत देव शुभकी प्राप्तिके लिये इंद्रके साथ होते हुए।

वारह हजार देवोंसहित आभ्यंतर परिषद चौदह हजार देवोंसहित मध्यमसभा और सोलह हजार देवोंसहित बाह्य परिषद इस प्रकार तीन देवसभायें इंद्रको वेढ़ती हुईं। शिरोरक्षकके समान तीन लाख छत्तीस हजार देव इंद्रके निकट आते हुए। कोतवालके समान लोकके पालनेवाले चार लोकपालदेव अपने परिवार सहित उस इंद्रके सामने आते हुए। सात वृषभोंकी सेनामेंसे पहली सेनामें चौरासी लाख दिव्यरूप धारी उत्तम वृषभ (वैलरूप धारी देव) इंद्रके आगे हुए। दूसरीसे लेकर सातवींतक सेनामें इससे दूने २ वृषभ जातिके देव थे। इस प्रकार सात वृषभ सेना उस इंद्रके सामने होतीं हुईं।

उसीके प्रमाण ऊंचे घोड़ोंकी सात सेना, मणिमयी रथ, पर्वत सरीखे हाथी, शीघ्र गमन करनेवाले पैदल, दिव्यकंठसे श्रीजिनेशके उत्सवको गानेवाले गंधर्व और जिनेंद्र संबंधी गीत तथा बाजोंके साथ नाचनेवालीं अप्सरायें—ये सब हर एक सात कक्षाओं-वाले क्रमसे उस इंद्रके आगे चलते हुए। पुरवासियोंके समान असंख्यात प्रकी-र्णकदेव उसी तरह दासकर्म करनेवाले आभियोग्य जातिके देव, प्रजासे बाहर रहनेवाले

भंगियोंके समान किल्विषिक जातिके देव भक्तिसहित सौधर्म इंद्रके साथ उस महोत्सवमें निकलते हुए।

घोड़ेकी सवारीपर चढा हुआ धर्मबुद्धि ऐशान इन्द्र भी अपनी विभूति (ठाठ) सहित भक्तिवंत होकर उस इंद्रके साथ चलता हुआ। सिंहकी सवारीपर चढा हुआ सनत्कुमार इंद्र, दिव्य बैलपर चढा हुआ सब सामग्रीसहित माहेंद्रस्वामी, दैदीप्यमान सारसकी सवारीपर चढा देवोंसहित ब्रह्म इंद्र, हंसकी सवारीपर चढा महान् ऋद्धिवाला लांतवेंद्र, दीप्तिमान् गरुड़पर चढा शुक्रेंद्र, सामानिकादि देवों तथा देवियों सहित केवलज्ञानकी पूजाके लिये निकलते हुए। आभियोग्यदेवोंमेंसे उत्पन्न मोरकी सवारीपर चढा देवदेवियों सहित शतार इंद्र भी निकलता हुआ।

बांकीके आनत आदि कल्पोंकी स्वामी चार इंद्र पुष्पक विमानपर चढे हुए ज्ञानकल्याणकके लिये निकलते हुए। इस प्रकार कल्प स्वर्गोंके बारह इंद्र अपनी २ संपदाओंसहित बारह प्रतींद्रों सहित अपनी २ सवारियोंपर चढे हुए ढोल आदि बाजोंके महान् शब्दोंसे सब दिशाओंको पूरित करते अपने शरीरके आभूषणोंकी किरणोंसे आकाशमें इंद्रधनुप फैलाते हुए करोड़ों धुजा छत्र आदिकोंसे आकाशके भागको ढंकते हुए ' जय हो जीवो ' इत्यादि शब्दोंसे दिशाओंको बधिर करनेवाले गीत नृत्य बाजे

आदि महान् सैंकड़ों उत्सवोंके साथ धीरे २ स्वर्गसे उतरकर ज्योतिषी देवोंके पटलोंमें प्राप्त हुए।

चंद्रमा सूर्य ग्रह सब नक्षत्र तारे रूप असंख्याते ज्योतिषीदेवेंद्र भी अपनी २ विभव सहित अपनी २ सवारियोंपर चढे अपने देवों सहित धर्मके रागरसमें लीन भगवानके ज्ञानकल्याणकके लिये उन कल्पवासी देवोंके साथ पृथ्वीपर नीचे आते हुए। इधर पहला चमरेन्द्र दूसरा वैरोचन भूतेश धरणानंद वेणु वेणुधारी पूर्ण वसिष्ठ जलाभ जलकांत हरिषेण हरिकांत अग्निशिखी अग्निवाहन अमितगति अमितवाहन इंद्रघोप महाघोष वेलांजन प्रभंजन—ये वीस असुर आदि दस भवनवासी देवोंके इंद्र भी अपनी २ सवारियों तथा देवियोंसे शोभायमान हुए पृथ्वीको फाड़कर केवलज्ञानकी पूजाके लिये पृथ्वीके ऊपर आये।

उसके वाद पहला इंद्र किंनर, किंपुरुप तत्पुरुप महापुरुष अतिकाय महाकाय गीतरति रतिकीर्ति मणिभद्र पूर्णभद्र भीम महाभीम सुरूप प्रतिरूपक काल महाकाल—ये किंनरादि आठ तरहके व्यंतर देवोंके सोलह इंद्र और इतने ही प्रतींद्र देवोंसहित अपनी २ सवारियोंपर चढे महान् अपनी २ संपदाओंसहित ज्ञान कल्याणकके लिये पृथ्वीको भेदकर शीघ्र पृथ्वीपर आते हुए।

ये चार निकायके इंद्र देव और इंद्राणियोंसे शोभित निमेषरहित नेत्रवाले परमानंदयुक्त हस्तकमलोंको जोड़ते हुए श्रीमहावीर प्रभुको देखनेकी उत्कंठावाले 'जय हो नंदौ (बढौ)' इत्यादि उत्तम शब्द बोलते हुए जल्दी चलनेवाले ऐसे हुए प्रभुके सभामंडपको देखते हुए। जो मंडप दूरसे ही चमक रहा था सब ऋद्धियोंसे पूर्ण था रत्नोंसे दिशाओंको प्रकाशरूप कर दिया था। ऐसे कुबेर देव आदि बड़े कारीगरसे बनाये गये जगत् गुरूके उस सभामंडपकी रचना कहनेको गणधरके सिवाय दूसरा कोई समर्थ नहीं है।

तौ भी भव्यजीवोंको धर्मप्रीति आदिकी सिद्धिके लिये अपनी शक्तिसे समवसरणका कुछ वर्णन करता हूं। वह समवसरण (मंडप) एक योजनके विस्तारमें था, गोल था, इंद्रनीलमणिरत्नोंका उसका पहला पीठ बहुत शोभा देता था। उसमें वीस हजार रत्नोंकी सीढियां थीं और पृथ्वीसे ढाईकोस ऊपर आकाशमें था। उसके किनारेके चारोंतरफ धूलिशाल नामका पहला परकोटा रत्नोंकी धूलिका था। वह कहीं तो मूंगेकी सूरतका था कहीं सोनेकी रंगतका कहीं अंजन सरीखा कालेरंगका था और कहीं तोतेके समान हरे रंगवाला था। कहीं अनेक मिले हुए सोंनेरत्नोंकी धूलिके तेजपुंजसे आकाशमें इंद्रधनुपकी रंगतको करता हुआ शोभा देता था।

उमकी चारों दिशाओंमें दैदीप्यमान सोंनेके खंभे शोभायमान थे जो लटकतीं हुई रत्नोंकी मालाओंसे भूषित थे। उसके अंदर कुछ चलकर चार वेदियां थीं जो पूजाकी द्रव्यसे पवित्र थीं। वे चार बाहरके दरवाजोंसहित तथा तीन परकोटोंवालीं और रमणीक सोलह सोंनेकी सीढियोंसहित थीं। उनके बीचमें जिनेन्द्रकी प्रतिमासहित सिंहासन थे जो कि रत्नोंके तेजसे अत्यंत शोभा देते थे। उनके बीचमें चार छोटे २ सिंहासन थे। उन वेदियोंके मध्यभागमें चार मानस्तंभ थे उनका नाम मिथ्यादृष्टियोंका मान भंग करनेसे सार्थक था।

वे मानस्तंभ सोंनेके थे और ध्वजा घंटा गीत नृत्य वगैरःसे रमणीक मालूम होते थे। उनके मध्यभागमें मस्तक पर तीन छत्र धारण किये जिनेन्द्रकी प्रतिमायें थीं। उनके समीपकी पृथ्वीपर कमलोंसहित चार बावड़ियें चारों दिशाओंमें थीं वे रत्नोंकी सीढियोंसे अति सुंदर मालूम होतीं थीं। उनके नंदोत्तरा आदि नाम थे, वे लहरोंरूपी हाथोंसे और भौंरोंकी गुंजारसे नाचतीं गातीं हुई मालूम पडतीं थीं।

उन बावड़ियोंके किनारे जलके भरे हुए कुंड थे जो कि यात्राके लिये आये हुए भव्य जीवोंके पैर धोनेके लिये थे। वहांसे चलकर थोड़ी दूर पर जलकी भरी हुई खाई थीं वे कमलों व भौंरोंसे शोभायमान थीं। वह खाई हवाके धकेसे उठी हुई तरं-

गोंके शब्दोंसे ज्ञानके महोत्सवको मानों गाती हुई। उस खाईके अंदरका पृथ्वीभाग सब ऋतुओंके फूलों सहित वेलों तथा वृक्षोंसे ढंका हुआ था। वहां पर क्रीडा करनेके पर्वत देवियोंकी क्रीडा करनेके लिये पुष्प शय्यावाले रमणीक बने हुए थे।

जिस जगह चंद्रकांतमणिकी शीतल शिलायें लतामंडपमें रखी हुई थीं वे इंद्रोंके विश्राम करनेके लिये थीं। वहां पर्वतके ऊपर वन फलोंसहित अशोक आदि महान् वृक्षोंसहित और भौंरोंके गूंजनेसे अति शोभायमान था। उसके बाद कुछ दूर चलकर दूसरा सोंनेका परकोटा था वह बहुत ऊंचा था उसके सब तरफ मोती जड़े थे वे ऐसे मालूम होते थे मानों तारे ही चमक रहे हों। वह परकोटा कहीं मूंगाकी कांतिके समान कहीं नवीन वादलकी रंगत कहीं इंद्रगोपकीसी लाल रंगत कहीं नीलेरत्नकी कांतिवाला और कहीं चित्रविचित्र रत्नोंकी किरणोंसे महान् इंद्र धनुपके समान अति शोभता हुआ।

वह परकोटा हाथी सिंह व्याघ्र मोर और मनुष्योंके स्त्रीपुरुपरूप जोड़ोंके तथा वेलोंके चित्रोंसे सब तरफ भरा हुआ ऐसा मालूम होता था मानों हँस रहा हो। उस कोटके चारों दिशाओंमें चांदीके वने हुए चार दरवाजे थे और वे तीन मांजिले थे। वे दरवाजे अपने प्रकाशसे ऐसे मालूम पड़ते थे मानों सवकी शोभाको जीतकर हँस रहे हों। उन दरवाजोंके पद्मरागमणियोंके वने हुए आकाशको उल्लंघन करनेवाले ऊंचे शिखर

ऐसे शोभायमान होते थे मानों महामेरु पर्वतके ही शिखर हों। उन दरवाजोंमें कितने ही तो देवगंधर्व (गानेवाले) तीर्थंकर महावीर प्रभुके गुणोंको गाते थे कोई सुनते थे कोई देव नांचते थे और कोई देव गुणोंको विचारते थे। उनमेंसे हरएक दरवाजेपर भृंगार कलश दर्पण आदि एक सौ आठ मंगल द्रव्य रक्खे हुए थे। हरएक दरवाजेपर रत्नमई आभूषणोंकी कांतिसे आकाशको अनेक रंगका करनेवाले ऐसे सौ २ तोरण थे। उन तोरणोंमें लगे हुए आभूषण ऐसे मालूम होते थे मानों भगवानका शरीर स्वभावसे ही दैदीप्यमान है इस लिये वहां रहनेके लिये जगह न पाकर हरएक तोरणमें वंध रहे हों। उन दरवाजोंके समीप रक्खीं शंखादि नौनिधियां ऐसीं मालूम पड़ती थीं मानों वीतरागी जिनेंद्र भगवान्ने उनका तिरस्कार ही किया हो इस लिये दरवाजेके वाहर रहकर सेवाकर रहीं हों।

उन दरवाजोंके भीतर वड़ा रस्ता था और उस रास्तेके दोनों तरफ (वगलमें) दो नाटकशालायें (ठेठर) थीं। इसी तरह चारों दिशाओंके चारों दरवाजोंमें हरएकमें दो २ नाट्यशालायें थीं। वे नाट्यशालायें तीन मांजिल ऊंचीं ऐसीं मालूम होतीं थीं मानों भव्य जीवोंको सम्यग्दर्शनादि तीनों स्वरूप ही मोक्षमार्ग है ऐसा कह रहीं हों। उन नाटकशालाओंमें वडे २ सोंनेके वने हुए खंभे थे, और दीवालें निर्मल स्फटिक

मणिकी बनी हुईं थीं। उन नाटक शालाओंकी रंगभूमियोंमें सुंदर अप्सरायें नृत्य कर रहीं थीं। कितनेही गंधर्वदेव वीणा बजाते हुए दिव्य कंठसे प्रभुकी जीतको तथा केवल ज्ञानके समय होनेवाले गुणोंको गाते थे।

उन रास्तोंके दोनों ओर दो दो धूप घड़े थे उन घड़ोंसे चारों तरफ फैलते हुए धूएंकी सुगंधीसे सब आकाश सुगंधित हो गया था। उसके आगे कुछ दूर चलकर रास्तोंके किनारे चार वनवीथीं थीं वे सब ऋतुओंके फल फूलोंवालीं ऐसी मालूम होतीं थीं मानों दूसरे नंदनादि वन ही हों। उनमें अशोक वृक्षोंका पहला वन था और सप्तपर्ण चंपक आमवृक्षोंके तीन वन थे। वे चारों वन ऊंचे २ वृक्षोंके समूहोंसे बहुत शोभायमान थे। उन वनोंके वीचमें कहीं पर जलसे भरी हुई तिकोंनी चौकोंनी वावड़ियें थीं उनकी वड़ी २ कमलिनीं थीं।

उन वनोंमें कहीं पर रमणीक महल बनेहुए थे कहींपर खेलनेके मंडप थे। कहीं शोभा देखनेके लिये ऊँचे घर वने हुए थे और कहींपर उत्तम चित्रशालायें बनी हुईं थीं। कहीं कहीं पर एक मंजिलके तथा दो मंजिल आदिके मकानोंकी लेंनें लगी हुईं थीं। कहीं कृत्रिम पहाड़ वने हुए थे। उन वनोंमेंसे पहले अशोक वनमें सुवर्णकी वनी हुई तीन कटनी दार ऊँची रमणीक वेदिका थी उसपर विराजमान एक अशोक चैत्य वृक्ष था। वह वृक्ष

तीन परकोटोंसे घिरा हुआ था उन कोटोंके प्रत्येकके चार २ दरवाजे थे। वह वृक्ष ऊपर भागमें तीन छत्रोंसे शोभायमान था और वजनेवाले घंटे सहित था।

ध्वजा चमर मंगलद्रव्य और देवोंसे पूजित श्री जिनप्रतिमाओंसे वह वृक्ष जंबू-वृक्षके समान ऊँचा शोभता था। उस चैत्यवृक्षके मूलभागमें चारों दिशाओंमें श्री जिनेन्द्रदेवकी मूर्तियां (प्रतिमायें) विराजमान थीं उनको सुरेंद्र अपने पुण्यके लिये महा पूजाद्रव्योंसे पूजते थे। इसी प्रकार वाकी तीन वनोंमें भी सप्तपर्ण आदिक रमणीक चैत्य वृक्ष थे वे देवोंकर पूजित छत्र और अर्हंत प्रतिमादिकोंसे शोभायमान थे। माला वस्त्र मोर कमल हंस गरुड सिंह वैल हाथी चक्र—इन चिन्होंसे दस तरहकी धुजायें वहुत ऊँची ऐसी मालूम देती थीं मानों मोहनीयकर्मोंको जीत लेनेसे प्रभुके तीन जगतके ऐश्वर्यको एक जगह करनेके लिये तयार हुईं हों।

एक एक दिशामें प्रत्येक चिन्हवालीं एकसौ आठ धुजायें थीं वे ऐसीं मालूम होती थीं मानों आकाशरूपी समुद्रकी तरंगें ही हों। उन धुजाओंके वस्त्र हवासे झोके लेते हुए ऐसे जान पड़ते थे मानों भगवान्की पूजा करनेके लिये जगतके लोकोंको वुलारहे ही हों। उनमेंसे मालाके चिन्हवाली धुजाओंमें रमणीक फूलोंकी मालायें लटक रहीं थीं और वस्त्र चिन्हवाली धुजाओंमें महीन वस्त्र लटक रहे थे। इसी प्रकार मोर वगैरःकी

धुजाओंमें देवशिल्पियोंने मोर वगैरःकी मूर्तियां बहुत सुंदर बनाईं थीं। वे ध्वजायें हरएक दिशामें सब मिलकर एक हजार अस्सी थीं इसतरह चारों दिशाओंकी सब चार हजार तीनसौ वीस थीं।

उससे आगे चलकर भीतरकी तरफ दूसरा चांदीका बना हुआ परकोटा था। उस परकोटेका वर्णन पहले परकोटेकी तरह (समान) जानना। दरवाजे पूर्ववत् थे। परंतु चांदीके थे उनमें आभूपणों सहित बड़े २ तोरण थे। नव निधियां मंगल द्रव्य नाटकशाला दोनों उसी तरह दो दो धूपघड़े बड़े रास्तेके दोनों तरफ थे। उन नाट्यशालाओंमें गीत नृत्यादि पहले कोटकी तरह जानना।

उसके बाद भीतरकी तरफ कुछ दूर चलकर रास्ताओंके बगलमें कल्पवृक्षोंका वन था वह अनेक प्रकारके रत्नोंकी कांतिसे अत्यंत प्रकाशमान हो रहा था। वे कल्प· वृक्ष रमणीक ऊंचे श्रेष्ठ छायावाले अच्छे फलोंवाले उत्तम माला वस्त्र आभूपणोंसे युक्त थे इस लिये अपनी संपदासे राजाके समान मालूम होते थे। उन दसतरहके कल्पवृक्षों-को देखकर ऐसा मालूम पड़ता था मानों कल्पवृक्षोंको लेकर देव कुरु उत्तर कुरु भोग-भूमिस्थान ही भगवानकी सेवा करनेको आये हों। उन कल्पवृक्षोंके फल :आभूपणोंके

समान, पत्ते कपड़ोंके समान, और शाखाओंके ऊपर लटकती हुई दैदीप्यमान मालायें वड़के वृक्षकी जटाओंके समान मालूम पड़तीं थीं ।

जोतिष्कजातिके देव ज्योतिरांग कल्पवृक्षोंके नीचे, कल्पवासी देव दीपांग कल्पवृक्षोंके नीचे और भवनवासी इंद्र मालांगजातिके कल्पवृक्षोंके नीचे ठहरते थे और क्रीडा करते थे। उन कल्पवृक्षोंके वनोंके वीचमें रमणीक सिद्धार्थ वृक्ष थे उनमें छत्र चामरादिसे शोभायमान भगवान्‌की प्रतिमायें विराजमान थीं। पहले जो चैत्यवृक्षोंका वर्णन किया गया है वही शोभा इन वृक्षोंकी भी समझ लेना परंतु भेद इतना ही है कि ये कल्पवृक्ष इच्छानुसार फल देनेवाले थे। उन कल्पवृक्षोंके वनोंको चारों तरफसे घेरे हुए वनवेदिका सोंनेकी वनी हुई थी और रत्नोंसे जड़ी हुई वहुत चमकती थी।

उसके चांदीके चार दरवाजे थे, वे लटकती हुई मोतियोंकी मालाओंसे लटकते हुए घंटाओंसे गाना वाजा और नृत्योंसे फूलोंकी माला आदि आठ मंगल द्रव्योंसे ऊँचे शिखरोंसे और प्रकाशमान रत्नोंके आभूषणोंसहित तोरणोंसे अति शोभायमान दीखते थे। उसके वाद वड़े रास्तेके अंदर सोंनेके खंभोंके अगाड़ी लटकती हुई अनेक तरहकी धुजायें उस पृथ्वीको शोभायमान करतीं थीं।

रत्नोंके जड़े हुए पीठोंके ऊपर खड़े खंभे ऐसे मालूम होते थे मानों अपनी ऊंची

शोभासे स्वामीके कर्मवैरीकी जीत पुरुषोंके सामने कहनेको उद्यमी हुए हों। उन खंभोंकी मौटाई अठासी अंगुलकी थी और पच्चीस धनुष अर्थात् पचास गजका फासला था, ऐसा गणधर देवने कहा है। मानस्तंभ ध्वजास्तंभ सिद्धार्थ चैत्यवृक्ष स्तूप तोरणसहित प्राकार और वनवेदिका—इनकी तीर्थंकरकी उंचाईसे वारह गुनी उंचाई थी और लंबाई चौड़ाई उसीके योग्य ज्ञानी पुरुषोंको जान लेना चाहिये। वनोंकी सब महलोंकी और पर्वतोंकी उंचाई भी इतनीही है ऐसा द्वादशांगपाठी गणधर देवने कहा है। पर्वत अपनी उंचाईसे आठ गुणे चौड़े हैं और स्तूपोंकी मौटाई उंचाईसे कुछ अधिक है।

सब तत्त्वोंके जाननेवाले देवोंसे पूजित ऐसे गणधरदेव वेदिका वगैरःकी चौड़ाई उंचाईसे चौथाई कहते हैं। उस वनके बीचमें कहींपर नदियां कहींपर बावड़ीं कहीं बालूके ढेर कहीं सभामंडप बने हुए थे। वनके बड़े रास्तेके अंदर सोनेकी बनी हुई ऊंची वन वेदिका थी वह चार दरवाजोंसे शोभायमान थी। इसके भी तोरण मंगलद्रव्य आभूषण वगैरः संपदायें गाना नांचना बाजे वगैरः पहलेकी तरह कहे हुए जानना।

अथानंतर उस रास्तेके आगे चलकर देवशिल्पियोंकर बनायी गई एक गली है वह अनेक मकानोंकी पंगतिसे शोभायमान है। उसके खंभे सोनेके हैं उनमें हीरे जड़े हुए हैं चंद्रकांतमणिकी दिव्य भींतें (दीवालें) हैं वे अनेक रत्नोंसे चित्रविचित्र हैं। वे महल

कोई दो मंजिलके हैं कोई तीन चार मंजिलके हैं और अटारियोंकर तथा छज्जोंकर शोभायमान हैं। वे मकान ऊंचे दैदीप्यमान शिखरोंसे अपने तेजमें लीन हुए ऐसे मालूम होते हैं मानों चांदनीकर बनाये गये हों। मकानोंके ऊपरके भागमें तमाशा देखनेकी अटारियां बनी हुई हैं वे शय्या आसन और ऊंची सीढ़ियों सहित हैं। उनमें गंधर्वोंसहित कल्पवासी व्यंतर ज्योतिषी विद्याधर भवनवासी किन्नरोंसहित प्रतिदिन क्रीड़ा करते हैं। कोई देव जिनेंद्रके गीत गानेसे कोई बाजे बजानेसे और कोई नाचना व धर्मादिकी वार्तोंसे जिन भगवान्‌की सेवा करते थे।

वड़े रास्तेके मध्यभागमें नौ स्तूप खड़े हुए थे जो पद्मरागमणियोंके वने हुए थे। उनमें अर्हंत और सिद्धभगवान्‌की प्रतिमायें विराजमान थीं। उन स्तूपोंके बीचमें रत्नोंकी वंदनवार वंधी हुई थीं जिन्होंने आकाशको अनेक वर्णवाला कर दिया है। वे ऐसीं मालूम होतीं थीं कि मानों इंद्रधनुष ही हों। पूजनकी द्रव्यसे धुजा छत्र सब मंगलद्रव्योंसे वे स्तूप धर्मकी मूर्तिके समान शोभायमान होते थे।

वहांपर भव्यजीव आकर उन प्रतिमाओंका प्रक्षाल पूजन कर फिर प्रदक्षिणा देके स्तुतिकर श्रेष्ठ धर्मको उपार्जन करते थे। उसके बाद भीतरकी तरफ़ कुछ चलकर आकाशके समान स्वच्छ स्फटिकका बना हुआ परकोटा था वह अपनी चांदनीसे दिशा-

ओंको स्वच्छ करता था । उस परकोटेके दरवाजे पद्मरागमणिके वने हुए थे वे ऐसे मालूम होते थे मानों भव्यजीवोंका अनुराग (प्रेम) ही इकट्ठा हुआ हो। यहांपर भी मंगलद्रव्य अलंकार तोरण सव निधियां नृत्य वगैरः पहलेकी तरह समझ लेना। उन दरवाजोंपर चामर पंखा दर्पण धुजा छत्र ठोंना झारी कलश ये आठ २ मंगलद्रव्य रक्खे हुए थे।

उन तीन परकोटोंके दरवाजोंपर गदा तलवार वगैरह हथियार हाथमें लिये हुए क्रमसे व्यंतरदेव भवनवासी व कल्पवासी देव पहरा लगाते थे। उस स्वच्छ स्फटिक परकोटेसे लेकर पहले पीठतक लंवीं और चारों वड़े रास्तोंके आश्रय ऐसीं सोलह दीवालें थीं। उन स्फटिककी दीवालोंके ऊपर रत्नमयी खंभोंवाला आकाशके समान स्वच्छ स्फटिक मणिका वना हुआ श्रीमंडप था। वह मंडप वास्तव (असल) में श्रीमंडपही था क्योंकि तीनों लोककी लक्ष्मीवालोंकर भराहुआ था। जिस जगह अर्हंत प्रभुकी ध्वनिसे भव्यजीव स्वर्ग मोक्षकी लक्ष्मी पाते थे।

उस श्रीमंडपके वीचमें वैडूर्यमणिकी वनी हुई ऊंची पहली पीठिका थी उसके तेजसे सव दिशायें व्याप्त हो रहीं थीं। उस पीठिकापर सोलह जगह अंतर देके सोलह जगह सीढियां वनी हुई थीं उनमेंसे वारह जगह सभाके कोठोंके हर एक दरवाजेपर

और चार जगह चारों दिशाओंमें वहुत बड़ी २ थीं। उस पहली पीठिकापर आठ मंगलद्रव्य रक्खे हुए थे। और यक्षोंके ऊंचे ऊंचे मस्तकोंपर धर्मचक्र रक्खे हुए थे। वे एक एक हजार दैदीप्यमान आराओंकी किरणोंसे ऐसे शोभित होते थे मानों भव्यजीवोंको धर्म ही कह रहे हों। उस पहली पीठिकाके ऊपर सोंनेका वना हुआ दूसरा पीठ था वह कांतिसे सूर्य चंद्रमाके मंडलको जीतनेवाला था। उस दूसरे पीठके ऊपरी भागपर आठों दिशाओंमें चक्र हाथी वैल कमल वस्त्र सिंह गरुड और मालाके चिन्हवालीं आठ सुंदर धुजायें थीं वे ऐसी मालूम होती थीं मानों सिद्धोंके आठ गुण ही हों। उस दूसरे पीठके ऊपर तीसरा पीठ था वह समस्त रत्नोंका वना हुआ था उसकी स्फुरायमान रत्नोंकी प्रभासे अंधकार नष्ट हो गया था। वह पीठ अपनी अनेक मंगल संपदाओंसे व अपनी किरणोंसे स्वर्गवासियोंके तेजको जीतकर मानों हँस ही रहा हो ऐसा मालूम पड़ता था।

उस तीसरे पीठके ऊपर जगत्में श्रेष्ठ गंधकुटी वनी हुई थी वह तेजकी मूर्ति सरीखी दीखती थी। वह गंधकुटी दिव्यगंध महा धूप अनेक माला और पुष्पोंकी वर्षासे आकाशको सुगंधित करनेसे यथार्थ नामवाली थी। उस गंधकुटीकी रचना अनेक आभूषणोंसे

मोतियोंकी मालाओंसे सोंनेकी जालियोंसे अंधकारको नाश करनेवाले प्रकाशमान रत्नोंसे वह कुवेर देव करता हुआ। उसके वर्णन करनेको श्री गणधरके सिवाय कोई बुद्धिमान् समर्थ नहीं हो सकता। उस गंधकुटीके बीचमें इंद्र अमूल्य रत्नोंसे जड़ा हुआ सोंनेका दिव्य सिंहासन बनाता हुआ। वह सिंहासन अपनी प्रभासे सूर्यको भी जीतनेवाला था। करोड़ सूर्योंसे भी अधिक प्रभावाले वे श्रीमहावीर भगवान् तीनजगत्के भव्योंसे घिरे हुए उस सिंहासनको अलंकृत करते हुए। वे महावीर प्रभु अनंत महिमा सहित सब भव्योंके उद्धार करनेमें समर्थ अपनी महिमासे सिंहासनके तलभागसे चार अंगुल ऊपर अंतरीक्ष (निराधार) विराजमान थे। इसप्रकार बुद्धिमानोंकर नमस्कार किये गये, लोकके शिरोमणि, देवोंकर रची हुई अनुपम बाह्य विभूतिकर शोभायमान, अनुपम अनंत गुणोंसहित और केवलज्ञान संपदाकर भूषित ऐसे श्री जिनेन्द्र भगवान् महावीर प्रभु हैं उनको मैं नमस्कार करता हूं।

जो महावीर प्रभु तीनलोकके भव्यजीवोंके तारनेमें बहुत चतुर कर्मरूपी वैरियोंके नाश करनेवाले दिव्य बारह सभाओंसे वेढ़े हुए धर्मोपदेशमें उद्यत विना कारण बन्धु (हितू) अनंत चतुष्टयकर विराजमान हैं उनको मैं उनकी संपदाकी प्राप्तिके लिये नमस्कार करता हूं। असाधारण गुणोंके खजाने केवल ज्ञानरूपी नेत्रवाले तीन लोकके

स्वामियों इंद्रधरणेंद्र चक्रवर्तियोंकर सेवने योग्य सबलोकके अद्वितीयबंधु सब दोषों रहित धर्मरूपी तीर्थके प्रवर्तानेवाले ऐसे श्रीमहावीर स्वामीकी मोक्षके गुणोंकी प्राप्तिके लिये स्तुति करता हूं ।

इस प्रकार श्री सकलकीर्तिदेव विरचित महावीर पुराणमें देवोंका आगमन व समवसरण मंडपकी रचनाको कहनेवाला चौदहवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १४ ॥

पंद्रहवां अधिकार ॥ १५ ॥

श्रीमते केवलज्ञानसाम्राज्यपदशालिने ।
नमो वृताय भव्यौघैर्धर्मतीर्थप्रवर्तिने ॥ १ ॥

भावार्थ—केवलज्ञानके राज्यको करनेवाले भव्योंकर वेष्टित और धर्मतीर्थके प्रवर्तक ऐसे महावीर अर्हंतको नमस्कार है ।

देवरूपी बादल जिनेंद्रके चारों तरफ सब पृथ्वीके ऊपर फूलोंकी बरसा करते थे । वह पुष्पवर्षा आकाशसे पड़ती हुई गंधकर खींचे हुए भौंरोंके गूंजनेसे जगत्के स्वामीके यशको ही मानों गा रही हो ऐसी मालूम होती थी । भगवान्के समीप अत्यंत दैदीप्यमान जगत्के शोकको दूर करनेसे सार्थक नामको रखनेवाला ऊँचा अशोकवृक्ष था । वह अशोकवृक्ष रत्नोंके विचित्र फूलोंसे मरकतमणिके पत्तोंसे और चंचल शाखाओंसे ऐसा शोभायमान होता था मानों भव्योंको बुला ही रहा हो । महावीरप्रभुके शिरपर सफेद तीन छत्र ऐसे शोभते थे मानों भव्योंको तीन लोकके स्वामीपनाको सूचित कर रहे हों । वे तीन छत्र दैदीप्यमान मोतियोंके लटकनेसे भूपित जिनका डंडा अनेक रत्नोंसे जड़ा हुआ ऊंचा था और अपनी कांतिसे जिन्होंने चंद्रमाको जीत लिया है ऐसे थे ।

क्षीरसमुद्रके जलके समान सफेद चौंसठ चमरोंको हाथमें लिये हुए यक्षोंसे हवा कियागया वह जगत्का गुरु भव्योंके वीचमें अंतरंग वहिरंग लक्ष्मीकर शोभित शरीरवाला सुरूपवान् मोक्षरूपी स्त्रीका उत्तम वर मालूम होता था। उससमय मेघके समान गर्जने वाले साढे वारह करोड़ देव दुंदुभि वाजे देवोंकर वहुत जोरसे वजाये गये। वे वाजे कर्मरूपी वैरियोंको मानों ललकार रहे हों और जिनोत्सवको जाहिर करनेवाले अनेक तरहके शब्दोंको भव्योंके सामने कर रहे हों ऐसे वजते हुए मालूम पड़ते थे।

दिव्य औदारिक शरीरसे उठा हुआ दैदीप्यमान प्रभाका मंडल करोड़ सूर्यसे भी अधिक प्रभावाला शोभायमान होरहा था। वह भामंडल वाधाको दूर करनेवाला अनुपम सव प्राणियोंके नेत्रोंको प्रिय यशका पुंज सरीखा वा तेजका खजाना सरीखा मालूम पड़ता था। जिनेन्द्र महावीरके श्रीमुखसे दिव्यध्वनि जो प्रतिदिन निकलती थी वह सवका हित करनेवाली और तत्त्वोंका स्वरूप तथा धर्मका स्वरूप वतलाने वाली थी। जैसे एकसा मेघका जल पात्रके भेदसे वृक्ष वगैरःमें अनेक भेदरूप हुआ फलमें भेद करनेवाला होता है उसीतरह भगवानकी दिव्यध्वनि पहले तो अनक्षरी एक स्वरूप ही निकलती है फिर अनेक भाषामयी और अनेक देशोंमें उत्पन्न मनुष्योंके अक्षरमयी, देव तथा पशुओंको धर्मका उपदेश करनेवाली सवके संदेहको दूर करनेवाली हो जाती है।

रत्नके तीन पीठोंके ऊपर सिंहासन पर विराजमान जगतके स्वामी श्रीमहावीर धर्मराजाके समान मालूम होने लगे। इस प्रकार अमूल्य महान दिव्य आठ प्रातिहार्योंसे भूषित वे महावीर स्वामी सभामंडपमें अत्यंत शोभायमान होते हुए। श्रीमहावीर प्रभुकी पूर्व दिशाकी तरफसे लेकर सभाके पहले कोठेमें गणधर और मुनीश्वर मोक्षकी प्राप्तिके लिये विराजमान हो रहे थे। दूसरे कोठेमें कल्पवासिनी इंद्राणी वगैरः देवियां, तीसरेमें सब अर्जिका और श्राविकायें, चौथेमें ज्योतिषी देवोंकी देवियां पांचवेंमें व्यंतरोंकी देवियां छठेमें भवनवासियोंकी पद्मावती आदि देवियां सातवेंमें धरणेंद्र आदि सब भवनवासी देव, आठवेंमें इंद्रोंसहित व्यंतरदेव, नवमेंमें चंद्र सूर्य आदि इंद्रोंसहित ज्योतिषी देव, दशवेंमें कल्पवासीदेव ग्यारवें कोठेमें विद्याधर आदि मनुष्य और बारवें कोठेमें सिंह हरिण आदि तिर्यंच बैठे हुए थे।

इस प्रकार बारह कोठोंमें बारह जीव समूह तीन जगत्के गुरुको वेढ़कर भक्तिसहित हाथ जोड़ते हुए पापरूपी अग्निकी दाहसे दुःखी भगवान्के वचनरूपी अमृतको पानेके लिये बैठे हुए थे। उन जीवसमूहोंसे वेढे हुए तीन जगत्के स्वामी श्रीमहावीर सब धर्मात्माओंके मध्यमें अत्यंत सुंदर धर्ममूर्तिकी तरह विराजमान हो रहे थे।

अथानंतर देवोंसहित वे इंद्र धर्मरसकी चाहवाले हाथोंको जोड़ते हुए जयजय

शब्द करते हुए जिन भगवान्‌के सभामंडपकी भूमिकी तीन प्रदक्षिणा देकर परम भक्तिसे जगद्गुरुको देखनेके लिये सभामंडपमें प्रवेश करते हुए। वह समवरणभूमि भव्योंको शरणरूप है। फिर वे इंद्र मानस्तंभ महान् चैत्यवृक्ष और स्तूपोंमें विराजमान जिनेंद्र व सिद्धोंकी विंबोंको उत्तम प्रासुक जलादि द्रव्योंसे पूजते हुए। देवोंकर वनाई गई वहुत उत्तम अनुपम समवसरण रचनाको देखते हुए वे इंद्र हर्षित होके क्रमसे देवोंके कोठेमें प्रवेश करते हुए।

उस सभामंडपमें ऊंची जगह पर स्थित ऊंचे सिंहासनपर विराजमान ऊंचे शरीर-वाले करोड़ों गुणोंसे सवमें ऊंचे तेज करके चार मुंहवाले और चमरोंसे हवा किये गये ऐसे श्रीमहावीर प्रभुको परमविभूतिके साथ वे इंद्र आखें फाड़कर देखते हुए। उसके वाद भक्तिके भारसे वशीभूत वे इंद्र देवताओंके साथ भक्तिपूर्वक अपने घुटनोंको पृथ्वीमें रखकर कर्मोंकी हानिके लिये प्रभुको नमस्कार करते हुए।

इंद्राणी आदि सव देवियें अपनी अप्सराओं सहित खुशीके साथ तीन जगत्‌के स्वामीको अच्छी तरह प्रणाम करतीं हुईं। जिनेन्द्रको प्रणाम करनेसे इंद्रोंके मुकुटोंकी किरणोंसे जिनेन्द्रके चरणकमल विचित्र प्रभावाले होगये। वे इंद्र प्रभुके गुणोंमें रंजायमान हुए उत्तम दिव्यसामग्रीसे प्रभुकी पूजा करनेको उद्यमी होते हुए। दैदीप्यमान

सोंनेकी झाड़ीकी नलीसे स्वच्छ जलधारा अपने पापोंकी शुद्धिके लिये जिनेन्द्रके चरण-कमलोंके आगे डालते हुए। फिर वे इंद्र महान् भक्तिसे दिव्य गंधवाले घिसे चंदनसे भगवान्‌के रमणीक सिंहासनके अग्रभागको भोग और मोक्षके लिये पूजते हुए।

आकाशको सफेद करनेवाले दिव्य मोतियोंके अक्षतोंके पांच ऊंचे पुंज अक्षय सुखके लिये प्रभुके आगे चढ़ाते हुए। वे इंद्र कल्पवृक्षोंसे उत्पन्न दिव्य पुष्पोंसे सर्व अर्थोंको साधनेवाली विभुकी महान् पूजा करते हुए। अमृतके पिंडसे उत्पन्न नैवेद्योंको रत्नोंकी थालीमें रखकर वे इंद्र प्रभुके चरणकमलोंके आगे अपने सुखकी प्राप्तिके लिये भक्तिपूर्वक चढ़ाते हुए। सबको प्रकाशित करनेवाले स्फुरायमान रत्नोंमयी दीपकोंसे वे इंद्र अपने ज्ञानप्राप्तिके लिये जगत्स्वामीके चरणकमलोंको प्रकाशित करते हुए।

काले अगरको आदि उत्तम सुगंधित द्रव्य लेकर बनाये हुए धूपसे जिनेंद्रके चरणकमलोंकी पूजा वह इंद्र धर्मकी प्राप्तिके लिये करता हुआ, उस धूपके धुंएसे सब दिशायें सुगंधित हो गईं थीं। वे इंद्र कल्पवृक्षोंसे उत्पन्न हुए और नेत्रोंको प्रिय ऐसे अनेक फलोंसे भगवान्‌के चरणकमलोंको महान फलकी प्राप्तिके लिये पूजते हुए। वे इंद्र पूजाके अंतमें करोंड़ों पुष्पोंसे जगत्गुरुके चारों तरफ फूलोंकी वर्षा करते हुए। उस

समय इंद्राणी प्रभुके सामने भक्तिवश होके पांच रत्नोंके बने हुए चूर्णसे विचित्र उत्तम सांतिया अपने हाथसे लिखती हुई।

उसके बाद प्रसन्न हुए वे इंद्र तीर्थराजको प्रणाम कर कुछ नमकर भक्तिपूर्वक हाथ जोड़के मधुर वचनोंसे जिनेन्द्रके उत्कृष्ट अनंत गुणोंकी स्तुति उन गुणोंकी प्राप्तिके लिये आरंभ करते हुए। हे देव! तुम जगत्‌के नाथ हौ तुम ही गुरुओंमें महान् गुरु हौ पूज्योंमें पूज्य तुम ही हौ, वंदनीकोंमेंसे वंदने योग्य तुमही हौ। तुमही योगियोंमें महान योगी हौ व्रतियोंमें महान् व्रती तुम ही हौ ध्यानियोंमें महाध्यानी तुमही हौ यतियोंमेंसे महान् बुद्धिमान तुमही हौ। तुमही ज्ञानियोंमें महान् ज्ञानी हौ यतियोंमेंसे जितेंद्री तुमही हौ स्वामियोंके मध्यमें परम स्वामी तुमही हौ।

जिनोंमें जिनोत्तम तुम ही हौ। ध्यान करके योग्य पदार्थोंमें सदा ध्येय तुम ही हौ स्तुति करने योग्योंमें स्तुत्य हे विभो! आप ही हौ। दाताओंमें महान दाता तुम ही हौ गुणियोंमें महान् गुणी तुम ही हौ धर्मात्माओंमें परम धर्मात्मा तुम हो। हितकर्ताओंमें परमहितकारी आप ही हौ। हे भगवन् तुम संसारसे डरे हुए प्राणियोंके रक्षक हौ। अपने और दूसरोंके कर्मोंके नाशक आप ही हौ। शरणरहित जीवोंको शरण देनेवाले

तुम ही हौ। मोक्षके मार्गमें ले जानेवाले तुम ही हौ और जगत्का हित करनेसे बंधुरहित जीवोंके विनाकारण महान् बंधु तुम ही हौ।

तीनों लोकके अग्रभागका राज्य चाहनेसे लोभियोंमें महान् लोभी तुम ही हौ। मुक्तिरूपी स्त्रीकी संगतिकी इच्छा करनेसे रागियोंमें महान् रागी तुम ही हौ। सम्यग्दर्शनादिकरत्नोंका संग्रह करनेसे परिग्रहियोंमें महान् परिग्रही तुम ही हौ और कर्मरूपी वैरीके मार डालनेसे हिंसकोंमें महाःहिंसक तुम ही हौ। कषाय और इंद्रियोंके जीतनेसे जेताओंमें महान् जेता तुम ही हौ। अपने शरीरमें इच्छारहित होने पर भी लोकाग्रशिखरकी चाहवाले हौ। देवियोंके वीचमें रहकर भी परम ब्रह्मचारी हौ और हे देव एक मुखवाले तुम अतिशयसे चार मुखवाले दीखते हौ।

लोकसे विलक्षण लक्ष्मीसे भूषित होनेपर भी हे जगत्के गुरु महान् निर्ग्रंथराज हौ इस लिये अद्वितीय गणोंके मुखिया आप ही हौ। हे देव! आज हम धन्य हैं आज हमारा जीना सफल हुआ है और हे विभो! तुमारी यात्राके लिये आनेसे आज ही हमारे चरण कृतार्थ हुए हैं। हे गुरु हे ईश तुमारी पूजा करनेसे आज ही हमारे हाथ सफल हुए हैं:और तुमारे चरण कमलोंको देखनेसे आज ही नेत्र सफल हुए हैं।

तुमारे चरणकमलोंके प्रणाम करनेसे आज मस्तक भी सफल हुआ आपकी

चरणसेवासे आज हमारा शरीर पवित्र हुआ। हे देव तुम्हारे गुणोंको वर्णन करनेसे आज हमारी वाणी भी सफल हुई। हे नाथ आपके गुणोंका विचार करनेसे आज हमारा मन भी निर्मल हुआ। हे देव आपके अनंत गुणोंकी स्तुति करनेको गौतम आदि गणधर भी अच्छी तरह समर्थ नहीं है ऐसे गुणोंकी हम अल्पबुद्धि कैसे स्तुति कर सकते हैं ऐसा समझकर हे नाथ हमने आपकी स्तुति करनेमें अधिक परिश्रम नहीं किया। इसलिये हे देव तुमको नमस्कार है अनंतगुणवाले आपको नमस्कार है सबमें मुखिया तुमको नमस्कार है और सत्पुरुषोंके गुरु आपको नमस्कार है।

परमात्मरूप तुमको नमस्कार है लोकोंमें उत्तम तुमको नमस्कार है केवलज्ञानके राज्यसे भूषित आपको नमस्कार होवे। अनंतदर्शन स्वरूप आपको नमस्कार है अनंतसुखरूप तुमको नमस्कार है अनंतवीर्यरूप और तीन जगत्के भव्यजीवोंके मित्र आपको नमस्कार है। लक्ष्मीसे बढे हुए आपको नमस्कार है सबको मंगल करनेवाले आपको नमस्कार है श्रेष्ठ बुद्धिवाले आपको नमस्कार है महान् योधा आपको नमस्कार है तीन जगत्के नाथ आपको नमस्कार है स्वामियोंके स्वामी आपको नमस्कार है अतिशयों (चमत्कारों) से पूर्ण आपको नमस्कार है। दिव्यदेह आपको नमस्कार है। धर्मस्वरूप आपको नमस्कार है।

धर्ममूर्ति आपको नमस्कार है धर्मोपदेश देनेवाले आपको नमस्कार है धर्मचक्रके प्रवर्तानेवाले आपको नमस्कार है। हे जगत्के नाथ इस प्रकार स्तुति नमस्कार भक्ति-कर उपार्जित पुण्यसे आपके प्रसादकर आपकी समस्तगुणोंकी राशियां हमको शीघ्र ही आपका पद मिलनेके लिये रहें कर्मवैरियोंका नाश करें श्रेष्ठ मृत्यु (समाधिमरण) को भी करें। इसतरह जगतके स्वामी श्री महावीरप्रभुकी स्तुतिकर वारंवार नमस्कार कर और भक्तिसहित चार प्रकारकी इष्ट प्रार्थना कर देवों सहित वे इंद्र उस समय धर्म सुननेके लिये अपने २ कोठोंमें बैठते हुए और दूसरे भी भव्य तथा देवियें हितकी प्राप्तिके लिये जिनेंद्रके सामने बैठतीं हुईं।

इसी अवसरमें वह इंद्र वारह तरहके जीव समूहोंको श्रेष्ठधर्म सुननेकी अभिलाषासे अपने २ कोठोंमें बैठा हुआ देख और तीन पहर बीत जानेपर भी अर्हतकी धुनी नहीं निकलती हुई देख मनमें विचारने लगा कि किस हेतुसे धुनी निकलेगी। उसके बाद अपने अवधिज्ञानसे गणधरपदके योग्य किसी मुनीश्वरको नहीं समझकर बुद्धिमान् पहला इंद्र ऐसी चिंता करता हुआ। देखो अचंभेकी वात है कि मुनीशोंमें कोई ऐसा मुनींद्र नहीं है जो अर्हतप्रभुके मुखसे प्रगट हुए सब पदार्थोंको एकवार सुनकर द्वादशांग शास्त्रकी संपूर्ण रचना कर शीघ्र ही गणधरपदवीके योग्य होवे।

ऐसा विचार वह इंद्र ऐसा जानता हुआ कि इस नगरमें गोतमकुलका भूपण उत्तम गौतम ब्राह्मण ही गणधर पदवीके योग्य है। वह द्विजोत्तम किस उपाय (तरकीव) से यहां आसकेगा ऐसी अत्यंत चिंता प्रसन्नचित्तवाला वह सौधर्मेंद्र करता हुआ। फिर वह मनमें कहता हुआ कि देखो अव मैंने यह उपाय लानेके लिये जानलिया कि विद्यासे अभिमानी उस विप्रको कुछ गूढ अर्थवाले काव्यको शीघ्र ही ब्रह्मपुरमें जाकर पूछूंगा। उसको नहीं मालूम पड़नेसे अज्ञानताके वश वाद करनेके लिये यहां अपनेआप आवेगा।

ऐसा हृदयमें विचार कर बुद्धिमान् वह इंद्र बुड्ढे ब्राह्मणका भेष वनाकर लाठी हाथमें ले उस गौतमविप्रके पास जाता हुआ। वह भेषधारी इंद्र विद्याके मदसे उद्धत गौतमको देखकर वोलता हुआ कि हे विप्रोत्तम इस जगह तुम ही वड़े विद्वान् दीखते हो इसलिये मेरे एक काव्यका अर्थ विचारकर कहो। क्योंकि मेरा गुरु श्रीमहावीर मौन धारण किये हुए है इसलिये मेरे साथ वह नहीं वोलता इसी कारण मैं काव्यके अर्थका चाहनेवाला यहां आया हूं।

काव्यका अर्थ समझ लेनेसे यहां मेरी वहुत जीविका होजायगी। भव्य पुरुषोंका उपकार होगा और आपकी भी प्रसिद्धि होजाइगी। ऐसा सुनकर वह गौतम द्विज बोला हे बुड्ढे तेरे श्लोकका यदि जल्दी ठीक अर्थ कर दूं फिर तू क्या करेगा? उसके वाद

वह भेषधारी इंद्र ऐसा बोला कि–हे विप्र यदि तू मेरे काव्यका व्याख्यान ठीक २ अच्छी तरह कर देगा तौ मैं नियमसे तेरा चेला हो जाऊंगा, अगर नहीं कर सका तो फिर तू क्या करेगा ?। उसके बाद वह गौतम बोला, अरे बुड्ढे मेरे सत्य वचन तू सुन। यदि मैं अर्थ नहीं कर सकूं तो मैं भी इन पांचसौ शिष्यों तथा: अपने दोनों भाइयों सहित अभी जगत्प्रसिद्ध वेदजन्य मतको छोड़कर तेरे गुरुका चेला हो जाऊंगा। इसमें संशय नहीं समझना।

इस मेरी प्रतिज्ञामें यह नगरका स्वामी काश्यप ब्राह्मण और ये वैठे हुए सब जने गवाह हैं। ऐसा सुनकर वे सब लोक बोल उठे कि कोई समय दैवयोगसे मंदरमेरु तो चलायमान हो जावे परंतु इसके सच्चे वचन महावीर प्रभुकी तरह नहीं झूंठे हो सकते। इस प्रकार दोनोंका आपसमें वचनालाप होनेके बाद इंद्र मधुर वाणीसे यह काव्य बोला—

त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं सकलगतिगणा सत्पदार्था नवैव
विश्वं पंचास्तिकाया व्रतसमितिचिदः सप्ततत्त्वानि धर्माः।
सिद्धेर्मार्गः स्वरूपं विधिजनितफलं जीव षट्कायलेश्या
एतान् यः श्रद्दधाति जिनवचनरतो मुक्तिगामी स भव्यः॥ १॥

यह काव्य सुनकर वह गौतम अचंभे सहित हुआ उसके अर्थ जाननेको असमर्थ

मानभंगके डरसे ऐसा मनमें तर्क वितर्क करता हुआ। देखो यह काव्य वहुत कठिन है इसका अर्थ कुछ भी नहीं मालूम पड़ता इसमें तीन काल कौनसे हो सकते हैं दिनके या वर्षके? अब तीन कालमें उत्पन्न वस्तुको जो जानें वही सर्वज्ञ है वही उस आगमका जाननेवाला हो सकता है। मुझ सरीखा तुच्छ मनुष्य कोई भी नहीं हो सकता।

छह द्रव्य कौंन होते हैं किस शास्त्रमें कहे गये हैं सब गतियां कौन हैं उनका क्या स्वरूप है? मैंने पहले नव पदार्थ कभी नहीं सुने उन्हें कौंन जान सकता है? विश्व किंसे कहते हैं सबको या तीन लोकको, यह वात मैं नहीं जानता। इस जगह पांच अस्तिकाय कौनसे हैं इस पृथ्वीमें व्रत कौनसे हैं समिति कौन हैं ज्ञानका स्वरूप कैसा है और उसका फल क्या है। कौंनसे सात तत्व हैं कौंनसे धर्म हैं सिद्धि वा कार्य निष्पत्तिका मार्ग भी अनेक प्रकारका है। स्वरूप क्या है यहां विधि कौंन है उसकर उत्पन्न फल क्या है छह जीवनिकाय कौंन हैं छह लेश्या कौंन हैं मैंने कहीं नहीं सुनीं।

इन सबका लक्षण (स्वरूप) मैंने पहले कभी नहीं सुना और न हमारे वेद अथवा स्मृतिवगैरः शास्त्रोंमें ही कहा गया है। ओहो मैं समझता हूं कि इस काव्यमें सब सिद्धांत—समुद्रका दुर्घट (कठिन) रहस्य यह वुड्ढा मुझसे पूछ रहा है। मेरा मन भी ऐसा ही मानता है कि यह काव्य गूढ है इसको सर्वज्ञके तथा उनके शिष्यके विना

दूसरा कोई भी कहने समर्थ नहीं है। अब अगर मैं इस बुड्ढेको अर्थ न वतलाऊं तो इस साधारण ब्राह्मणके साथ वादमें हारनेसे मेरा मान भंग होगा। इस लिये अब शीघ्र ही जाकर तीन लोकके स्वामी इसके गुरुके साथ चमत्कार करनेवाला विवाद करूंगा। उस उत्तम विवादसे वड़ी प्रसिद्धि होगी और जगत् गुरुके सवबसे मेरी किसीतरहकी भी हानि नहीं हो सकती। ऐसा मनमें विचार कर काललब्धि (अच्छी होनहार) से प्रेरित हुआ वह गौतम वोला। हे विप्र मैं तेरेसे विवाद नहीं करता तेरे गुरुसे ही करूंगा।

ऐसा कहकर वह गौतमविप्र वेगसे पांचसौ शिष्यों और दो भाइयों सहित सभाके मध्य श्रीमहावीर प्रभुके पास जानेको घरसे निकला।

बुद्धिमान् वह गौतम क्रमसे मार्गमें चलता हुआ मनमें ऐसा विचारने लगा कि जब यह बुड्ढा ब्राह्मण ही असाध्य है तो इसका गुरु मुझसे कैसे जीता जाइगा।। खैर महान् पुरुषोंके संबंधसे जो कुछ होगा वह ठीक ही होगा किंतु श्रीवर्द्धमान स्वामीके आश्रयसे कुछ लाभ ही होगा हानि नहीं हो सकती। ऐसा विचार कर वह गौतम विप्र पुण्यके उदयसे जगत्को आश्चर्य करनेवाले बहुत ऊंचे मानस्तंभोंको देखता हुआ। उनके दर्शनरूपी वज्रसे उस गौतमके मानरूपी पहाड़के सैंकड़ों टुकड़े होगये अर्थात् मान

दूर होगया और शुभ मार्दव परिणाम प्रगट होता हुआ। उसके वाद अति शुद्ध परिणामोंसे मंडपकी महान् विभूतिको देख अचंभे सहित हुआ वह गौतम विप्र दिव्य सभामें प्रवेश करता हुआ। उस सभाके अंदर वह उत्तम द्विज गौतम सब ऋद्धियों तथा जीवसमूहोंकर वेढे हुए दिव्य सिंहासनपर विराजमान जगत्के स्वामीको देखता हुआ। उसके वाद परमभक्तिसे जगतगुरुको तीन प्रदक्षिणा देकर हाथजोड़ प्रभुके चरणकमलोंको मस्तकसे नमस्कार कर सार्थक नामादिकोंसे अपनी सिद्धिके लिये वह गौतम विप्र स्तुति करने लगा। हे भगवन्! तुम जगत्के नाथ हौ और उत्तम एक हजार आठ नामोंसे भूषित होनेपर भी नामकर्मके नाशक हौ। सब अर्थोंका जाननेवाला बुद्धिमान् एक ही नामसे प्रसन्नचित्त होकर तुमारी स्तुति करे वह शीघ्र ही आपके समान नामोंको तथा उनके फलोंको पासकता है।

ऐसा समझकर हे देव तुमारे नामोंको चाहनेवाला मैं भक्तिपूर्वक एकसौ आठ सुंदर नामोंसे तुम्हारी स्तुति करता हूं। हे भगवन् तुम धर्मराजा धर्मचक्री धर्मी धर्मक्रियामें अग्रणी धर्मतीर्थके करनेवाले धर्मनेता धर्मपदके ईश्वर हो। धर्मकर्ता सुधर्माढ्य धर्मस्वामी सुधर्मवित् धर्माराध्य धर्मीश धर्माढ्य धर्मबांधव धर्मज्येष्ठ अतिधर्मात्मा धर्मभर्ता सुधर्मभाक् धर्मभागी सुधर्मज्ञ धर्मराज धर्मराज अतिधर्मधी महाधर्मी महादेव महानाद

महेश्वर महातेजा महामान्य महापूत महातपा महात्मा महादांत महायोगी महाव्रती महाध्यानी हौ।

महाज्ञानी महाकारुणिक महान् महाधीर महावीर महार्चाढ्य महेशिता महादाता महात्राता महाकर्मा महीधर जगन्नाथ जगद्धर्ता जगत्कर्ता जगत्पति जगज्ज्येष्ठ जगन्मान्य जगत्सेव्य जगन्नुत जगत्पूज्य जगत्स्वामी जगदीश जगद्गुरु जगद्बंधु जगज्जेता जगन्नेता जगत्प्रभु तीर्थकृत् तीर्थभूतात्मा तीर्थनाथ सुतीर्थवित् तीर्थंकर सुतीर्थात्मा तीर्थेश तीर्थकारक तीर्थनेता सुतीर्थज्ञ तीर्थार्ह तीर्थनायक तीर्थराज सुतीर्थांक तीर्थभृत् तीर्थकारण विश्वज्ञ विश्वतत्त्वज्ञ विश्वव्यापी विश्ववित् विश्वाराध्य विश्वेश विश्वलोकपितामह विश्वाग्रणी विश्वात्मा विश्वार्च्य विश्वनायक विश्वनाथ विश्वेड्य विश्वभृत् विश्वधर्मकृत् सर्वज्ञ सर्वलोकज्ञ सर्वदर्शी सर्ववित् सर्वात्मा सर्वधर्मेश सार्व सर्वबुधाग्रणी सर्वदेवाधिप सर्वलोकेश सर्वकर्महृत् सर्वविघ्नेश्वर सर्वधर्मकृत् सर्वशर्मभाक्—तुम ही हौ।

हे तीन जगत्के स्वामी इन कहे हुए एकसौ आठ नामोंसे तुमारी स्तुति की इसलिये स्तुति करनेवाले मुझको तुम करुणा करके अपने समान करो। हे नाथ! सोंने और रत्नोंकी अकृत्रिम कृत्रिम आपकी तीनों लोकमें जितनी प्रतिमा हैं उन सबकी भक्तिके रागके वशमें हुआ मैं हमेशा भक्तिपूर्वक आपकी यादगारी होनेके लिये स्तुति व पूजा करता हूं।

हे देव जो प्राणी भक्तिपूर्वक तुमारी प्रतिमाको पूजते हैं स्तुति करते हैं नमस्कार करते हैं वे भव्यजीव तीन लोकके स्वामी होजाते हैं। अगर साक्षात् मूर्तिमान् तुमको जो नमन स्तुति पूजादिकसे रातदिन सेवें तो उन भव्योंके फलोंकी संख्या मैं नहीं जानसकता कि कितना फल होगा। हे देव इस लोकमें जितने उत्तम चिकने परमाणु हैं उन सबको मिलाकर यह अतिसुंदर दिव्य शरीर बनाया गया है। क्योंकि तुमारा शरीर अनुपम जगत्को प्रिय और करोड़ सूर्यसे भी अधिक तेजसे सब दिशाओंको प्रकाशित करनेवाला है। हे ईश तुमारा प्रदीप्त समतासहित निर्विकार मुख मनकी अत्यंत शुद्धिको ही कह रहा है ऐसा मालूम पड़ता है। हे जगत्के गुरु जिस २ भूमिपर आपके चरणकमल रक्खे गये हैं वह भूमि इस संसारमें तीर्थस्थान होगई और इसीलिये मुनी और देवोंकर वंदनीक होगई। हे नाथ आपके जन्मकल्याणादि जिन क्षेत्रोंमें हुए हैं वे क्षेत्र अतिपवित्र पूज्य तीर्थस्थान होगये। वह काल भी धन्य है जिसमें हे प्रभो गर्भादि कल्याण व केवलज्ञानका उदय हुआ है। हे विभो आपका केवलज्ञान अनंत विश्वमें व्यापक और ज्ञेय पदार्थके न होनेसे लोक अलोकरूप आकाशको ही व्याप कर ठहर गया है।

इस लिये हे देव तुम ही तीन जगत्के स्वामी सर्वज्ञ सब तत्वोंके जाननेवाले वि-

स्वव्यापी जगतके नाथ भव्योंकर माने गये हो। हे स्वामिन् आपका अनंत केवलदर्शन जगतसे नमस्कार किया गया लोक अलोकको देखकर केवलज्ञानकी तरह स्थिर हो गया है। हे नाथ तुमारा अनंतवीर्य सब पदार्थोंके दर्शन होनेपर भी सब दोषोंसे रहित अनुपम शोभायमान हो रहा है। हे देव तुमारा अनंत उत्तम सुख बाधारहित अनुपम अतींद्रिय है और सब संसारियोंके अनुभवमें कभी नहीं आसकता।

हे महावीर ये तेरे दिव्य अनंत चतुष्टय दूसरोंके न होनेसे असाधारण हुए तुझमें ही विराज रहे हैं। इच्छारहित तुमारे ये आठ प्रातिहार्य संपदायें सब दुनियांके पदार्थोंसे अतिशयवालीं अनुपम शोभाको पारहीं हैं। दूसरे भी आपके अनगिनती गुण तीन लोकमें मुख्य अनुपम हैं वे हम सरीखे अल्पज्ञानियोंसे कैसे प्रशंसा किये जा सकते हैं। हे देव जैसे बादलोंकी धारा आकाशके तारे समुद्रकी लहरें अनंत संसारी जीव इन सबकी गिनती नहीं मालूम होती उसीतरह आपके गुणोंकी भी संख्या नहीं होसकती।

ऐसा समझकर हे देव तुमारी स्तुति करनेमें मैंने अधिक परिश्रम नहीं किया और गणधरोंके भी अगम्य ऐसे तुमारे गुणोंको वर्णन करनेमें भी मैंने अधिक प्रयास नहीं किया। इसलिये हे देव आपको नमस्कार है। दिव्यमूर्ति आपको नमस्कार है

सर्वके जाननेवाले आपको नमस्कार है अनंतगुणस्वरूप आपको नमस्कार है। दोषरहित आपको नमस्कार है परमबंधु आपको नमस्कार है मंगलस्वरूप आपको नमस्कार है लोकोंमें उत्तम आपको नमस्कार है। सब जगतके शरणरूप आपको नमस्कार है मंत्रमूर्ति आपको नमस्कार है।

वर्द्धमान आपको नमस्कार है महावीर आपको नमस्कार है सन्मति आपको नमस्कार है विश्वके हितस्वरूप आपको नमस्कार है तीन जगतके गुरु आपको नमस्कार है और हे देव अनंतसुखके समुद्र आपको नमस्कार है। इसप्रकार स्तुति नमस्कार भक्तिरागसे उत्पन्न धर्मके प्रसादसे मैं परम दाता तुमसे तीन लोककी लक्ष्मी नहीं मांगता परंतु हे नाथ आप अपनीसी सब संपदाको मुझे दो। जो संपदा कर्मोंके नाशसे उत्पन्न हुई है अनंत सुखके करनेवाली है नित्य है जगतसे नमस्कार की गई है।

क्योंकि इस पृथ्वीपर आप परम दाता हैं और मैं महालोभी हूं इसलिये यह मेरी प्रार्थना आपके प्रसादसे सफल होवे। हे देव तुम ही इंद्रोंसे पूजित चरण हो तुम ही धर्मतीर्थ उद्धारक हो तुम ही कर्मरूपी वैरीके नाश करनेवाले हो तुम ही महा योधा हो तुम ही जगतके निर्मल दीपक हो तुम ही तीन लोकके तारनेमें एक चतुर हो तुम ही

श्रेष्ठ गुणोंके खजाने हौ इसलिये हे जिनपति संसाररूपी समुद्रमें डूबते हुए मुझे सब तरहसे वचाओ। इस प्रकार भक्तिसे स्तुति करता हुआ वह गौतम ब्राह्मण जिनेन्द्र देवके चरण कमलोंको अच्छी तरह प्रणाम करके अपनेको कृतार्थ मानता हुआ। कैसा है गौतम ! जो इंद्रसे पूजित है सम्यग्दर्शन ज्ञानरूपी रत्नको पा लिया है खोटेमतरूपी वैरियोंको नाश करनेवाला है और जिसने श्रेष्ठ धर्मका मार्ग (उपाय) जान लिया है ॥

इसप्रकार श्री सकलकीर्ति देव विरचित महावीरपुराणमें श्री गौतमका आगमन और स्तुतिकरनको कहनेवाला पंद्रहवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १५ ॥

सोलहवां अधिकार ॥ १६ ॥

श्रीमते विश्वनाथाय केवलज्ञानभानवे ।
अज्ञानध्वांतहंत्रेऽत्र नमो विश्वप्रकाशिने ॥ १ ॥

भावार्थ—सब जीवोंके नाथ केवलज्ञानरूपी सूर्य अज्ञानरूपी अंधकारको नाश करनेवाले और सब पदार्थोंको प्रकाश करनेवाले ऐसे श्रीअर्हंतप्रभुको नमस्कार है ।

अथानंतर वे गौतमस्वामी श्रीतीर्थनायक महावीर स्वामीको मस्तकसे नमस्कार कर भव्य जीवोंका और अपना हित चाहते हुए अज्ञानके दूर होनेके लिये और ज्ञानकी प्राप्तिके लिये सब प्राणियोंका हित करनेवाली सर्वज्ञके गम्य ऐसी प्रश्नमालाको पूछते हुए । हे देव पहले जीवतत्त्वका क्या लक्षण (स्वरूप) है कैसी अवस्था है कितने गुण व भेद हैं । कौन पर्याय हैं कितने पर्याय सिद्ध संसारियोंके गम्य हैं । इसीतरह अजीव तत्वके भेद स्वरूप गुण वगैरः कौन हैं । इन दोनोंसे बाकीके बचे आस्रवादि तत्त्वोंमें कौन दोषके व कौन गुणके करनेवाले हैं कौन तत्वका कौन करनेवाला है उसका लक्षण और फल क्या है । इस संसारमें किस तत्वसे क्या सिद्ध किया जाता है और किन दुराचारोंसे पापी जीव नरकको जाते हैं ।

किस खोटे कर्मसे दुःख देनेवाली तिर्यंच (पशु) गतिमें जाते हैं और किन श्रेष्ठ आचरणोंसे धर्मात्मा स्वर्गको जाते हैं। किस शुभकर्मसे लक्ष्मीका सुख देनेवाली मनुष्य गतिको जाते हैं और किस दानके प्रभावसे शुभ परिणामवाले जीव भोग-भोमिमें जाते हैं। किस आचरणसे जीवोंके स्त्रीलिंग होता है, किससे स्त्रियोंको पुरुष-पर्यायकी प्राप्ति हो सकती है और किस कारणसे दुष्टात्माओंको नपुंसकलिंग मिलता है। किस पापसे ये जीव दुःखी हुए पांगले बहिरे अंधे गूंगे अंगहीन होते हैं।

किस कर्मसे ये जीव रोगी नीरोगी रूपवान् कुरूप सुभग दुर्भग इस संसारमें होते हैं। किस कर्मसे मनुष्य बुद्धिमान् दुर्बुद्धि मूर्ख पंडित शुभ परिणामी और अशुभ अंतरंगवाले होते हैं। किन आचरणोंसे धर्मी पापी भोगोंवाले भोगरहित धनवान् निर्धन हो जाते हैं। किस कर्मसे अपने कुटुंबियोंसे वियोग पाते हैं और इष्ट बंधुओं वा इष्ट वस्तुओंसे संयोग हो जाता है। इस पृथ्वीपर मनुष्योंके पुत्र किस कर्मसे नहीं जीते हैं और किस कर्मसे बांझपना होता है तथा पुत्र बहुत कालतक जीते हैं। किस कर्मसे डरपोकपना धैर्य निंदा निर्मल कीर्ति कुशील तथा सुशीलपना प्राप्त होता है।

किस कारणसे जीवोंको अच्छी संगति खोटी संगति विवेक मूर्खपना उत्तम कुल नीच कुल प्राप्त होता है?। किस कर्मसे मिथ्या मार्गमें प्रीति जिनधर्ममें महान् प्रेम बलवा-

न शरीर निर्वल शरीर मिलता है ? । मोक्षका मार्ग क्या है फल क्या है और मोक्षका लक्षण (स्वरूप) क्या है ? । मुनियोंका उत्तम धर्म कौनसा है और गृहस्थों (श्रावकों) का धर्म कौन है । उन दोनों धर्मोंका उत्तम फल क्या मिलता है ? धर्मके कारण और भेद कौनसे हैं शुभ आचरण कौन हैं ।

वारह कालोंका स्वरूप कैसा है तीन लोककी स्थिति (वनावट) कैसी है इस पृथ्वीपर शलाका (पदवी धारक) पुरुष कौन हो गये हैं । इस वावत वहुत कहनेसे क्या लाभ परंतु भूत भविष्यत् वर्तमान इन तीन काल विपयक द्वादशांगसे उत्पन्न जितना ज्ञान है वह सव हे कृपानाथ भव्योंके उपकारके लिये स्वर्ग मोक्षके कारण धर्मकी प्राप्तिके लिये अपनी दिव्य ध्वनिसे उपदेश करो । इस प्रकार प्रश्नके वशसे सव भव्योंके हित करनेमें उद्यमी वह तीर्थराज महावीर प्रभु दिव्य ध्वनिसे तत्त्व आदि प्रश्नोंकी राशियोंके उत्तरको स्वर्ग मोक्षके सुखके लिये और मोक्षमार्गकी प्रवृत्तिके लिये इस प्रकार कहते हुए । हे बुद्धिमान् गौतम ! सव जीवोंके साथ तू स्थिर चित्त करके यह सव तेरे इष्टका साधक कहाजानेवाला उत्तररूप उपदेश सुन ।

कहनेवाले प्रभुके थोड़ीसी भी ओठ वगैरःकी चलनक्रिया समतारूप मुखकमल-में नहीं होती हुई तौ भी प्रभुके मुखकमलसे रमणीक सव संशयोंको हटानेवाली मिष्ट

पर्वतकी गुफामेंसे निकली प्रतिध्वनिके समान कल्याण करनेवाली दिव्य ध्वनि (वाणी) निकलती हुई । ओहो तीथराजोंकी यह योगजन्य ऊँची शक्ति कि जिससे जगत्के भव्योंको महान उपकार पहुँचाया जाता है ।

हे गौतम इस संसारमें बुद्धिमान लोग जिसे यथार्थ सत्य कहते हैं वह सर्वज्ञकर कहे हुए पदार्थोंका स्वरूप ही है यह निश्चय समझ । जीव दो प्रकारके हैं एक मुक्त (सिद्ध) दूसरे संसारी । मुक्तोंमें तो कुछ भेद नहीं है संसारियोंमें वहुतसे भेद हैं । आठ कर्मोंसे रहित और आठ गुणोंसे शोभित एक स्वरूप समान सुखवाले सव दुःखोंसे रहित लोकके शिखरपर विराजमान अनंत वाधारहित ज्ञान शरीरवाले अनुपम-ऐसे सिद्ध जीव जानने । संसारी जीवोंके दो भेद हैं स्थावर और त्रस । अथवा एकेंद्री विकलेंद्री पंचेंद्री—इसतरह तीन भेद हैं । नरक आदि गतिके भेदसे चार तरहके हैं । इंद्रियोंकी अपेक्षा एकेंद्री दो इंद्री ते इंद्री चौइंद्री पंचेंद्री—इसतरह पांच भेद अति दयालु जिन भगवानने कहे हैं । त्रस और स्थावरके भेदसे छह तरहके जीव हैं ऐसा अति दयालु जिनेंद्र भगवानने कहा है । इन्हीं छहकायके जीवोंकी रक्षा करनी चाहिये । पृथ्वी आदि पांच स्थावर विकलेंद्रिय पंचेंद्रिय इसतरह जीवोंके सात भेद कहे गये हैं । पांच स्थावर विकलेंद्रिय संज्ञी असंज्ञी—इसतरह आठ जीवोंकी जाति हैं । पांच स्थावर दो इंद्री तेइंद्री

चौइंद्री पंचेंद्री—इसतरह जीवके नौ भेद जिनागममें कहे गये हैं। पृथ्वी जल अग्नि (तेज) वायु प्रत्येक वनस्पति साधारण वनस्पति दो इंद्री तेइंद्री चौइंद्री पंचेंद्री—ऐसे जीवोंके दस भेद हैं। सूक्ष्म और बादरके भेदसे स्थावरोंके दस भेद हैं और एक त्रस—इसतरह ग्यारह भेद जीवोंके बुद्धिमानोंको जानना चाहिये।

दस स्थावर विकलेंद्री और पंचेंद्री—ऐसे जीवोंके बारह भेद हैं। पृथ्वी जल अग्नि वायु (हवा) वनस्पति—ये पांच सूक्ष्म बादर भेदोंसे दस प्रकारके तो स्थावर तथा विकलेंद्री असंज्ञी पंचेंद्री संज्ञी (मनसहित) पंचेंद्री—इस तरह तेरह भेद जीवोंके हैं। समनस्क अमनस्क (मनरहित) ये दो पंचेंद्रीं, दो इंद्री ते इंद्री चौइंद्री तथा बादर सूक्ष्म दो भेदरूप एकेंद्री—ऐसे सात भेद हुए, ये सब पर्याप्त और अपर्याप्त इसतरह दो भेदोंसे गुणा किये जानेपर चौदह जीवसमास (जीवोंके भेद) हो जाते हैं।

इसी तरह अठानवै भेद वगैरः बहुतसे जीवोंकी जातियोंके भेद श्रीमहावीर-स्वामीने गौतम आदि गणधरोंके प्रति कहे हैं। पृथ्वी जल तेज वायुकाय नित्यनिगोद इतरनिगोद ये दो साधारण वनस्पति—ये छहों हरएक सात २ लाख और दसलाख प्रत्येक वनस्पति जाति, विकलेंद्री तीनकी छह लाख, पंचेंद्री तिर्यंच नारकी देवोंकी मिलकर बारह लाखयोनि और मनुष्योंकी चौदह लाख जातियां—ऐसे चौरासी लाख

जीवोंकी जातियां है। उन जीवोंके कुल कोटि हैं ऐसा श्री महावीर देवने गणधरोंको तथा सब समूहको कहा है।

चार गति पांच इंद्रियमार्गणा छह काय पंद्रहयोग स्त्रीवेद आदि तीन वेद हैं, अनंतानुबंधी क्रोध आदि पच्चीस कषायें हैं, पांच सुज्ञान तीन कुज्ञान ऐसे आठ ज्ञान हैं शुभ और अशुभरूप सात संयम हैं। चक्षुदर्शन आदि चार दर्शन हैं शुभ अशुभरूप छह लेश्या हैं, भव्य अभव्यके भेदसे दो तरहके जीव हैं छह प्रकारका सम्यक्त्व है। संज्ञी असंज्ञी ऐसे दो तरह जीव हैं, आहारक अनाहारक जीव हैं–इसतरह चौदह मार्गण (ढूंढनेके रास्ते) कहीं हैं। इन्हीं चौदह मार्गणाओंमें ज्ञानियोंको संसारी जीव दर्शन विशुद्धिके लिये तलाश करने चाहिये।

मिथ्यात सासादन मिश्र अविरत देशसंयत प्रमत्तसंयत अप्रमत्त अधःकरण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपराय उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगीजिन अयोगिजिन–ऐसे चौदह गुणस्थान जिनेन्द्रदेवने विस्तारसे कहे हैं। जो भव्य निर्वाण (मोक्ष) को गये हैं जाते हैं और जायंगे वे सिर्फ इन्हीं गुणस्थानोंको चढकर गये जाते हैं और जायँगे दूसरी कोई रीतिसे नहीं। क्योंकि ग्यारह अंगका अर्थ जाननेपर

भी अभव्यके हमेशा दीक्षित (साधु) होनेपर भी अहो पहला मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है दूसरा नहीं ।

जैसे कालासांप शकर सहित दूध पीनेपर भी जहरको नहीं छोड़ता उसी तरह अभव्य भी आगमरूपी अमृत पीनेपर भी मिथ्यात्वको नहीं छोड़ता । इस लिये बाकीके तेरह गुणस्थान निकट भव्योंके ही होते हैं अभव्य और दूर भव्योंके कभी नहीं हो सकते । इस प्रकार वे महावीर प्रभु पहले जीव तत्त्वका व्याख्यान आगमभाषा (पारमार्थिक भाषा) से करके फिर अध्यात्म भाषा (व्यवहार) से उसीका व्याख्यान करने लगे । बहिरात्मा अंतरात्मा परमात्मा— ये तीन प्रकारके जीव गुण और दोषकी अपेक्षा कहे गये हैं ।

इनमेंसे जो जीव तत्त्व और अतत्वमें गुण अगुणमें सुगुरु कुगुरुमें धर्म और पापमार्गमें शुभ अशुभमें जिनसूत्र और कुशास्त्रोंमें देव कुदेवमें हेय उपादेयकी परीक्षामें विचार शून्य है वही बहिरात्मा कहा जाता है । जो विना विचारे पदार्थोंको अपनी इच्छाके अनुसार ग्रहण करता है चाहें सत्य हों या असत्य कहे गये हों वही मूर्ख (अज्ञानी) पहला बहिरात्मा है । जो शठ हालाहल जहरके समान घोर विषयजन्य सुखको उपादेय (ग्रहणरूप) बुद्धिसे सेवन करता है वही बहिरात्मा है ।

जो मूढ जड़ चेतनस्वरूप शरीर और जीवको संबंध होनेसे एक मानता है वह मूर्ख ज्ञानसे वहुत दूर है यानी कुछ भी नहीं जानता । वहिरात्मा जीव अपनी कुबुद्धि-से पापको पुण्य जानकर उसके लिये क्लेश उठाता है इसीसे संसाररूपी वनमें भटकता रहता है । जो तप श्रुत और व्रतों सहित होने पर भी अपना और परस्वरूपका विचार नहीं कर सकता वह आत्मज्ञानसे रहित है । ऐसा समझकर बुद्धिमानोंको खोटे मार्गमें जानेवाला वहिरात्मा सव तरहसे त्यागना चाहिये, उसकी संगति (सौवत) स्वप्नमें भी नहीं करनी चाहिए ।

उस वहिरात्मासे जो उलटा है अर्थात् विवेकी है जिन सूत्रका जाननेवाला है और तत्व अतत्वमें शुभ अशुभमें देव कुदेवमें सत्य असत्यमतमें धर्म अधर्ममें मिथ्यामार्ग मोक्षमार्गमें जो भेदको अच्छी तरह जानता है वही अंतरात्मा जिनेंद्रने कहा है । जो मोक्षका इच्छक सव अनर्थोंके करनेवाले विपय जन्य सुखको हालाहलविषके समान समझता है वह अंतरात्मा है । जो जीव अपनेको कर्मोंसे कर्मकार्योंसे और मोह इंद्रिय द्वेप राग शरीरादिसे जुदा समझता है वही महान् ज्ञानी अपने आत्मामें लीन कहा जाता है ।

जो अपनेको निष्कल सिद्धसमान योगिगम्य अनुपम ध्यान (चिंतवन) करता है तथा अपने आत्मद्रव्य और अन्य देह वगैरःमें वहुतही भेद समझता है वह महान् ज्ञानी

अंतरात्मा कहा जाता है। यहां बहुत कहनेसे क्या फायदा जिसका श्रेष्ठ मन उत्तम विचारोंमें कसौटीके समान लगा हुआ है वोही परमज्ञानी है। ऐसा समझकर आत्मामें सब तरफसे मूढ़ता छोड़ परमात्मपदको पानेके लिये अंतरात्माके पदको ग्रहण (मंजूर) करना चाहिये। सकल विकलके भेदसे परमात्मा दो तरहका है जो दिव्य शरीरमें रहे वह अर्हंतप्रभु सकल परमात्मा है और जो देह रहित हैं ऐसे सिद्ध भगवान् निष्कल कहे जाते हैं।

जो घातिया कर्मोंसे रहित हैं नव केवल लब्धिवाले मोक्षके इच्छुक तीन जगत्के मनुष्य देवोंकर हमेशा ध्यान करनेयोग्य धर्मोपदेशरूपी हाथोंसे संसारसमुद्रमें डूवते हुए भव्योंको निकालनेमें उद्यमी चतुर सर्वज्ञ महान्पुरुषोंके गुरु धर्मतीर्थके करनेवाले तीर्थंकरस्वरूप वा सामान्य केवली स्वरूप सबसे वंदना किये गये दिव्य औदारिक शरीरमें विराजमान सब अतिशयोंसहित लोकमें स्वर्गमोक्षफलकी प्राप्तिके लिये धर्मरूपी अमृतकी वर्षा हमेशा करनेवाले ऐसे परमात्मा ही सकल कहे जाते हैं। ये ही जगत्के नाथ जिनेन्द्रदेव जिनेन्द्रपदके चाहनेवालोंको उस पदकी प्राप्तिके लिये दूसरेकी शरण न लेकर सेवा किये जाते हैं।

जो सब कर्मोंसे तथा शरीरसे रहित हैं अमूर्त हैं ज्ञानमयी महान् तीन लोकके शिख-

रपर रहनेवाले आठ गुणोंसे भूषित तीन जगत्के स्वामियोंसे सेवा किये गये ऐसे सिद्ध मोक्षके इच्छुकोंसे वंदने योग्य हैं। वेही महान् जगत्के चूडामणि निष्कल परमात्मा हैं। येही सबमें मुख्य सिद्ध परमेष्ठी मोक्षार्थियोंको मोक्षसिद्धिके लिये अतिनिश्चल मन करके हमेशा ध्यान करने योग्य हैं।

भ्रमरहित हुआ योगी जैसे परमात्माका ध्यान करता है वैसे ही मोक्षस्वरूप परमात्माको पाता है। उत्कृष्ट बहिरात्मा पहले गुणस्थानमें कहा जाता है दूसरेमें मध्यम और वह शठ तीसरे गुणस्थानमें जघन्य कहा गया है। जघन्य अंतरात्मा चौथे गुणस्थानमें उत्कृष्ट अंतरात्मा बारवें गुणस्थानमें कहा है जो कि अनंतकेवलज्ञानको प्राप्त करनेवाला है। इन दोनोंके बीचमें जो सात शुभ गुणस्थान हैं उनमें अनेक तरहका मध्यम अंतरात्मा है वही मोक्षके रस्तेपर खड़ा हुआ है। अंतके तेरवें चौदवें इन दोनों गुणस्थानोंमें परमात्मा है वह तीन जगत्के जीवोंकर सेवनीक सयोगी अयोगिरूप है। सिद्धपरमात्मा गुणस्थानसे रहित हैं।

जो द्रव्यभाव प्राणोंसे जी चुका जी रहा है और जीवेगा इस लिये वही सार्थक नामवाला जीव कहा जाता है। पांच इंद्रिय, मन वचन कायरूप तीन, आयु और उच्छ्वास-निःश्वास ये संज्ञी जीवोंके दश प्राण हैं। बुद्धिमानोंने असंज्ञी जीवोंके मनके विना नौ

प्राण कहे हैं और चौ इंद्रिय जीवोंके कर्ण इंद्रियके विना आठ ही प्राण हैं। ते इंद्रिय जीवोंके नेत्र इंद्रिय छोड़कर सात प्राण हैं दो इंद्रिय जीवोंके नाक इंद्रियको छोड़ छह प्राण कहे हैं। एकेंद्री जीवोंके वचन जिह्वा इन दोको भी छोड़ चार प्राण कहे हैं और अपर्याप्त जीवोंके अनेक प्रकार प्राण आगममें जानना चाहिये।

यह जीव उपयोगमयी है, चेतनास्वरूप है, कर्म नोकर्म बंध मोक्षका अकर्ता है असंख्यातप्रदेशी है अमूर्त है सिद्धसमान है परद्रव्यसे रहित है ऐसा बुद्धिमानोंने निश्चय नयसे कहा है। अशुद्ध निश्चय नयसे यह जीव राग आदि भावकर्मोंका कर्ता है और अपने आत्मज्ञानसे रहित हुआ कर्म फलका भोगनेवाला है। व्यवहार नयसे आत्मध्यानसे रहित हुआ कर्म और शरीरादि नोकर्मका कर्ता है और यही संसारी जीव आप इंद्रियोंसे ठगाया गया असद्भूत उपचरित व्यवहारनयसे घड़े कपड़े वगैरहका कर्ता है।

यह आत्मा समुद्घातके विना अपनी संकोच विस्तार शक्तिसे पाये हुए शरीरके प्रमाण (बराबर) है जैसे दीपक। वेदना कषाय वैक्रियक मारणांतिक तैजस आहारक और केवलिसमुद्घात ये सात समुद्घात हैं। इनमेंसे तैजस आहारक और केवलिसमुद्घात– ये तीन तो योगियोंके होते हैं। तथा बाकीके चारों सब संसारी जीवोंके हो सकते हैं।

इस जीवके केवलज्ञानादि स्वभावगुण हैं मतिज्ञानादि बिभावगुण हैं। नर नारक देवादि पर्यायें त्रिभावपर्याय हैं और जीवके शरीर रहित शुद्ध प्रदेश स्वभावपर्याय हैं।

पहले शरीरका नाश दूसरे शरीरकी उत्पत्ति और दोनों अवस्थाओंमें आत्मा वोही होनेसे जीवके उत्पाद व्यय ध्रौव्य तीनों हैं। इत्यादि अनेक तरहके जीवतत्त्वको जिनेन्द्रदेव अनेक नयभेदोंसे दर्शन विशुद्धिके लिये गणधर देवको उपदेशते (कहते) हुए। अथानंतर वे जिनेंद्र भगवान् पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल ऐसे पांच भेदरूप अजीवतत्वका व्याख्यान करने लगे। रूप रस गंध स्पर्शवाले पुद्गल द्रव्य अनंत हैं। और वे पूरण गलन स्वभावसे सार्थक नामवाले हैं। सामान्य रीतिसे अणु स्कंधरूप दो भेद पुद्गलके हैं उनमेंसे जो अविभागी है वह अणु है और स्कंधोंके वहुतसे भेद हैं।

अथवा सूक्ष्म सूक्ष्मादि भेदोंसे वे पुद्गल छह तरहके हैं। उनमेंसे एक परमाणुरूप तो सूक्ष्म सूक्ष्म १ हैं वे नेत्रोंसे नहीं दीखते। आठों द्रव्यकर्मरूप पुद्गलस्कंध सूक्ष्म पुद्गल २ हैं। शब्द स्पर्श रस गंध सूक्ष्म स्थूल पुद्गल ३ हैं। छाया चांदनी घाम वगैरः स्थूल सूक्ष्म ४ हैं, जल अग्नि वगैरः अनेक स्थूल पुद्गल ५ हैं। पृथ्वी विमान पर्वत मकान आदि स्थूल स्थूल पुद्गल ६ हैं। ये छहों तरहके पुद्गल रूपी हैं। परमाणुमें स्पर्श आदि वीस निर्मल गुण हैं वे स्वभावगुण हैं। स्कंधमें विभावगुण हैं।

शब्द, अनेक तरहका बंध, अपेक्षासे सूक्ष्म स्थूल, छह तरहका संस्थान (आकार) अंधकार छाया आतप (धूप) उद्योत आदि पुद्गलोंकी विभावपर्याय हैं। और स्वभावपर्याय परमाणुओंमें ही हैं। शरीर वचन मन श्वासोच्छ्वास इंद्रियें ये भी पुद्गलके पर्याय हैं। ये पुद्गलपर्याय जीवोंको मरण जीवन सुख दुःख आदि अनेक उपकार पहुंचाते हैं। स्कंधमें (परमाणुसमूहमें) कायव्यवहार बहुतकी अपेक्षा है और परमाणुमें उपचारसे कारण होनेकी अपेक्षा कायपना कहते हैं।

जो जीवपुद्गलको गमनमें सहाई हो वह धर्मद्रव्य है। वह धर्मद्रव्य अमूर्त निष्क्रिय नित्य है और मछलियोंको जलकी तरह सहाय करता है प्रेरक नहीं है। जो जीवपुद्गलकी स्थितिमें पथिकों (रास्तागीरों) को छायाकी तरह सहायक हो वह अधर्म द्रव्य है। वह अधर्मद्रव्य नित्य है अमूर्त है और क्रियारहित है। आकाश द्रव्य लोक अलोकके भेदसे दो तरहका है सब द्रव्योंको जगह देनेवाला है और मूर्तिरहित है। जितनी जगहमें धर्म अधर्म काल पुद्गल जीव रहें उतने आकाशको लोकाकाश कहते हैं। उससे बाहर दूसरी द्रव्यसे रहित केवल आकाश है वह अलोकाकाश है। वह अलोकाकाश अनंत है नित्य है अमूर्त है क्रियारहित है और सर्वज्ञ कर देखा गया है।

जो द्रव्योंकी नवीन पुरानी पर्यायों (हालतों) का करानेवाला है समयादि

स्वरूप है वह व्यवहारकाल है । लोकाकाशके प्रदेशोंपर जो एक एक अणु रत्नोंकी राशिकी तरह जुदे २ क्रियारहित ठहरे हुए हैं उन असंख्याते कालाणुओंको जिनेन्द्र देवने निश्चय काल कहा है। धर्म अधर्म एक जीव और लोकाकाशके असंख्याते प्रदेश हैं। कालके प्रदेश नहीं है स्वयं एक प्रदेशी है इसलिये कालके विना पांच द्रव्य अस्तिकाय कहे जाते हैं और कालको मिलाकर वे ही छह द्रव्य जिनमतमें कहे जाते हैं।

जितने आकाशको एक पुद्गलपरमाणु रोकै उतनी जगहको एक प्रदेश कहते हैं। जिस रागादिरूप मलिनपरिणामसे रागी जीवोंके कर्म आते हैं वह परिणाम भावास्रव है। खोटे परिणामोंवाले जीवके जो कारणोंद्वारा पुद्गलोंका कर्मरूपसे आना. वह द्रव्यास्रव है। विस्तारसे तो आस्रवके मिथ्यात्व आदि कारण पहले अनुप्रेक्षाके प्रकरणमें कहे हुए जान लेना। जिस रागद्वेषरूप आत्माके परिणामसे कर्म बँधैं वह परिणाम भावबंध है। भावबंधके निमित्तसे जीव और कर्मका एकमेक मिलजाना वह द्रव्यबंध है और वह बंध प्रकृति स्थिति अनुभाग तथा प्रदेश नामवाला चार तरहका है। वह बंध सब अनर्थोंका करनेवाला और अशुभ है। प्रकृति और प्रदेश ये दो बंध योगोंसे तथा स्थिति और अनुभागबंध ये दुष्ट दो बंध कषायोंसे होते हैं ऐसा मुनीश्वरोंने कहा है।

ज्ञानावरणकर्म जीवोंके मतिज्ञानादि श्रेष्ठ गुणोंको ढंक देते हैं जैसे देवकी मूर्तिको कपड़ा। दर्शनावरणकर्म चक्षुरादि दर्शनोंको रोक देते हैं जैसे अपने कार्यके लिये राजासे मिलनेको आये हुए पुरुषको दरवानियां। शहतसे लिपटी हुई तलवारके समान वेदनीयकर्म मनुष्योंको सरसोंके समान तो सुख देता है लेकिन पीछेसे मेरुपर्वतके समान महान् दुःख देता है। अज्ञानी जीवोंको मोहनीयकर्म दर्शन ज्ञान विचार चारित्र आदि धर्मकार्योंमें मदिराके समान वावला वना देता है।

आयुकर्म कायरूपी वंदीखानेसे जीवोंको जाने नहीं देता जैसे कैदीके हाथ पांओंमें वंधी हुई सांकल। वहींपर दुःख शोकादि सव आपदाओंको देता है। नामकर्म चतेरेके समान जीवोंके विलाव सिंह हाथी मनुष्य देव आदि अनेक आकारोंको वनाता है। गोत्रकर्म कुंभारकी तरह लोकपूज्य उत्तम गोत्रमें अथवा लोकनिंद्य नीच गोत्रमें जीवोंको रख देता है। देखो अंतरायकर्म भंडारी (खजांची) की तरह पुरुषोंके दान लाभादि पांचोंमें हमेशा विघ्न करता है।

इत्यादि और भी वहुतसे स्वभाव आठ कर्मोंके जानना। वे स्वभाव जीवोंके कर्मको आनेके कारण हैं। दर्शनावरणी ज्ञानावरणी वेदनीय अंतराय-इन चार कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ा कोड़ी सागरकी है। मोहनीयकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ा

कोड़ी सागरकी है । नाम और गोत्रकर्मकी वीस कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थिति है। आयुकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरकी है—इस प्रकार आठों कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति जिनेंद्रदेवने कही है।

वेदनीय कर्मकी जघन्यस्थिति वारह मुहूर्त है नाम और गोत्रकर्मकी आठ मुहूर्त जघन्य स्थिति है तथा बांकीके पांच कर्मोंकी अंतर्मुहूर्त जघन्यस्थिति है। इनके वीचकी मध्यम स्थिति अनेक प्रकारकी सब कर्मोंकी जानना। अशुभ कर्मोंका अनुभाग नींब कांजी विष और हालाहल ऐसे चार तरहका है। शुभ कर्मोंका भी अनुभाग गुड़ खांड़ मिश्री और अमृतके समान चार तरहका है। इस तरह क्षण क्षणमें उत्पन्न सब कर्मोंका अनुभाग संसारियोंके सुख दुःख देनेवाला अनेक तरहका है।

संसारी जीवोंके सब आत्मप्रदेशोंमें अनंतानंत सूक्ष्म कर्म परमाणु सब जगह एकमेक होकर मिल जावें उन कर्मपरमाणुओंके वंधको प्रदेशबंध कहते हैं। वह प्रदेश-बंध सब दुःखोंका समुद्र है। इसतरह चार प्रकारका बंध बुद्धिमानोंको दर्शनज्ञान चारित्र तपरूपी वाणोंसे वैरीकी तरह नाश कर देना चाहिये। जो बंध सब दुःखोंका कारण है। रागद्वेपरहित जो चैतन्य परिणाम कर्मोंके आस्रवको रोकनेवाला है वह परि-

णाम भावसंवर है। जो योगियोंकर महाव्रतादि श्रेष्ठ ध्यानोंसे सब कर्मास्रवोंका निरोध किया जाता है वह सुखका करनेवाला द्रव्यसंवर है।

मैंने पहले संवरके कारण महाव्रत परिषहोंका जीतना आदि कहे हैं वे बुद्धिमानोंको जानने चाहिये। जीवोंके निर्जरा सविपाक और अविपाकके भेदसे दो तरहकी होती है। उनमेंसे मुनीश्वरोंके अविपाक और सब जीवोंके सविपाक होती है। मैंने पहले निर्जराका वर्णन विस्तारसे कर दिया है इसलिये अब पुनरुक्त दोषके डरसे नहीं कहता। जो मोक्षार्थी जीवोंका परिणाम सब कर्मोंके नाशका कारण हो वह अतिशुद्ध परिणाम भावमोक्ष जिनेंद्रदेवने कहा है और अंतके शुक्लध्यानके प्रभावसे ज्ञानमयी आत्माको सब कर्मोंसे छूट जाना वह द्रव्यमोक्ष है।

जैसे पैरोंसे लेकर मस्तकतक सैकड़ों बंधनोंसे बंधेहुए पुरुषको बंधनोंके छूट जानेपर हमेशा अत्यंत सुख मालूम होता है उसीतरह असंख्यात कर्मबंधनोंसे सब तरफसे बंधेहुए जीवको मोक्ष होनेसे आकुलतारहित अनंत सुख प्राप्त होता है। कर्मोंसे छूटनेके बाद यह अमूर्त ज्ञानवान् अति निर्मल आत्मा ऊपर जानेका स्वभाव होनेसे कर्मरहित हुआ ऊपरको सिद्धालयमें जाता है। वहांपर निराबाध अनुपम आत्मजन्य विषयातीत आकुलतारहित वृद्धिहानिरहित नित्य अनंत सर्वोत्तम सुखको ज्ञानशरीरी वह सिद्ध परमात्मा भोगता है।

अहमिंद्र वगैरः देव चक्रवर्ती विद्याधर भोग भूमिया वगैरः मनुष्य व्यंतरादि खोटे देव व सिंहादि पशु ये सब जिस विषयजन्य सुखको भोगते हैं और भोगेंगे वह सब विषयसुख इकट्ठा किया जावे उससे भी अनंत गुणा सुख सिद्ध भगवान कर्मरहित हुए एक समयमें भोगते हैं। जो सुख अनंत है विषयोंसे रहित है। ऐसा जानकर हे बुद्धिमानों! तुम प्रमादरहित होकर अनंत गुण सुखके लिये तप व रत्नत्रय वगैरःसे मोक्षको साधो। इसप्रकार मनुष्य विद्याधर इंद्रोंकर पूजित वे जिनेंद्र भगवान् सब जीवगणोंको तथा गणधरोंका सब सात तत्त्वोंका व्याख्यान दिव्यवाणीसे करते हुए। वे सात तत्व मोक्षगमनके कारण हैं और दर्शनज्ञानके बीजरूप हैं, भव्यजीवोंके ही योग्य हैं।

इसप्रकार श्रीसकलकीर्तिदेव विरचित महावीरपुराणमें गौतमस्वामीके प्रश्नोंसे
सात तत्त्वोंका कहनेवाला सोलहवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १६ ॥

सत्रहवां अधिकार ॥ १७ ॥

वंदे जगत्त्रयीनाथं केवलश्रीविभूषितम् ।
विश्वतत्त्वार्थवक्तारं वीरेशं विश्वबांधवम् ॥ १ ॥

अर्थ—तीन जगतके स्वामी केवल ज्ञानलक्ष्मीसे शोभायमान सब तत्वार्थोंको कहनेवाले और सब भव्योंके वंधु ऐसे श्रीमहावीर स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ।

अथानंतर वे सात तत्व पुण्य और पाप इन दोनोंसहित मिलकर नौ पदार्थ कहे जाते हैं वे पदार्थ सम्यक्त्व और ज्ञानके कारण हैं । उसके वाद वे तीर्थेश सर्वज्ञ महावीर प्रभु भव्योंके संवेग (संसारसे भय) होनेकेलिये पुण्यपापके कारणोंको और फलोंको ऐसे कहते हुए । एकांत आदि पांच मिथ्यात्व, दुष्ट कपाय, असंयम, निंदनीक सब प्रमाद, कुटिलयोग, आर्त रौद्ररूप खोटे ध्यान, कृष्णादि तीन खोटी लेशायें, तीन शल्य मिथ्या गुरु देव आदिका सेवन, धर्मको रोकना, पापका उपदेश देना, इन सब कारणोंसे तथा अन्य भी खराब आचरणोंसे उत्कृष्ट पाप होता है ।

पराई स्त्री धन कपड़े वगैरःमें लंपटता (अधिक चांह) वाला रागसे दूषित

क्रोध मोहरूपी आगसे तपा हुआ विचाररहित दयाहीन मिथ्यात्वे वसा हुआ पाप शास्त्रोंमें लगा हुआ और विषयोंसे व्याकुल ऐसा मन मनुष्योंके घोर पापको पैदा करने-वाला होता है। पराई निंदा करनेवाले अपनी प्रशंसा करनेवाले असत्यसे दूषित पाप कर्मके कहनेवाले मिथ्या शास्त्रोंके अभ्यासमें लीन धर्मको दोप देनेवाले और जिन सूत्रके विरुद्ध—ऐसे वचन पुरुषोंको पापका संग्रह करनेवाले होते हैं।

खोटे कर्म करनेवाला दुष्टरूप मारना बांधना करनेवाला विकाररूप दान पूजासे रहित अपनी इच्छासे आचरण करने वाला तप और व्रतसे रहित ऐसा शरीर पापियोंके नरकका कारण ऐसे महान् पापको पैदा करता है। जिनेंद्र देव जिन सिद्धांत निर्ग्रंथ गुरु जिन धर्मो इन सबकी निंदा करनेसे मिथ्यातियोंके महान पाप होता है। इस प्रकार वह जिनेश इत्यादि महा पापके कारण बहुतसे निंदनीक कामोंको भव्य जीवोंको संसा-रसे भय होनेके लिये उपदेश करते हुए।

दुष्ट स्त्री लोकानिंद्य और शत्रुके समान भाई दुर्व्यसनी पुत्र प्राण लेनेवाले कुटुंबी जन रोग क्लेश दरिद्र अवस्था वध बंधन—ये सब दुःख पापियोंके पापके उदयसे होते हैं। अंधे गूंगे कुरूप (बदमूरत) अंगहीन सुखरहित पांगले बहरे कूबड़े पराये घर दासपना करनेवाले दीन दुर्बुद्धि निंदनीक दुष्ट पापमें लीन पापशास्त्रोंमें लीन ऐसे प्राणी

पापके फलसे होते हैं । वे पापी परलोकमें भी पापके फलसे वचनसे अकथनीय दुःख पाते हैं ।

जो कि सब दुःखोंके समुद्र सातों नरकोंमें जन्म लेते हैं । सब दुःखोंकी खानि तिर्यंच योनिमें जन्म लेते हैं जहां सुख बिलकुल नहीं है । मनुष्यगतिमें भी चांडालकुल म्लेच्छ जाति जोकि पापोंकी खानि है उसे पाते हैं । अधोलोक मध्यलोक ऊर्ध्व लोकमें जो कुछ उत्कृष्ट दुःख हैं अथवा क्लेश दुर्गति दुःख हैं वे सब पापके उदयसे मिलते हैं । इस प्रकार पापका फल जानकर प्राणोंके जानेपर भी सैंकड़ों कार्य होनेपर भी सुख चाहनेवालोंको कभी पाप नहीं करने चाहिये । इस तरह भव्योंको भय होनेके लिये वे अर्हंत प्रभु पापफलोंका व्याख्यान कर फिर पुण्यके कारणोंको इस तरह कहते हुए ।

सब पापहेतुओंसे उल्टे शुभ आचरण करनेसे सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रसे अणुव्रत महाव्रतोंसे कषाय इंद्रिय योगोंके रोकनेसे नियमादिसे श्रेष्ठदान अर्हंतकी पूजन गुरुभक्ति व सेवा करनेसे शुभभावनासे ध्यान अध्ययन आदि शुभकार्योंसे और धर्मोपदेशसे बुद्धिमानों उत्कृष्ट पुण्यकी प्राप्ति होती है । वैराग्यमें लीन धर्मसे वासित पापसे दूर रहनेवाला परकी चिंतासे रहित अपने आत्माकी चिंतामें तत्पर देव गुरु शास्त्रोंकी परीक्षा करनेमें समर्थ कृपासे व्याप्त—ऐसा मन पुरुषोंके उत्कृष्ट पुण्यको पैदा करता है ।

पांच परमेष्ठियोंका जप स्तोत्र तथा गुणोंके कहनेवाले अपनी निंदा करनेवाले दूसरोंकी निंदासे रहित कोमल–धर्मोपदेश देनेवाले इष्ट अर्हतपदादिके देनेवाले सत्य मर्यादारूप–ऐसे वचन सज्जनोंके परमपुण्यको पैदा करते हैं। कायोत्सर्ग (खड़ा रहना) आसन (बैठना) रूप, जिनेंद्रकी पूजामें उद्यमी गुरुकी सेवामें लीन पात्रको दान देनेवाला विकाररहित शुभ कार्योंका करनेवाला समताको प्राप्त–ऐसा शरीर बुद्धिमानोंके आश्चयकारी सब सुखोंके करनेवाले पुण्यको उत्पन्न करता है।

जो वस्तु अपनेको अनिष्ट (खराब) लगती हो उसे दूसरोंके लिये भी न विचार करे उस भव्य जीवके हमेशा परम पुण्य होता है इसमें कुछ भी संदेह न समझना। इस तरह वे तीर्थराज श्रीमहावीर प्रभु जीव समूहोंको व गणधरोंको संवेग होनेके लिये पुण्यके बहुत कारण कह कर उसके बाद पुण्यके अनेक तरहके फलोंको कहते हुए। सुंदर अंगवाली प्यारी स्त्री, कामदेवके समान खूब सूरत पुत्र, मित्रके समान भाई, सुखका देनेवाला कुटुंब, पहाड़के समान हाथी वगैरः, कविके वचन द्वारा भी नहीं कहा जाय ऐसा सुख, महान् भोग उपभोग, सुंदर शरीर, शुभ वचन, करुणा सहित मन, रूप लावण्यता इनको तथा अन्य भी दुष्प्राप्य संपदाओंको ये संसारी जीव पुण्यके उदयसे पा सकते हैं।

तीन जगतमें होनेवाली दुर्लभ पुण्यके करनेवाली ऐसी लक्ष्मी धर्मात्माओंको पुण्यके उदयसे घरकी दासीके समान अपने आप वशमें हो जाती है । तीन जगतके स्वामियोंकर पूजा करने योग्य और भव्योंको मुक्तिका कारण ऐसा उत्कृष्ट सर्वज्ञका वैभव (ठाठ) पुण्यके उदयसे ही उत्पन्न होता है । सब देवोंकर पूजनीक सब भोगोंका स्थान सब शोभासे भूषित ऐसे इंद्रपदको बुद्धिमान पुरुष पुण्यके उदयसे ही पाते हैं ।

निधि और रत्नोंसे पूर्ण और सुखके करनेवाली ऐसी छह खंडकी लक्ष्मी पुण्यात्माओंको पुण्यके उदयसे मिलती है । दुनियांमें अथवा तीन जगतमें जो कुछ सार (उत्तम) वस्तु दुर्लभ है वह सब पुण्यके उदयसे उसी क्षणमें मिलती है । इसलिये हे प्राणियों यदि तुम सुख चांहते हो तो पूर्व कहा हुआ पुण्यका अनेक तरहका उत्तम फल जानकर प्रयत्नसे (कोशिशसे) ऊंचा पुण्यकार्य करो । इसप्रकार पुण्यपाप सहित सात तत्वोंको कहकर वे जिनपति सब जीव समूहोंको हेय (त्यागने योग्य) उपादेय (ग्रहण योग्य) वस्तुका व्याख्यान करते हुए ।

भव्यजीवोंको जीवसमूहोंके बीचमें अर्हंत आदि पांच परमेष्ठी उपादेय हैं जो कि सब भव्योंका हित चाहनेवाले हैं । निर्विकल्पपदपर रहनेवाले मुनियोंको ज्ञानवान् सिद्धके समान गुणोंका समुद्र ऐसा अपना आत्मा ही उपादेय है अथवा व्यवहारदृष्टिसे

अलग ऐसे बुद्धिमानोंको शुद्ध निश्चयनयसे सभी जीव उपादेय हैं। व्यवहारनयसे सब मिथ्यादृष्टि अभव्य विषयोंमें लीन पापी और धूर्त जीव हेय हैं। सरागी जीवोंको धर्मध्यानके लिये अजीव पदार्थ कहीं आदेय हैं और विकल्पोंरहित योगियोंके सब अजीवतत्व हेय हैं।

पुण्यकर्मका आस्रव और बंध कहीं सरागियोंके पापकर्मकी अपेक्षासे ग्रहण करने योग्य हैं और मोक्षके चाहनेवालोंको मुक्तिके लिये दोनों ही हेय हैं। पापका आस्रव और बंध ये दोनों तो हमेशा सब तरहसे हेय ही हैं क्योंकि ये सब दुःखोंके करनेवाले हैं विना उपाय किये अपने आप होते हैं। संवर और निर्जरा ये दोनों सब उपायोंसे सब अवस्थाओंमें आदेय हैं। मोक्ष तत्त्व तो अनंत सुखका समुद्र होनेसे साक्षात् उपादेय ही है। इस प्रकार हेय उपादेयको जानकर हे बुद्धिमानो हेय वस्तु प्रयत्नसे (तरकीबसे) दूरकर उत्कृष्ट आदेयस्वरूप सब वस्तुको ग्रहण करो।

पुण्यास्रव पुण्यबंधका मुख्यतासे कर्ता सम्यग्दृष्टी गृहस्थ व्रती व सरागसंयमी होता है। और कभी मिथ्यादृष्टि भी कर्मोंके मंद उदय होनेपर कायको क्लेश देकर भोगोंके पानेके लिये पुण्यरूप आस्रव बंध कर डालता है। मिथ्यादृष्टि जीव दुराचरणी होनेसे करोड़ों खोटे आचरणों करके मुख्यतासे पापास्रव और पाप बंधका कर्ता है।

इस पृथ्वीपर संवर आदि तीन तत्त्वोंके कर्ता जितेंद्री बुद्धिमान रत्नत्रयसे शोभायमान ऐसे केवल (सिर्फ) योगी ही हैं। भव्य जीवोंको संवरादिकी सिद्धिके लिये पांच परमेष्ठी और निर्विकल्प अपना आत्मा ही कारण है।

अपने और अन्य अज्ञानियोंके पाप आस्रव और पापबंधके कारण तथा संसारमें भटकनेके कारण मिथ्यादृष्टि ही हैं। पांच प्रकारका अजीवतत्त्व सब बुद्धिमान भव्यजीवोंको सम्यग्दर्शन व ज्ञानका कारण है। सम्यग्दृष्टियोंको पुण्यास्रव पुण्यबंध ये दोनों तीर्थंकरकी विभूति वगैरःके देनेवाले हैं और मिथ्यादृष्टियोंको संसारके करनेवाले हैं। पापास्रव पापबंध ये दोनों केवल संसारके ही कारण हैं और सब दुःखोंको करनेवाले हैं तथा अज्ञानियोंके ही होते हैं।

संवर और निर्जरा ये दोनों मोक्षके कारण हैं। मोक्ष तो साक्षात् अनंतसुखसमुद्रका हेतु है। इस प्रकार सब पदार्थोंके स्वामी हेतु फल वगैरः अच्छी तरह कहकर उसके बाद वे जिनेंद्रदेव बाकीके प्रश्नोंका उत्तर कहते हुए॥ जो जीव सात खोटे व्यसनोंमें लीन, पराई स्त्री और पराया धन चाहनेवाले, बहुत आरंभ करनेमें जिनका उत्साह है, बहुत लक्ष्मीके इकट्ठे करनेमें उद्यमी, दुष्ट कार्योंके करनेवाले, दुष्ट स्वभावी निर्दयी, रौद्रचित्तवाले, रौद्रध्यानमें लीन, हमेशा विषयरूपी मांसमें लंपट, निंदा योग्य

कार्य करनेवाले, जैनमतकी निंदा करनेवाले, जिनदेव जिनधर्मी और जैनसाधुओंसे प्रतिकूल, मिथ्याशास्त्रोंके अभ्यासमें लगे हुए, मिथ्यामतके अभिमानसे उद्धत, कुदेव कुगुरुके भक्त, कुकार्य और पापोंकी प्रेरणा करनेवाले, दुर्जन, अत्यंतमोही पाप करनेमें पंडित (चतुर), धर्मसे अलग रहनेवाले, शीलरहित, दुराचरण करनेवाले (वदचलन) सव व्रतोंसे मुंह मोड़नेवाले कृष्णलेश्यारूप परिणामोंवाले, पांच महापापोंके करनेवाले--इत्यादि अन्य भी वहुतसे पापकार्योंके करनेवाले पापी हैं वे सव पापकर्मसे उत्पन्न पापके उदयसे रौद्रध्यानसे मरकर पापियोंके घर ऐसे नरकोंमें जाते हैं।

वे नरक सात हैं, पापकर्मोंका फल देने योग्य हैं, सव दुःखोंकी खानि हैं, जहां आधे निमेषमात्र भी सुख नहीं है ॥ जो जीव मायाचारी (दग़ावाज़) हैं, अति कुटिल करोड़ों कार्य करते हैं पराई लक्ष्मी हरलेनेमें लगे हुए हैं, आठों पहर खानेवाले हैं, महान् मूर्ख, मिथ्याशास्त्रोंके जाननेवाले, पशु और वृक्षोंकी सेवा करनेवाले प्रतिदिन वहुतवार स्नान करनेवाले, शुद्ध होनेके लिये कुतीर्थोंमें यात्रा करनेवाले, जिनधर्मसे विलकुल दूर, व्रत शील वगैरहसे रहित, निंदनीक, कपोत लेश्यावाले, हमेशा आर्तध्यान करनेवाले तथा अन्य भी खोटे कार्योंमें प्रेम रखनेवाले अज्ञानी जीव अंतमें दुःखी हुए आर्तध्यानसे मरकर तिर्यंचगतिको (पशुगतिको) जाते हैं।

वह पशुगति बहुत दुःखोंकी खानि है, शीघ्र ही जन्म मरणकर पूर्ण है पराधीन है और सुखरहित है ॥ जो जीव नास्तिक हैं, दुराचरणी हैं, परलोक धर्म तप चारित्र जिनेंद्र शास्त्रादिकोंको नहीं माननेवाले, दुष्ट बुद्धि, अत्यंत विषयोंमें लीन तीव्र मिथ्यात्वसे पूर्ण—ऐसे अज्ञानी अनंत दुःखोंका समुद्र निगोदमें जाकर उत्पन्न होते हैं। वहां पर वे दुष्ट पापके उदयसे वचनसे अकथनीय जन्म मरणके महान् दुःखको अनंत कालतक भोगते हैं ॥

जो जीव तीर्थंकरकी श्रेष्ठ गुरुओंकी ज्ञानियोंकी धर्मात्माओंकी और तपस्वियोंकी सेवाभक्ति टहल पूजा हमेशा करते हैं, महाव्रतोंको अर्हंत देव और निर्ग्रंथगुरुकी आज्ञाको पालते हैं सब अणुव्रतोंको पालते हैं, अपनी शक्तिके माफिक बारह तपोंको करते हैं, कषाय और इंद्रियरूप चोरोंको दंड देकर जितेंद्री हुए आर्तरौद्र ध्यानोंको छोड़कर धर्मशुक्लध्यानोंको चिंतवन करते हैं, शुभ लेश्या परिणामवाले, हृदयमें सम्यग्दर्शनरूपी हार पहनते हैं; कानोंमें ज्ञानरूपी कुंडल पहनते हैं, मस्तकमें चारित्ररूपी मुकुट बांधते हैं, संसार शरीर और भोगोंमें अत्यंत संवेगको सेवन करते हैं, हमेशा शुद्ध आचरणोंकेलिये शुभ भावनाओंका चिंतवन करते हैं, दिनरात अपनी सब शक्तिसे उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्म पालते हैं और दूसरोंको भी अच्छीतरह उसका उपदेश देते हैं।

इत्यादि कार्योंसे तथा अन्य भी शुभ आचरणोंसे जो महान् धर्मका उपार्जन करते हैं वे चाहें मुनि हों वा श्रावक हों सभी भव्यपुरुष शुभध्यानसे मरकर स्वर्गको जाते हैं।

वह स्वर्ग सब इंद्रियसुखोंका समुद्र है सब दुःखोंसे रहित है पुण्यवानोंका जन्मस्थान है। जो सम्यग्दर्शनसे भूषित हैं वे चतुर नियमसे परम कल्पस्वर्गोंमें जाते हैं लेकिन व्यंतरादि भवनत्रिक देवोंमें कभी उत्पन्न नहीं होते। जो अज्ञानी अज्ञानतपस्यासे कायक्लेश करते हैं वे भी अहो व्यंतरादिक देवगतिको जाते हैं। स्वभावसे कोमल परिणामी सरलस्वभावी संतोषी सदाचारी हमेशा मंदकषायी शुद्ध चित्तवाले जिनेंद्रदेव गुरु धर्मकी तथा धर्मात्माओंकी विनय करनेवाले तथा अन्य भी निर्मल आचरणोंसे शोभायमान जो जीव हैं वे पुण्यके उदयसे आर्यखंडमें श्रेष्ठकुलमें राज्य वगैरःकी लक्ष्मीके सुख सहित मनुष्यगतिको पाते हैं। जो जीव भक्तिसे उत्तमपात्रको आहारदान देते हैं वे महाभोग और सुखोंसे भरी हुई भोगभोमिमें जन्म लेते हैं।

जो मायाचार करने वाले काम सेवनसे अतृप्त हैं, शरीरमें विकारको करनेवाले ऐसे स्त्रीके भेप वगैरःको धारनेवाले, मिथ्यादृष्टि रागसे अंधे शीलरहित अज्ञानी मनुष्य हैं वे मरकर स्त्रीवेद कर्मके उदयसे स्त्री पर्यायको पाते हैं। जो शुद्ध आचरण रखनेवाली मायाचारी कुटिलता रहित विचारोंमें चतुर दान पूजा आदिमें लीन थोड़े

इंद्रिय सुखमें संतोष रखनेवालीं दर्शन ज्ञानसे भूषित ऐसीं स्त्रियां हैं वे पुंवेद कर्मके उदयसे इस जन्ममें मनुष्य होते हैं।

जो अत्यंत कामसेवनमें अंधे पर स्त्री आदिमें लंपटी अनंग क्रीड़ामें लीन हैं वे मूर्ख नपुंसक लिंगी होते हैं। जो शठ पशुओंके ऊपर अधिक बोझा लादते हैं, रास्तेमें चलते हुए जीवोंको विना देखे पैरोंसे मार देते हैं। खोटे तीर्थोंमें पापकर्म करनेके लिये भटकते हैं वे निर्दयी मरकर आंगोपांग कर्मके उदयसे पांगले होते हैं व लोकमें निंदा-योग्य हैं। जो मूर्ख दूसरेके दोषोंको न सुनकरके भी 'हमने सुने हैं' ऐसा कह देते हैं, ईर्षासे दूसरोंकी निंदा सुनते हैं कुकथा खोटे शास्त्रोंको सुनते हैं। केवली शास्त्र संघ और धर्मात्माओंको दोष लगाते हैं वे ज्ञानावरणी कर्मके फलसे बहरे होते हैं।

जो नहीं दीखते पराये दोषोंको दीखते हुए कहते हैं, नेत्रोंको विकार स्वरूप करते हैं पराई स्त्री (औरत) के स्तन योनि आदि अंगोंको बड़े आदरसे देखते है, कुतीर्थ कुदेव कुलिंगियोंका सत्कार करते हैं वे दुष्ट चक्षु दर्शनावरणी कर्मके उदयसे अत्यंत दुःखी अंधे होते हैं। जो शठ स्त्रीकथा वगैरः विकथाओंको प्रतिदिन वृथा ही कहते रहते हैं, निर्दोषी अर्हंत देव शास्त्र सच्चे गुरु व धर्मात्माओंको दोष लगाते हैं, पाप शास्त्रोंको पढते हैं और अपनी इच्छाके अनुसार प्रसिद्धि प्रतिष्ठा आदिकी इच्छासे

चंचल चित्त हुए विनयरहित जैन शास्त्रोंको वांचते हैं, धर्म सिद्धांत तत्त्वार्थोंको खोटी युक्तियोंसे दूसरोंको समझाते हैं वे मूर्ख ज्ञानावरण कर्मके फलोदयसे वाणीरहित हुए गूंगे होते हैं।

जो अपनी इच्छासे हिंसादि पांच पापोंमें प्रवर्तते हैं, श्रीजिनेंद्र देवकर कहे हुए पदार्थोंको मतवालोंकी तरह ग्रहण करते हैं। देव शास्त्र गुरु धर्म चाहें सच्चे हों या झूंठे हों सबको समान समझकर पूजते हैं वे मतिज्ञानावरण कर्मके उदयसे विकलेंद्रिय होते हैं। जो कुबुद्धिसे विषयरूपी मांसके लोभसे सातों खोटे व्यसनोंको सेवन करते हैं वे मूर्ख खोटी गतिमें जाते हैं।

जो व्यसनी मिथ्यादृष्टि पुरुषोंसे मित्रता करते हैं और साधुओंसे दूर रहते हैं वे पापी नरकादिगतियोंमें भ्रमणकर नरकादि गतिके लिये दुर्व्यसनोंमें आसक्त (लीन) हुए अत्यंत पाप उपार्जन करते हैं। जो अति विषयी तप यम व्रत आदिके विना धर्म रहित हुए अनेक तरहके भोगोंसे हमेशा शरीरको पुष्ट करते हैं, रातमें अन्नादिका आहार करते हैं न खाने योग्य चीजोंको खाते हैं दूसरे जीवोंको विनाकारण सताते हैं वे करुणा रहित पापी असाता वेदनीय कर्मके उदयसे सब रोगोंसे घिरे हुए अत्यंत रोगकी वेदना (तकलीफ़) से घबराये हुए रोगी होते हैं।

जो शरीरसे ममता छोड़कर तप धर्मको आचरण करते हैं, सब जीवोंको अपने समान जानकर कभी नहीं मारते हैं और अपने तथा परके आक्रंदन (चिल्लाके रोना) दुःख शोक वगैरहको नहीं होने देते वे शुभकर्मके उदयसे सबरोगोंसे रहित निरोगी हुए सुख पाते हैं । जो आभूषण वगैरःसे शरीरको नहीं सजाते, तप नियम योगवगैरःसे कायको क्लेश देनेरूप व्रत करते हैं और परमभक्तिसे जिनेन्द्रदेव तथा योगियोंके चरण कमलोंकी सेवा करते हैं वे शुभकर्मके फलसे दिव्य रूपवाले होते हैं ।

जो पशुसमान अज्ञानी शरीरको अपना मानकर साफ रखनेके लिये अच्छीतरह धोते हैं और रागी होकर आभूषणोंसे सजाते हैं तथा शुभ होनेके लिये कुदेव कुगुरु कुधर्मको सेवन करते हैं वे अशुभ कर्मके उदयसे डरावने कुरूप (बदसूरत) होते हैं । जो जिनेंद्र देव जैन शास्त्र निर्ग्रंथयोगियोंकी बहुत भक्ति करते हैं, तप धर्म व्रत नियमादिकोंको पालते हैं, शरीरसे ममता छोड़कर इंद्रियरूपी चोरोंको जीतते हैं वे सुभग कर्मके उदयसे लोकमें सबके नेत्रोंको प्यारे भाग्यशाली होते हैं ।

मैल वगैरहसे लिपटे शरीरवाले मुनिको देखकर जो शठ रूपादिके घमंडसे घृणा करते हैं, पराई स्त्रीको चाहते हैं और अपने कुटुंबियोंसे झूठ बोलकर द्वेष करलेते हैं वे दुर्भगनामकर्मके उदयसे सबसे निंदा किये गये दुर्भग (दरिद्री) होते हैं । जो दूसरोंके

ठगनेमें उद्यमी हुए खोटी सलाह देते हैं और विना विचार के देवशास्त्र गुरु चाहें सच्चे हों या झूठे सभीकी पूजा और भक्ति धर्म समझके करते हैं वे मूर्ख मतिज्ञानावरणकर्मके उदयसे निंदनीक कुबुद्धि होते हैं। जो तप धर्मादि कार्योंमें दूसरोंको अच्छी सलाह देते हैं हमेशा तत्त्व अतत्त्वका विचार करते हैं वाद धर्मादि सार वस्तुको ग्रहण करते हैं अन्य असार वस्तुका त्याग करते हैं वे बुद्धिमानोंमें उत्तम मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमसे बड़े भारी विद्वान् होते हैं।

जो खल (दुष्ट) ज्ञानके घमंडसे अभिमानी हुए पढाने योग्यको नहीं पढाते और जानते हुए अपने तथा दूसरोंके खोटे आचरण (वर्ताव) की प्रवृत्ति करते हैं, हितके करनेवाले जिनागमको छोड़ खोटे शास्त्रोंको पढते हैं, शास्त्रसे निंदित कडुवे दूसरोंको पीड़ा पहुंचानेवाले धर्मरहित ऐसे असत्यवचनोंको बोलते हैं वे श्रुतज्ञानावरणीकर्मके फलसे निंदनीक महामूर्ख होते हैं।

जो हमेशा श्री जिनागमको आप पढते हैं और दूसरोंको पढाते हैं तथा काल आदि आठ प्रकारकी विधीसे जैनशास्त्रका व्याख्यान करते हैं, धर्मकी प्राप्तिके लिये धर्मोपदेश वगैरःसे बहुत भव्योंको ज्ञान कराते हैं और आप भी निर्मल धर्मकार्यमें हमेशा लगे रहते हैं, हितकारी सत्यवचन बोलते हैं असत्यवचन कभी नहीं बोलते—वे श्रुताव-

रणकर्मके मंद होनेसे जगत्पूज्य विद्वान होते हैं। जो संसार शरीर भोगोंसे वैरागी होकर जिनेंद्रदेव गुरुके श्रेष्ठ गुणोंको और धर्मको धर्मकी प्राप्तिके लिये हमेशा मनमें चिंतवन करते हैं, जो आर्जवधर्मके सिवाय कुटिलता कभी नहीं रखते ऐसे शुभके करनेवाले शुभपरिणामी होते हैं।

जो कुटिलपरिणामी पराई स्त्री हरने आदिको हमेशा चित्तमें विचारते रहते हैं, धर्मात्माओंका बुरा चांहते हैं और दुर्बुद्धियोंके खोटे आचरणोंको देख मनमें वहुत प्रसन्न होते हैं वे अशुभकर्मके उदयसे पाप कमानेके लिये अशुभ परिणामी होते हैं। जो तप व्रत क्षमा वगैरहसे, उत्तम पात्रदान पूजा वगैरःसे और दर्शन ज्ञान चारित्रसे हमेशा धर्म करते हैं वे सम्यग्दृष्टि स्वर्गादिके सुख भोगकर फिर ऊंच पदकी प्राप्तिके लिये पुण्यके उदयसे धर्मकार्यके करनेवाले धर्मात्मा होते हैं।

जो दुष्ट हिंसा झूठ वगैरः कार्योंसे हमेशा पापको कमाते हैं और दुर्बुद्धिसे विषयोंमें लीन हुए मिथ्याती देवादिकोंकी भक्ति करते हैं उसके फलसे नरकादिमें वहुत कालतक महान दुःख भोगकर फिर भी पापके उदयसे नरकादि गतिमें जानेके लिये पाप करनेवाले पापी होते हैं। जो अत्यंत भक्तिसे प्रतिदिन उत्तम पात्रोंको दान देते हैं जिनेंद्रके चरणकमलोंकी पूजा करते हैं गुरुके चरणकमलोंकी तथा जैनशास्त्रकी सेवा

पूजा करते हैं और भाग्यसे मिले हुए वहुत भोगोंको धर्मकी सिद्धिके लिये छोड़ देते हैं वे इस लोकमें धर्मके प्रभावसे महान् भोगादि संपदाओंको पाते हैं।

जो इस संसारमें दिनरात अन्याय कार्योंसे भोगोंकी इच्छा करते हैं और वहुत भोगोंके सेवन करनेसे भी संतोप नहीं पाते, पात्रदान जिनेन्द्रपूजा सुपनेमें भी नहीं करते, वे पापी पापके फलसे भोगादिसे रहित दीन (भिखारी) होते हैं। जो हमेशा धर्मका सेवन करते हैं, जिनेश्वर देवकी पूजा करते हैं, सुपात्रोंको भक्तिसहित दान देते हैं, तप व्रत यम आदिको पालते हैं और लोभसे दूर हैं ऐसे सत्पुरुषोंके पास पुण्यके उदयसे जगत्में श्रेष्ठ लक्ष्मी अपने आप आजाती है।

जो समर्थ होने पर भी पात्रदान जिनपूजा धर्मका काम और जैनियोंका उपकार नहीं करते तथा लोभसे सव लक्ष्मीके पानेकी इच्छा करते हैं वे धर्मव्रतसे रहित हुए पापके फलसे दुःखी हुए जन्मजन्ममें निर्धन (दरिद्री) होते हैं। जो पशुओंका व मनुष्योंका उनके वाल वच्चे वगैरः कुटुंवियोंसे वियोग करा देते हैं और पराई औरत लक्ष्मी व अन्य वस्तुओंको हर लेते (चुरा लेते) हैं वे शीलरहित पापी अशुभ कर्मके उदयसे निश्चयकर जगह २ पुत्र भाई प्यारी स्त्री लक्ष्मी वगैरः इष्ट वस्तुओंसे वियोग पाते हैं। जो दूसरे जीवोंको वियोग ताड़ना (मारना) वगैरः से दुःखी नहीं

करते, हमेशा जैनियोंको मनोवांछित संपदासे पालते हैं, हमेशा दान पूजा आदिसे विधिसहित धर्मका सेवन करते हैं और उससे एक मोक्षके सिवाय दूसरे स्त्री पुत्र धनादिके सुखकी इच्छा नहीं करते उन पुण्यात्माओंके पुण्यके उदयसे मनोवांछित पुत्र स्त्री वहुत धनका संयोग (मिलना) अपने आप हो जाता है।

जो धर्मके चाहनेवाले पात्रोंको हमेशा दान देते हैं और जिनप्रतिमा जिनमंदिर पाठशाला आदिमें अपनी सिद्धिके लिये भक्तिसे धन खर्च करते हैं उन महा दानियोंका दातृत्वगुण सब जगह प्रसिद्ध होजाता है इसलिये यहां भी प्रतिष्ठा और परलोकमें भी कल्याण होता है। जो कृपण (कंजूस) पात्रोंको दान कभी नहीं देते और जिनपूजा वगैरःमें धन नहीं खर्च करते परंतु तीन लोक लक्ष्मीका सुख चाहते ही हैं ऐसे अज्ञानी महालोभी पापके फलसे वहुत कालतक खोटी गतिमें भटककर फिर सर्प वगैरहकी गतिमें जानेकेलिये कृपण उत्पन्न होते हैं।

जो अर्हंत और गणधर आदि मुनियोंके तथा धर्मात्माओंके उत्तम गुणोंको उन गुणोंकी प्राप्तिके लिये हमेशा चिंतवन करते हैं वे गुणग्रहण स्वभाववाले दोषोंसे दूर रहनेवाले बुद्धिमानों कर पूजित गुणी होते हैं। जो मूढ गुणी पुरुषोंको दोषोंको ग्रहण करते हैं गुणोंको कभी नहीं ग्रहण करते, निर्गुणी कुदेव आदिकोंके निष्फल गुणोंको

याद करते हैं तथा मिथ्यामार्गी भेषधारी पाखंडियोंके दोषोंको कभी नहीं जानते वे इस संसारमें विना गंधके फूलके समान निर्गुणी होते हैं।

जो धर्मके लिये मिथ्यादृष्टि देवोंकी खोटे भेषधारी साधुओंकी सेवा भक्ति करते हैं और श्रीजिनदेव धर्मात्मा उत्तम योगियोंकी कभी सेवा नहीं करते वे पापी पापके फलसे पशुके समान पराधीन हुए जगह २ पराई नौकरी करते फिरते हैं। जो हमेशा तीन लोकके स्वामी अर्हंत प्रभुकी तथा गणधर जिनागम योगियोंकी सेवा करते हैं और सव मिथ्यामतोंको छोड़कर मनवचनकायको शुद्धकर अर्हंत आदिकी पूजा नमस्कार करते हैं वे पुण्यके उदयसे इस संसारमें सव संपदाओंके स्वामी होते हैं।

जो निर्दयी व्रतरहित हुए अपनी संतान वढानेके लिये पराये वालकोंको मार डालते हैं और वहुत मिथ्यात क्रियाओंको करते हैं उन मिथ्यातियोंके मिथ्यात्वकर्मके फलसे थोड़ी उम्रवाले पुत्र होते हैं और वे पापी पुत्र शीघ्र मरजाते हैं। जो चंडी क्षेत्र-पाल गौरी भवानी आदि मिथ्याती देवताओंकी पूजा सेवा पुत्रके लाभ होनेके लिये करते हैं लेकिन पुत्र आदि सव कार्योंको सिद्ध करनेवाले अर्हंत प्रभुकी सेवा नहीं करते वे मिथ्याती मिथ्यात्वकर्मके उदयसे भवभवमें संतानहीन वंध्यापनेवाली स्त्रियोंको पाते हैं। जो दूसरोंके पुत्रोंको अपनी संतानके समान समझकर कभी नहीं मारते, मिथ्या-

त्वको शत्रुके समान छोड़कर अहिंसादि व्रतोंको सेवन करते हैं और अपनी इष्टसिद्धिके लिये जिनेंद्र सिद्धांत व योगियोंको पूजते हैं उनके शुभकर्मके उदयसे दिव्यरूपवाले और चिरजीवी पुत्र होते हैं।

जो प्राणी तप नियम श्रेष्ठध्यान कायोत्सर्ग आदि धर्मकार्योंमें व कठिन दीक्षा लेनेमें कमज़ोर हुए डरते हैं वे पापके उदयसे इस लोकमें सभी कार्य करनेमें असमर्थ कातर (दीन) उत्पन्न होते हैं। जो अपनी धीरता (हिम्मत) प्रगट करके कठिन तप ध्यान अध्ययन योग कायोत्सर्ग—इनको आचरते हैं, अपनी शक्तिके अनुसार सब कष्ट और परीषहाओंको कर्मरूपी वैरीके मारनेके लिये सहते हैं वे पुण्यके उदयसे धीर अर्थात् सब कर्मोंके करनेमें समर्थ होते हैं।

जो दुष्ट जिनेंद्रदेवकी गणधर जैनशास्त्र निर्ग्रंथमुनि श्रावक आदि धर्मात्माओंकी निंदा (बुराई) करते हैं और पापी मिथ्यादेव शास्त्र साधुओंकी प्रशंसा (भलाई) करते हैं वे अयशकर्मके उदयसे दोषोंकर पूर्ण हुए तीन जगत्में निंदायोग्य होते हैं। जो दिगंबर गुरुओंकी व ज्ञानी गुणी सज्जन सुशील पुरुषोंकी हमेशा भक्तिसेवा पूजा करते हैं और सब व्रतोंके साथ मनवचनकायसे शीलको पालते हैं वे धर्मके फलसे स्वर्गमोक्षमें जानेवाले शीलवान् होते हैं।

॥१३॥

जो शीलरहित दुष्ट कुदेव कुशास्त्र कुगुरु और पापियोंकी पूजा नमस्कार वगैरःसे सेवा करते हैं, व्रतसे रहित हैं और विपयसुखकी हमेशा इच्छा करते हैं वे पापी अशुभ कर्मके उदयसे दुर्गतिको जानेवाले शीलरहित कुशीली होते हैं। जो उन गुणोंकी प्राप्तिके लिये गुणोंके समुद्र ज्ञानी गुरुओंकी जैनयतियोंकी व सम्यग्दृष्टियोंकी हमेशा संगति (सौबत) करते हैं उनको स्वर्गमोक्षके गुणोंको देनेवाली गुरु आदि गुणी पुरुपोंकी सत्संगाति (अच्छी सौबत) जन्मजन्ममें मिलती है। जो उत्तम पुरुपोंकी संगाति छोड़ हमेशा गुणोंके नाश करनेवाली दुष्ट मिथ्यातियोंकी संगति करते हैं वे नीच गतिमें जानेवाले जीव दुर्जनोंके साथ खोटी गतिका कारण कुसंगति पाते हैं।

जो तत्त्व अतत्त्वका शास्त्र कुशास्त्रका तथा देवगुरु तपस्वी धर्म अधर्म दान कुदान इनका हमेशा सूक्ष्मबुद्धिसे विचार करते हैं उनके हृदयमें ही उत्तम विवेक है वेही परलोकमें सब देव वगैरःकी परीक्षा (जांच) करनेमें समर्थ हो सकते हैं। जो जीव ऐसा समझते हैं कि संसारमें जितने देव गुरु वगैरह हैं वे सभी भक्तिसे वंदने (नमस्कार करने) योग्य हैं किसीकी भी निंदा नहीं करनी चाहिये, सभी धर्म मोक्षके देनेवाले हैं ऐसा मानकर सब धर्मोंको तथा देवोंको दुर्बुद्धिसे सेवन करते हैं वे निंदनीक पुरुप जन्म जन्ममें मूढपनेको पाते हैं।

जो आर्यपुरुष तीर्थंकर गुरु संघ ऊंची पदवीवाले जीवोंकी प्रतिदिन भक्ति नमस्कार गुणकथन (स्तुति) तथा अपनी निंदा करते हैं और गुणीजनोंके दोषोंको छुपाते हैं वे उच्च गोत्रकर्मके उदयसे परलोकमें तीन लोकसे वंदनीक गोत्रको पाते हैं। जो अपने गुणोंकी प्रशंसा गुणी पुरुषोंकी निंदा हमेशा करते रहते हैं और नीच देव:कुधर्म कुगुरुओंको धर्मके लिये सेवन करते हैं वे नीचपदके योग्य हुए नीचकर्मके उदयसे नीचं गोत्र पाते हैं। जो दुष्टबुद्धि मिथ्यामार्गमें प्रीति करके एकांतरूप खोटे मार्गमें ठहरकर कुगुरु कुदेव कुधर्मकी सेवा करते हैं उनको पूर्वजन्मके संस्कारसे मिथ्यामतमें प्रीति होती है, वह परलोकमें बुरा करनेवाली होती है। जो जिनेंद्र शास्त्र गुरु धर्मकी ज्ञानचक्षुसे परीक्षा कर उनके गुणोंमें प्रेमी हुए भक्तिसे उनकी सेवा करते हैं और खोटे मार्गमें स्थित दूसरोंको स्वप्नमें भी नहीं चांहते ऐसे जिनधर्ममें प्रेम करनेवाले होते हैं वे परलोकमें भी मोक्षके रस्तेपर ही चलते हैं।

जो स्वर्गमोक्षके चांहनेवाले बुद्धिमान् परिग्रहरहित ऐसे कठिन व्युत्सर्गतपको मौनव्रतरूप योगगुप्तिको शक्तिके अनुसार पालते हैं अपनी शक्तिको तप आदि धर्मकार्योंमें नहीं छुपाते वे तपस्याको सहनेवाले शुभ दृढ शरीरको पाते हैं। जो समर्थ होनेपर भी कायके सुखमें लीन हुए अपने बलको धर्म व व्युत्सर्ग तपमें कभी प्रगट

नहीं करते और करोड़ों घरके व्यापारोंसे पापकर्म करते हैं उनका शरीर निंदनीक व तप करनेमें असमर्थ होता है। इसप्रकार वे जिनेंद्रदेव दिव्यवाणीसे सब सभ्य गणों-सहित गणधर देव गौतमस्वामीको प्रश्नोंका उत्तर देते हुए। वह उत्तर सार्थक युक्ति-पूर्वक था। ऐसे श्री महावीरस्वामीको मैं भक्तिपूर्वक स्तुति करता हूं।

इस प्रकार श्री सकलकीर्तिदेव विरचित महावीरपुराणमें श्रीगौतमस्वामीकर की गई प्रश्नमालाके उत्तरोंको कहनेवाला सत्रहवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १७ ॥

अठारहवां अधिकार ॥ १८ ॥

श्रीवीरं मुक्तिभर्तारं वंदे ज्ञानतमोपहम् ।
विश्वदीपं सभांतःस्थं धर्मोपदेशनोद्यतम् ॥ १ ॥

भावार्थ—मुक्तिके पति, अज्ञानरूपी अंधकारके नाश करनेवाले संसारके दीपक सभाके अंदर विराजमान हुए धर्मोपदेश देनेमें उद्यमी ऐसे श्री महावीर स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ॥

अथानंतर वे प्रभु श्रीगौतम गणधरसे कहते हुए कि हे बुद्धिमान् गौतम ! मैं जो मुक्तिके मार्गको कहता हूं उसे तू जीवगणोंके साथ सावधानतासे सुन, जिस मार्गसे ज्ञानी जीव निश्चयकर मोक्षको जाते हैं ॥ जो शंका आदि दोषोंसे रहित निःशंकादि गुणों सहित तत्वार्थोंका श्रद्धान है वह व्यवहार सम्यग्दर्शन है । वह सम्यग्दर्शन मोक्षका अंग है ।

इस संसारमें अर्हंतसे बढ़कर कोई उत्कृष्ट देव नहीं हो सकता निर्ग्रंथसे ज्यादा कोई गुरु नहीं है, अहिंसादि पांचव्रतोंसे अधिक उत्तम असलमें कोई धर्म नहीं हो सकता, जैनमतसे उत्तम कोई मत नहीं, ग्यारह अंग चौदह पूर्वसे बढकर कोई सत्रको प्रकाश

करनेवाला शास्त्रज्ञान नहीं, सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रयसे उत्कृष्ट कोई मोक्षका मार्ग नहीं, पांच परमेष्ठियोंसे बढ़कर भव्योंको कोई दूसरा हित करनेवाला नहीं है। पात्रदानसे बढ़कर कोई भी दान मोक्षका कारण नहीं है। परलोकको जानेके लिये साथ २ जानेवालोंमें धर्मसे बढ़कर कोई नहीं है। आत्माके ध्यानसे बढ़कर दूसरा कोई उत्कृष्टध्यान केवलज्ञानका कारण नहीं है धर्मात्माओंके साथ प्रीतिके सिवाय दूसरा कोई प्रेम धर्म और सुखका देनेवाला नहीं है। बारह तपोंके सिवाय दूसरा कोई तप कर्मक्षयको नहीं कर सकता। पंच नमस्कार महामंत्रके सिवाय दूसरा कोई ऐसा मंत्र भोग और मोक्षका देनेवाला नहीं है। कर्म और इंद्रियोंसे बढ़कर कोई भी इसलोक तथा परलोकमें अत्यंत दुःखके देनेवाला नहीं है इत्यादि सब कार्योंको हे गौतम ! तू सम्यग्दर्शनके मूलकारण समझ और और ज्ञान चारित्रका मुख्य कारण मोक्षमहलकी सीढ़ी तथा व्रत वगैरहका ठिकाना सम्यग्दर्शनको ही जान।

हे गौतम सम्यग्दर्शनके विना पुरुषोंका ज्ञान तो अज्ञान होजाता है और चारित्र कुचारित्र होजाता है तथा सब तप निष्फल होता है। ऐसा जानकर निःशंकादि गुणोंसे शंका मूढ़ता वगैरह सब मैलोंको हटाकर चंद्रमाके समान निर्मल सम्यक्त्वको दृढ करना चाहिये। सज्जनोंको तत्त्वार्थों (पदार्थों) का ज्ञान विपरीतपनेरहित यथार्थरीतिसे

करना चाहिये वही व्यवहार सम्यग्ज्ञान है। ज्ञानसे ही सब धर्म पाप हित अहित बंध मोक्ष जाने जाते हैं और देव धर्म गुरु आदिकी परीक्षा (जांच) भी ज्ञानसे ही कीजाती है।

ज्ञानसे हीन अंधेके समान प्राणी हेय आदेय गुण दोष कृत्य अकृत्य तत्त्व अतत्त्वका विवेक (विचार) नहीं कर सकते। ऐसा समझकर स्वर्गमोक्षकी इच्छावालोंको प्रतिदिन बड़े यत्नसे मोक्षकी प्राप्तिके लिये जैनशास्त्रोंका अभ्यास करना चाहिये। जो हिंसादि पांच पापोंका समस्तपनेसे हमेशा त्याग है, जो तीन गुप्ति पांच समितियोंका पालना है वही व्यवहार चारित्र भोग व मोक्षका देनेवाला है। उसे ही कर्मोंके आस्रवका रोकनेवाला सब फलोंका देनेवाला सबमें श्रेष्ठ समझना चाहिये।

उत्तम चारित्रके विना करोड़ों कायक्लेशोंसे किया गया तप कभी कर्मोंका संवर नहीं कर सकता। संवरके विना मुक्ति कैसे होसकती है और मुक्तिके सिवाय पुरुषोंको अविनाशी परम सुख कैसे मिल सकता है ?। इसलिये दूसरोंकी तो बात क्या है अगर दर्शन और तीन ज्ञानसे शोभायमान तथा देवोंकर पूज्य ऐसे तीर्थंकर स्वामी हों वे भी चारित्रके विना (सिवाय) मोक्षरूपी स्त्रीके मुखकमलको कभी नहीं देख सकते। बहुतकालसे दीक्षा धारण करनेवाले सबमें बड़े और अनेक शास्त्रोंके जाननेवाले ऐसे मुनि भी चारित्रके विना ऐसे नहीं शोभा पाते जैसे दांतके विना हाथी।

ऐसा जानकर बुद्धिमानोंको चंद्रमाके समान निर्मल चारित्र धारण करना चाहिये और उपसर्ग परिषहोंसे दुःखी होके सुपनेमें भी वह (चारित्र) नहीं छोड़ना चाहिये। ये व्यवहार रत्नत्रय साक्षात् तीर्थंकरादि शुभ कर्मके कारण हैं, निश्चय रत्नत्रयके साधनेवाले हैं भव्योंको सर्वार्थसिद्धि पर्यंत महान् सुखके करनेवाले हैं, अनुपम हैं लोकपूज्य हैं और भव्योंका परमहित करनेवाले हैं।

अनंत गुणोंका समुद्र ऐसे आत्माके स्वरूपका श्रद्धान वह कल्पनारहित निश्चय सम्यक्त्व है। स्वसंवेदन ज्ञानसे अपने ही परमात्माका अंतरंगमें ज्ञान (जानना) है वह निश्चय ज्ञान है अंतरंग और बाहिरके सब विकल्पोंको छोड़ अपनी आत्माके स्वरूपमें आचरण करना वह निश्चय चारित्र है। ये निश्चय रत्नत्रय सब बाह्यचिंताओंसे रहित हैं निर्विकल्प हैं इसी लिये भव्य जीवोंको साक्षात् मोक्षके देनेवाले हैं। इस प्रकार यह दो तरहके रत्नत्रयरूप महान् मोक्षमार्ग मोक्षलक्ष्मीको देनेवाला है ऐसा जानकर मोक्षके इच्छुक भव्य जीवोंको मोहरूपी फांसी काटकर हमेशा इन रत्नत्रयोंका सेवन करना चाहिये।

जो भव्य इस संसारमेंसे मोक्षको गये जारहे हैं और जायेंगे वे सब इन दोनों रत्नत्रयोंके पालनेसे ही गये जाते हैं और जायंगे, इसके सिवाय दूसरी तरह नहीं।

मुक्तिका अविनाशी फल अनंत सुख व आठ सम्यक्त्वादि महान गुणोंकी प्राप्ति है। हे भव्यो! जो संसाररूपी समुद्रमें गिरते हुए प्राणियोंको निकालकर तीन लोकके शिखरके राज्यपर रक्खे वही धर्म है। वह श्रावक और मुनिधर्मके भेदसे दो प्रकारका है और स्वर्गमोक्षके सुखका देनेवाला है। उनमेंसे श्रावकोंका धर्म तो सुगम है परंतु योगियोंका धर्म महान् कठिन है।

अब श्रावकधर्मकी ग्यारह प्रतिमाओं (दर्जों)को वर्णन करते हैं। जो जुआ आदि सात व्यसनोंसे रहित है, आठ मूलगुणों सहित है और निर्मल सम्यग्दर्शनवाली है ऐसी पहली दर्शनप्रतिमा कही जाती है। अब व्रतप्रतिमाको कहते हैं—पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत ये बारह व्रत हैं। जो मनवचनकाय कृत कारित अनुमोदनासे यत्नसे (सावधानीसे) त्रसजीवोंकी रक्षा की जावे वह पहला अहिंसा अणुव्रत है। यह सब जीवोंकी रक्षा सब व्रतोंका मूल कारण है, गुणोंकी खानि है और धर्मका मूल बीज यही है ऐसा श्रीजिनेंद्रदेवने कहा है।

जो झूठे निंदायोग्य वचनोंको त्यागकर हितकारी सारभूत धर्मकी खानि ऐसे सत्य (सांचे) वचनोंका बोलना है वह दूसरा सत्य अणुव्रत है। सांच वचन बोलनेसे जगत्‌में बुद्धिमानोंकी कीर्ति (तारीफ़) होती है और सरस्वती कला विवेक चतुराई—

इनकी वढ़वारी होती है। जो पराया धन गिर पड़ा हो भूलसे कहीं रहगया हो ग्राम वगैरःमें रक्खा हो ऐसे धनको नहीं लेना (चुराना) वह तीसरा अचौर्य अणुव्रत है। जो पराये धनको चुरानेवाले हैं उन पापियोंको पापके उदयसे वध बंधन आदि दुःख इस जन्ममें होते हैं और दूसरे जन्ममें नरकादि दुःख भोगने पड़ते हैं।

जो अपनी स्त्रीके सिवाय दूसरी सब स्त्रियोंको सांपिनी समझकर अपनी स्त्रीमें ही संतोष किया जाता है वह ब्रह्मचर्य अणुव्रत है। खेत घर धन धान्य दासीदास चौपाये आसन शय्या कपड़े बासन—ये दस बाह्य परिग्रह हैं। इन परिग्रहोंकी गिनतीका प्रमाण लोभ और तृष्णाके नाशके लिये जो किया जाता है वह पांचवां परिग्रहप्रमाण अणुव्रत है। सज्जनोंको परिग्रहका प्रमाण करनेसे आशा और लोभका नाश होता है तथा संतोष धर्म और संपदायें मिलतीं हैं। जो दशों दिशाओंको जानेकेलिये योजन गाम वगैरःकी मर्यादा की जाती है वह पहला दिग्व्रत नामा गुणव्रत है। जो विना प्रयोजनके पापारंभ आदि अनेक कार्योंको छोड़ना है वह अनर्थदंडविरातिव्रत गुणव्रत है।

उस अनर्थदंडके पापोपदेश हिंसादान अपध्यान दुःश्रुति प्रमादचर्या ये पापके देनेवाले पांच भेद हैं। जो भोग उपभोगकी वस्तुओंका पांच इंद्रियरूपी वैरियोंके जीतनेके लिये प्रमाण किया जाता है वह तीसरा भोगोपभोगपरिमाण गुणव्रत है।

पापसे डरनेवाले व्रतियोंको व्रतोंके पालनेके लिये तथा पापोंके नाशके लिये अदरक आदि अनंत जीवोंवाले कंदोंको, कीड़े लगे हुए फल आदिको, फूलको तथा विप व भिष्टाके समान सब अभक्षोंको सब तरह से त्याग करना चाहिये। घर खेत बाजार मुहल्ले आदिमें भी जानेका प्रमाण प्रतिदिन कर लेना वह देशावकाशिक शिक्षाव्रत है।

खोटे ध्यान और खोटी लेश्याओंको छोड़कर जो हमेशा दिनमें तीन वार सामायिक (जाप) किया जाता है वह सामायिक शिक्षाव्रत है। जो अष्टमी और चौद-सको सब आरंभ छोड़कर नियमसे उपवास (आहारका त्याग) किया जाता है वह प्रोपधोपवास शिक्षाव्रत है। जो प्रतिदिन भक्तिसहित निर्दोप आहारादि चार प्रकारका दान विधिसे मुनियोंको दिया जाता है वह अतिथिसंविभाग नामका चौथा शिक्षाव्रत है। इस प्रकार मन वचन कायकी शुद्धिसे अतीचार (दोप) रहित इन पांचों व्रतोंको जो भव्य जीव पालते हैं उनके उत्तम दूसरी व्रतप्रतिमा होती है। अणुव्रत धारियोंको मरणके समय आहार और कपाय वगैरःको छोड़कर मुनिके चारित्रको धारण कर श्रेष्ठ पदवी प्राप्तिके लिये सल्लेखनाव्रत प्रेमसे पालना चाहिये।

तीसरी सामायिक प्रतिमा है और चौथी प्रोपधोपवास नामकी प्रतिमा है। फल बीज पत्र जल वगैरः जो जीवोंसहित सचित्त हैं उनको दयाधर्म पालनेके लिये

छोड़ना वह पांचवीं सचित्तत्याग प्रतिमा है। जो मुक्तिके लिये रातमें चारों तरहके आहारोंका त्याग और दिनमें स्त्रीके साथ मैथुन करनेका त्याग करना वह छठी प्रतिमा है। जो बुद्धिमान् मनवचन कायकी शुद्धिसे इन छह प्रतिमाओंको पालते हैं उनको मुनीश्वरोंने जघन्यश्रावक कहा है। वे ही श्रावक स्वर्गमें जाते हैं।

जो मन वचन कायसे सब स्त्रियोंको माता समझकर ब्रह्मस्वरूप आत्मामें लीन रहते हैं वह ब्रह्मचर्य प्रतिमा है। पापसे डरेहुए पुरुषोंसे जो निंदनीक और अशुभका समुद्र ऐसा व्यापारादि आरंभका तथा घर आदिके आरंभका त्याग किया जाता है वह आठवीं उत्तम आरंभत्याग प्रतिमा है। जो कपड़ोंके सिवाय पापके करनेवाले अन्य सब परिग्रहोंका मन वचन कायकी शुद्धिसे त्याग करना है वह परिग्रहत्याग नामकी नवमीं प्रतिमा सज्जनोंसे कही गई है। जो रागसे अलग हुए जीव नौ प्रतिमाओंको पालते हैं वे देवोंसे पूजित श्रावक कहे जाते हैं।

जो घरके कार्यमें विवाह आदिमें अपने आहारमें व धन कमानेमें सलाह भी नहीं देते वह अनुमतित्याग दशमी प्रतिमा है। जो दोषसहित अन्नको अखाद्यकी तरह त्यागकर भिक्षा भोजन करना है वह ग्यारवीं उद्दिष्टत्याग प्रतिमा है। इसप्रकार इन ग्यारहों प्रतिमाओंको सब उपायोंसे जो व्रती प्रतिदिन सेवन करते हैं वे तीन जगत्‌से

पूजित वैरागी उत्कृष्ट श्रावक हैं। जो व्रती इन श्रावकोंके प्रतिमारूप धर्मोंको हमेशा सेवन करते हैं वे सोलह स्वर्गोंके उत्तम सुखको पाते हैं।

इस प्रकार वे महावीर प्रभु रागी जीवोंके श्रावकधर्मके उपदेशसे हर्ष पैदा कराके वीतरागी मुनियोंकी प्रीतिके लिये उसी समय मुनिधर्मका उपदेश करते हुए। अहिंसादि पांच श्रेष्ठ महाव्रत, ईर्यादि पांच शुभ समितियें, पांच इंद्रियोंको जीतना अर्थात् विषयोंमें न जाने देना, केशलोंच, सामायकादि छह आवश्यककर्म, वस्त्ररहितपना, स्नानका त्याग पृथ्वीपर सोना, दांतोंन नहीं करना, रागरहित खड़े होकर भोजन करना, एक वार भोजन करना—ये मुनिधर्मके अट्ठाईस मूल गुण हैं। इन मूलगुणोंको हमेशा पालना चाहिये और प्राण जानेपर भी नहीं छोड़ना चाहिये। ये ही गुण तीन जगत्की लक्ष्मीके सुखको देनेवाले हैं।

परीषहोंका जीतना आतापन आदि अनेक तप बहुत उपवास व मौन धारण वगैरह उत्तरगुण मुनियोंके कहे गये हैं। योगियोंको पहले मूलगुण अच्छी तरह निर्दोष पालन करके उसके बाद उनको उत्तर गुण पालने चाहिये। उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव सत्य शौच, दो प्रकारका संयम तप त्याग आकिंचन और ब्रह्मचर्य— ये योगियोंके धर्मके दस लक्षण हैं, ये सब धर्मोंकी खानि हैं। भव्यजीवोंको सब मूलगुण उत्तरगुणोंसे तथा

क्षमादि दस लक्षणोंसे उसी भवमें मोक्षका देनेवाला परमधर्म होता है । इसी धर्मसे मुनीश्वर सर्वार्थसिद्धिका सुख तथा तीर्थंकरका सुख निरंतर भोगकर मोक्षको जाते हैं । इस संसारमें धर्मके समान दूसरा कोई भी भाई स्वामी हितका करनेवाला पापका नाशक और सब कल्याणोंका करनेवाला नहीं है ।

अथानंतर इस भरतक्षेत्र (भारत वर्ष) के आर्यखंडमें उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी नामके दो काल कहे गये हैं । इसी तरह ऐरावत क्षेत्रके आर्यखंडमें भी जानना चाहिये । उनमेंसे रूप बल आयु देह सुख—इनकी हमेशा वृद्धि होनेसे सार्थक नामवाला उत्सर्पिणी काल दस कोड़ाकोड़ी सागरका ज्ञानियोंने कहा है ।

अवसर्पिणीकालमें रूप बल आयु वगैरहकी हीनता होनेसे सार्थक नाम अवसर्पिणी काल है । इन दोनोंके जुदे जुदे छह भेद हैं । अवसर्पिणीका पहला काल सुखमासुखमा है वह चार कोड़ाकोड़ि सागरका है । उस कालके शुरूमें आर्य पुरुष उदयहुए सूर्यके समान रंगवाले होते हैं, उनकी आयु तीन पल्यकी और शरीरकी ऊचाई तीन कोसकी होती हैं । तीन दिनके बीत जानेपर उन मनुष्योंका दिव्य आहार बेरफलके बरावर है और नीहार यानी मलमूत्र नहीं होता । उस कालमें मद्यांग तूर्यांग विभूपांग मालांग ज्योतिरंग दीपांग गृहांग भोजनांग वस्त्रांग और भांजनांग—इस तरह दस जातिके कल्पवृक्ष होते हैं वे उत्तम पात्रदानके फलसे पुण्यवानोंको मनोवांछित महान् भोग संपदायें देते हैं ।

वहां पर आर्यलोग पुरुष स्त्रीरूप जुगलिया अर्थात् एक साथ जोड़ा जन्म लेकर भोगोंको हमेशा भोगकर वादमें उत्तम परिणामके प्रसादसे सभी जोड़े स्वर्गमें जन्म लेते हैं। इसी कालकी वह भूमि सब सुखोंके देनेवाली उत्तम भोगभूमि कहलाती है। वहाँ पर क्रूरस्वभावी पंचेंद्री और दो इंद्रियादि विकलत्रय नहीं होते। उसके वाद सुखमा नामका दूसरा काल वर्तता है वह तीन कोड़ाकोड़ि सागरका है। उस कालमें मध्यम भोगभूमिकी रचना होती है। उस कालके आरंभमें मनुष्य दो पल्यकी आयुवाले, दो कोस ऊँचे शरीरवाले और पूर्ण चंद्रमाके समान वर्णवाले होते हैं। वे दो दिनके वाद वहेड़ेके फलके समान तृप्ति करनेवाला दिव्य आहार करते हैं। वे सब भोगभूमियाओंके समान सामग्रीवाले होते हैं।

उसके वाद तीसरा सुखमादुखमा काल प्रवर्तता है वह दो कोड़ाकोड़ि सागरका है उसमें जघन्य भोगभूमिकी रचना है। उसके आरंभमें मनुष्योंकी आयु एक पल्यकी, शरीरकी उँचाई एक कोसकी और शरीरकी रंगत प्रियंगु वृक्षके रंगके समान होती है। उनका तृप्ति करनेवाला आहार एक दिनके वाद आंवलेके वरावर होता है और कल्पवृक्षोंसे भोगादिकी सामग्री मिलती है।

उसके वाद चौथा दुखमासुखमा काल है उस समय कर्मभूमिकी प्रवृत्ति होती है।

उसीमें शलाका (पदवी धारक) पुरुष पैदा होते हैं। उस कालका प्रमाण ब्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागर है। उसकी आदिमें होनेवाले मनुष्योंकी आयु एक करोड़ पूर्व वर्षकी है, शरीर पांचसौ धनुष ऊँचा होता है और रंगत पांचों तरहकी होती है। वे मनुष्य दिनमें एक वार उत्तम भोजन करते हैं, उसी कालमें ये कहे जानेवाले त्रेसठ शलाका पुरुष उत्पन्न होते हैं।

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन सुमति पद्मप्रभ सुपार्श्व चंद्रप्रभ पुष्पदंत शीतल श्रेयान् वासुपूज्य विमल अनंत धर्म शांति कुंथु: अर माल्लि मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व-नाथ श्रीवर्धमान (महावीर)—ये चौवीस तीर्थंकर तीन लोकके स्वामी इंद्रादिकोंसे नमस्कार किये जाते हैं। भरत सगर मघवा सनत्कुमार शांतिनाथ कुंथुनाथ अरनाथ सुभूम महापद्म हरिषेण जयकुमार ब्रह्मदत्त—ये बारह चक्रवर्ती हैं। विजय अचल धर्म सुप्रभ सुदर्शन नांदी नांदिमित्र पद्म (रामचंद्र) (राम) बलदेव—ये नौ बलभद्र हैं। त्रिपृष्ठ द्विपृष्ठ स्वयंभू पुरुषोत्तम पुरुषसिंह पुंडरीक दत्त लक्ष्मण कृष्ण—ये नौ नारायण हैं। ये तीन खंडके स्वामी धीर वीर और स्वभावसे रौद्र परिणामी होते हैं।

अश्वग्रीव तारक मेरक निंशुभ कैटिभारि मधुसूदन बलिहंता रावण जरासंध—ये नौ प्रति नारायण हैं। ये प्रतिनारायण नारायणके समान संपदाओंवाले अर्धचक्री

(तीनखंडके स्वामी) और नारायणके शत्रु होते हैं ॥ मनुष्य विद्याधर देव—इनके स्वामियोंसे जिनके चरणकमल नमस्कार किये गये पूज्य महात्मा ऐसे इन त्रेसठ शलाका पुरुषोंके कई जन्मोंके वृत्तान्त सवके जुदे २ पुराण, संपदा आयु वल सुख और होनेवाली सव गतियोंको वे श्रीमहावीर जिनेश मोक्षकी प्राप्तिकेलिये स्वयं दिव्यध्वनिसे गणधरदेवको तथा अन्य सभासदोंको विस्तारसे कहते हुए ।

अथानंतर पांचवां दुःखमकाल है वह दुःखोंसे भरा हुआ इक्कीसहजार वर्षका है। उसके आरंभमें एकसौ वीस वर्षकी आयुवाले सात हाथ ऊँचे शरीरके धारक मनुष्य होते हैं। वे मनुष्य मंदवुद्धि रूखी (चमकरहित) देहवाले. सुखसे रहित दुःखी वहुतवार भोजन करनेवाले हमेशा कुटिल परिणामोंवाले होते हैं और वे क्रमसे अंग आयु वुद्धि वल आदिसे कमती २ होते जाते हैं। उसके वाद दुःखमादुःखमा छठा काल है वह पांचवें कालके समान इक्कीस हजार वर्षका है। वह काल अत्यंत दुःखका देनेवाला व धर्म आदिकसे रहित है। इस कालकी आदिमें मनुष्य दो हाथ ऊँचे वीस वर्षकी उमरवाले होते हैं। वे मनुष्य धुएंके समान रंगवाले कुरूप (वदमूरत) नंगे और अपनी इच्छाके अनुसार आहार करनेवाले होते हैं।

इस छठे कालके अंतमें वे मनुष्य एक हाथ ऊँचे पशुके समान फिरनेवाले सोलह

वर्षकी उत्कृष्ट (अधिकसे अधिक) आयुवाले निंदनीक और खोटी गतिमें जानेवाले पैदा होते हैं। जैसे अवसर्पिणीकाल क्रमसे: हीनता सहित है उसीतरह उत्सर्पिणीकाल वृद्धिसहित है ऐसा जिनेन्द्रदेवने कहा है ॥ यह लोक नीचे वेतके आसन (मुड्ढे) के समान है बीचमें झालरके समान है और ऊपरके भागमें मृदंगके समान है तथा जीवादि छह द्रव्योंसे भरा हुआ है।

इत्यादि नरक स्वर्ग द्वीपादिकोंके विशेष आकार भी वे जिनेश कहते हुए। इस वावत बहुत विस्तार करनेसे क्या, लेकिन तीन लोकमें जितने कुछ भूत भविष्यत् वर्तमानरूप तीनकालवर्ती शुभ अशुभ पदार्थ हैं तथा इनसे जुदा अलोकाकाश है, उन सब केवल ज्ञानके गोचर पदार्थोंको वे जिनेंद्रदेव सब भव्योंके हितके लिये व धर्मतीर्थकी प्रवृत्तिके लिये द्वादशांगरूप वाणीसे गौतमस्वामीको कहते हुए। इस प्रकार श्रीजिनेंद्रके मुखरूपी चंद्रमासे निकले हुए ज्ञानरूपी अमृतको पीकर श्रीगौतम मिथ्यातरूपी हालाहल विषको उगलकर काललब्धि (अच्छी होनहार) के प्रसादसे सम्यग्दर्शनसहित संसार शरीर भोगादिमें वैरागी होकर मनमें ऐसा विचारते हुए।

अहो मैंने सब पापोंकी खानि अशुभ और निंदनीक ऐसा यह मिथ्यामार्ग अपनी मूर्खतासे बहुत कालतक वृथा सेवन किया। जैसे कोई काले सांपको मालाके धोखे

सुखकेलिये उठालेता है उसी तरह मैंने भी धर्म समझ कर इस मिथ्यात्वरूपी महान पापको धारण किया। धूर्तोंकर रचे हुए अज्ञान मिथ्यात्वमार्गके द्वारा अनंते मूर्ख घोर नरकमें पटके जाते हैं।

जैसे मदिरासे वावले पुरुष भिष्टाके घरमें गिर पड़ते हैं उसीतरह सम्यग्दर्शनसे रहित मिथ्यादृष्टि अशुभ मार्गमें गिर जाते हैं। जैसे मार्गमें चलते हुए अंधे पुरुष कुएमें गिर पड़ते हैं उसी तरह मिथ्यात्वसे अंधे पुरुष नरकादिरूप अंधे कुएमें गिर पड़ते हैं। मैं ऐसा समझता हूं कि मिथ्यात्वरूपी खोटा मार्ग वहुत खराव है दुष्टोंको नरकमें ले-जानेके लिये संगका साथी है शठ पुरुषोंसे आदर किया गया है सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित्र धर्मादि राजाओंका शत्रु है जीवोंको खानेके लिये अजगर सांप है और महान पापोंकी खानि है।

जैसे गौके सींगसे दूध, वहुत पानीके मथनेसे घी; खोटे व्यसनोंसे तारीफ़, कंजूसपनेसे प्रसिद्धि और खोटे कार्य करनेसे धन कभी नहीं मिलता उसीतरह मिथ्यातसे अज्ञानियोंको शुभ वस्तु सुख और उत्तमगति— ये सव नहीं मिल सकते। हे प्राणियो! मिथ्यात्वके आचरणसे धर्मरहित मिथ्यादृष्टि केवल महादुःखस्वरूप नरकमें ही जाते

हैं। ऐसा समझकर बुद्धिमानोंको स्वर्गमोक्षकी सिद्धिके लिये पहले विशुद्ध सम्यग्दर्शन-रूप तलवारसे शीघ्र ही मिथ्यात्वरूप वैरीका नाश करना चाहिये।

अहो आज मैं धन्य हूं मेरा आज जन्म सफल हो गया; क्योंकि आज मुझे अत्यंत पुण्यके उदयसे जगत्का गुरु जिनेंद्रदेव मिल गया। इस गुरुका ही कहा हुआ अमूल्य धर्म मोक्षका मार्ग है, और सुखकी खानि है। इस प्रभुके वचनरूप किरणोंने ही दर्शनमोह (मिथ्यात) रूपी महान अंधकार नाश कर दिया है। इत्यादि धर्म और धर्मफलका विचार करनेसे परम आनंदको प्राप्त हुआ वह द्विजशिरोमणि गौतम वैराग्य-रूप होके मुक्तिके लिये मोहादि शत्रुओंसहित मिथ्यात्वरूपी वैरीकी संतानके मारनेको उद्यमी हुआ जिनदीक्षाको ग्रहण करनेका उद्यम किया। उसके बाद उसी समय दस बाह्य और चौदह अंतरंगके परिग्रहोंको छोड़कर मन वचन कायकी शुद्धिसे और परम भक्तिसे जिनेंद्रकी दिगंबर (नग्न) मुद्राको वह द्विजोत्तम गौतम अपने दोनों भाइयों-सहित ग्रहण करता हुआ और पांचसौ शिष्योंको भी तत्त्वोंका स्वरूप समझाता हुआ। वहांपर बैठे हुए अन्य भी भव्य जीव जिनेंद्रके वचनरूपी किरणोंसे परिग्रहके मोहरूप अंधकारका नाशकर अर्थात् दोनों परिग्रहोंको छोड़ मुनिका चरित्र ग्रहण करते हुए। वहां-

पर बैठीं हुईं कितनी ही राजकन्यायें तथा अन्य भी सुशील स्त्रियां उपदेशसे सचेत हुईं अपनी इष्ट सिद्धिके लिये खुशीके साथ उसीसमय अर्जिका होतीं हुईं।

कोई शुभ परिणामी नर नारी श्रीजिनेंद्रदेवके वचनोंसे श्रावकोंके सब व्रतोंको ग्रहण करते हुए। कोई सिंह सांप वगैरः भव्य पशु भी उन वचनोंसे अपनी क्रूरता छोड़ श्रावकोंके व्रत स्वीकार (मंजूर) करते हुए। कितने ही चारों जातिके देव और देवियां तथा मनुष्य और पशु उनके वचनरूपी अमृतके पीनेसे मिथ्यात्वरूपी हालाहल विषको दूरकर काललब्धिके पानेसे मोक्ष पानेके लिये शीघ्र ही अपने हृदयमें अमूल्य सम्यग्दर्शनरूपी हारको धारण करते हुए।

कोई मनुष्य व्रतादिकोंके पालनेमें असमर्थ हुए अपने कल्याणके लिये दान पूजा प्रतिष्ठा आदिके करनेको उद्यमी हुए। कोई जीव अपनी सब शक्तिसे तप व्रत आदिको बहुत उपायोंद्वारा ग्रहण कर फिर जिन आतापनादि कठिन कार्योंको नहीं कर सकते थे उन सबकी मन वचनकायकी शुद्धिसे तथा भक्तिसे भावना ही कर्मरूपी वैरीके नाश करनेके लिये करते हुए। उस समय सौधर्मेंद्र अत्यंत भक्तिसे इन गौतमगणधरको दिव्य पूजन द्रव्यसे पूजकर चरणकमलोंको नमस्कार कर और दिव्य गुणोंकी स्तुति कर सब सत्पुरुषोंके सामने "ये इंद्रभूतिस्वामी हैं" ऐसा कहकर यह दूसरा नाम रखता हुआ।

उसी समय श्री गौतम गणधरके अत्यंत परिणामोंकी शुद्धिसे सात महान् ऋद्धियां प्रगट होतीं हुईं। हे प्राणियो! इस संसारमें मनकी शुद्धि ही सज्जनोंको सब मनोवांछित फलोंकी देनेवाली है, जिस मनशुद्धिसे ही आधे क्षणमें केवलज्ञानरूपी संपदा मिल जाती है॥ श्रावण कृष्ण, तृतीयाको सबेरेके समय श्रीमहावीर स्वामीके तत्वोपदेशसे मनकी शुद्धि होनेसे इस इंद्रभूति गणधरके चित्तमें सब अंगपूर्वके पद अर्थरूपसे परिणमन करते हुए। उसके बाद ज्ञानावरण कर्मके कुछ क्षय होनेसे दिनके पिछले पहर बुद्धिमें सब अंग पूर्व प्रगट होनेसे मति आदि चार ज्ञानवाले हुए वे इंद्रभूति अपनी तीक्ष्णबुद्धिसे सब अंगोंरूप शास्त्रोंकी रचना सब भव्योंका उपकार होनेके लिये रातके पिछले भागमें पद वाक्य ग्रंथ रूपसे करते हुए, जिससे कि आगेको धर्मकी प्रवृत्ति होवे।

इस प्रकार धर्मके फलसे श्री गौतम गणधर देवोंसे पूजित सब द्वादशांग शास्त्रको रचनेवाले सब मुनियोंमें मुख्य होते हुए। ऐसा जानकर हे बुद्धिमानो! तुम भी अपनी इष्टसिद्धिकेलिये मनको शुद्धकर उत्तम धर्मको करो।

इस प्रकार श्री सकलकीर्तिदेवविरचित महावीरपुराणमें महावीर भगवान्के धर्मोपदेशको कहनेवाला अठारहवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १८ ॥

उन्नीसवां अधिकार ॥ १९ ॥

मोहनिद्राघहंतारं श्रीवीरं ज्ञानभास्करम् ।
दीपकं विश्वतत्त्वानां वंदे भव्याब्जबोधकम् ॥ १ ॥

भावार्थ—मोहरूपी नींदके नाश करनेवाले ज्ञानके सूर्य सब तत्वोंके प्रकाशनेवाले और भव्य कमलोंको प्रफुल्लित करनेवाले ऐसे श्रीमहावीर स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ॥१॥

अथानंतर दिव्यवाणीके बंद होनेपर जीवोंका कोलाहल शांत होनेसे महा बुद्धिमान् गुणी सौधर्म इंद्र अपनी सिद्धिके लिये भक्तिपूर्वक भगवान् महावीरकी स्तुति करने लगा। कैसे हैं महावीर। जो तीन जगत्के भव्योंके बीचमें विराजमान हैं व सब प्राणियोंको सचेत करनेमें उद्यमी हैं। वह इंद्र ज्ञानियोंके उपकारकेलिये तथा दूसरी जगह भी धर्मोपदेश देनेको विहार करनेके लिये जगत्में श्रेष्ठ और भव्योंको संबोधने (चेताने) वाले गुणोंसे इस तरह स्तुति करता हुआ। हे देव। मैं अपने मन वचन कायकी शुद्धिके लिये ही अनंत गुणोंके समुद्र, तीन जगत्के स्वामियोंसे पूज्य आपकी स्तुति करता हूं। क्योंकि आपकी स्तुति करनेवाले भव्योंके पापमल दूर होकर शुद्ध

चित्त होनेसे तीन जगत्की सब संपदायें और सुख वगैरः प्रगट हो जाते हैं। ऐसा निश्चय कर हे प्रभो आपकी स्तुति करनेके लिये सब सामग्री पाकर विशेष फल चाहनेवाला कौन बुद्धिमान् आपकी स्तुति नहीं करता, सभी करते हैं।

आपके स्तवन करनेमें स्तुति स्तोता (स्तुति करनेवाला) महान् स्तुत्य (स्तुति करने लायक) और फल—ये चार तरहकी पापनाशक उत्तम सामग्री कही है। जो गुणोंके समुद्र अर्हंतदेवके यथार्थ गुणोंकी तारीफ करना उसे विवेकियोंने शुभकारक महान् स्तुति कही है। जो पक्षपातरहित बुद्धिमान् गुण दोषोंको जाननेवाला आगमका जानकार सम्यग्दृष्टि उत्तम कवि है वह स्तोता कहलाता है।

जो अनंतदर्शन अनंतज्ञान आदि गुणोंका समुद्र वीतरागी जगत्का नाथ ऐसा श्रीजिनेन्द्रदेव सज्जनोंकर परम स्तुत्य कहा गया है, उसकी स्तुतिका फल साक्षात् तो स्तुति करनेवालोंको परमपुण्य मिलता है और फिर क्रमसे उन सब गुणोंकी प्राप्ति हो जाती है। इस प्रकार यहांपर सब सामग्रीको पाकर मैं आपकी स्तुति करनेको उद्यमी हुआ हूं इसलिये आज दिन प्रसन्न दृष्टिसे मुझे पवित्र करो। हे नाथ आज आपके वचनरूपी किरणोंसे सूर्यके भी अगोचर अंदरास्थित ऐसा भव्योंका मिथ्यातरूपी अंधकार सब तरफसे जुदा हुआ नष्ट होगया।

हे ईश आपके वचनरूपी तलवारके प्रहारसे घायल हुआ मोहरूपी वैरी तुमको छोड़कर अपनी सेनासहित भागके जड़स्वरूप मन और इंद्रियोंका आश्रय लेता हुआ। हे देव तुम्हारे धर्मोपदेशरूपी वज्रपातसे पीटा गया कामदेव आज इंद्रियरूपी चोरों सहित मरनेकी अवस्थाको प्राप्त हो गया है। हे नाथ तुम्हारे केवल ज्ञानरूपी चंद्रमाके उदयसे बुद्धिमानोंको सम्यग्दर्शन आदि रत्नोंका देनेवाला ऐसा धर्मरूपी समुद्र वढ गया। हे भगवन् आज आपके धर्मोपदेशरूपी हथियारसे तीन जगतके जीवोंको दुःख देनेवाला ऐसा भव्योंका पापरूपी वैरी नाशको प्राप्त हो गया।

हे नाथ कितने ही भव्य आज तुमसे दर्शन चारित्र वगैरः उत्तम लक्ष्मीको पाकर अनंत सुखके लिये मोक्षमार्गपर जा रहे हैं। हे ईश आज कितने ही भव्य आपसे रत्नत्रय व तपरूपी वाणोंको पाकर मोक्ष पानेकेलिये वहुत कालसे आयेहुए कर्मरूपी वैरियोंको मारेंगे। हे प्रभो तुम प्रतिदिन तीन जगतके भव्योंको सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रधर्मरूपी उत्तम चिंतामणि रत्नोंके देनेवाले हो। जो रत्न चिंतवन किये गये सुखके समुद्र अमूल्य श्रेष्ठ पदार्थोंको देनेवाले हैं। इसलिये लोकमें तुमारे समान महान दाता महा धनवान् कोई नहीं हो सकता।

हे स्वामिन् मोहनिद्रासे अचेत (वेहोश) सोया हुआ यह जगत आपके वचनरूपी

बड़े भारी वाजेसे आज सोतेसे जाग उठा है। हे विभो आपके प्रसादसे आपके चरणोंके आश्रित कितने ही भव्यजीव सर्वार्थसिद्धि स्वर्गको तथा कितने ही मोक्षको जावेंगे। जैसे आपकी वाणी सुननेसे देव मनुष्य पशुओंका समूह कर्मसंतानको मारनेके लिये तयार हुआ है उसी तरह आपके विहार करनेसे आर्यखंडके रहनेवाले ज्ञानी भव्यजीव भी सब तत्त्वोंको जानकर पापोंको नाश करसकेंगे।

हे स्वामी आपके पवित्र विहार (गमन) से कितने ही भव्य जीव तपरूपी तलवार-से संसारकी स्थितिको काटकर श्रेष्ठ सुखका समुद्र ऐसे मोक्षको जांयगे। कितने ही योगी आपके श्रेष्ठ धर्मोपदेशसे चारित्र पालन कर अहमिंद्र पदको साधेंगे और कोई सोलह स्वर्गको जाइंगे। हे ईश इस संसारमें कितने ही मोही पापी जीव आपके उपदेशे हुए श्रेष्ठ मार्गको पाकर मोहरूपी वैरीको मारेंगे।

हे देव भव्योंको मोक्षद्वीपमें ले जानेके लिये चतुर व्यापारी तुम ही हो और इंद्रिय कषायरूपी चोरोंको मारनेके लिये महान् सुभट तुम ही हो। इसलिये हे स्वामिन् आप भव्योंके ऊपर कृपाकर मोक्षमार्गकी प्रवृत्तिके लिये धर्मका कारण विहार करें। हे भगवन् तुम मिथ्यातरूपी दुष्कालसे सूखे हुए भव्यरूपी धान्योंका धर्मरूपी अमृतके सींचनेसे

उद्धार करो। हे देव आपके धर्मोपदेशरूपी वाणोंसे पुण्यात्मा जीव स्वर्ग मोक्षकी प्राप्तिके लिये जगतको दुःख देनेवाले दुर्जय ऐसे मोहरूपी वैरीको अवश्य जीतेंगे।

और अब देवोंसे घिरा हुआ यह धर्मचक्र भी सज गया है जो कि मिथ्याज्ञान-रूपी अंधकारको नाश करनेवाला है—और आपकी जीतको कहनेवाला है। हे नाथ सत्य मार्गके उपदेश करनेके लिये तथा मिथ्यामार्गको हटाने लिये यह काल भी आपके सामने आकर उपस्थित (हाजिर) हुआ है, इसलिये हे देव वहुत कहनेसे क्या लाभ है अब आप विहार करके आर्यखंडके भव्यजीवोंको श्रेष्ठ वाणीसे पवित्र करो—रक्षण करो। क्योंकि किसी समयमें भी आपके समान दूसरा कोई भी बुद्धिमान् भव्योंको स्वर्ग मोक्षका रास्ता दिखलानेवाला व मिथ्यामार्गरूपी अत्यंत अंधेरेको हटानेवाला नहीं मिल सकता।

इसलिये हे देव आपको नमस्कार है गुणोंके समुद्र आपको नमस्कार है अनंत ज्ञान अनंत दर्शन अनंत सुखवाले आपको नमस्कार है। अनंत वलस्वरूप दिव्यमूर्ति अद्भुत महान् लक्ष्मीसे शोभित वैरागी आपको नमस्कार है। असंख्यात देवियोंकर घिरे होनेपर ब्रह्मचारी, उदयको प्राप्त ज्ञानवाले, मोहरूपी वैरीके नाश करनेवाले आपको

नमस्कार है। शांत स्वरूपसे कर्मरूपी वैरीके जीतनेवाले सब जगतके स्वामी मोक्षरूपी स्त्रीके प्यारे पति आपको नमस्कार है।

हे देव सन्मति महावीर आपको मैं अपनी इष्टसिद्धिके लिये मस्तकसे नमस्कार करता हूं। हे स्वामिन् आप इस स्तुति श्रेष्ठ भक्ति और नमस्कारका फल हमको जन्म २ में एक अपनी भक्ति ही दें दूसरा कुछ नहीं चाहते। आपके चरणकमलोंकी भक्तिसे सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी प्राप्ति होवे यही आपसे प्रार्थना करते हैं, दूसरा कुछ नहीं चाहते। क्योंकि यही भक्ति परलोकमें हमको तीन जगतमें उत्तम सुख और मनोवांछित फल देगी।

इस प्रकार इंद्रके कहनेसे पहले ही जगतके संबोधनमें उद्यमी फिर इंद्रकी प्रार्थनासे वे जगतके गुरु श्रीमहावीर प्रभु तीर्थंकर कर्मके उदयसे भव्योंको सब मिथ्यामार्गोंसे हटाकर भ्रमरहित मोक्षमार्गपर लानेके लिये विहारका उद्यम करते हुए। उसके वाद वे भगवान् बारह प्रकारके जीवगणोंकर बेढे हुए देवोंकर चमरोंसे सेवा किये गये सफेद तीन छत्रोंसे शोभायमान परम संपदासे चारों तरफ घिरे हुए सब भव्योंके संबोधनेके लिये करोड़ों वाजोंकी ध्वनि होनेके साथ विहार करनेका आरंभ करते हुए। उस समय करोड़ों ढोल तुरई वाजे वजते हुए और चलते हुए छत्र ध्वजाओंके समूहसे आकाश घिर गया।

हे ईश जगत्‌के जीवोंका वैरी ऐसे मोहके जीतनेसे तुम जयवंत हो वृद्धि व आनंद पाओ ऐसा चिल्लाते हुए वे देव उस प्रभुके चारों तरफ हुए निकले। वे प्रभु सुर असुरोंके साथमें इच्छारहित विहार करते सूर्यके समान शोभायमान होने लगे। अर्हंत प्रभुके स्थानसे लेकर सौयोजनतक सब दिशाओंमें सात भय रहित सुकाल होता है। वे प्रभु आकाशमार्गसे अनेक देश पर्वत नगरादिकोंमें धर्मचक्रको आगेकर सब भव्योंके उपकार करनेके लिये चलते हुए।

उन प्रभूके शांत परिणामके प्रभावसे दुष्ट सिंह वगैरहःसे हरिण वगैरःको मरनेका भय कभी नहीं होता था। नोकर्म वर्गणाके आहारसे पुष्ट अनंत सुखी वीतरागके घातिकर्मोंका नाश होनेसे कवलाहार कभी नहीं था। अनंत चतुष्टयसहित इंद्र वगैरःसे वेढ़े हुए उन प्रभुके असाता कर्मका उदय अतिमंद होनेसे मनुष्य वगैरःसे किया गया उपसर्ग बिलकुल कभीं नहीं था। वे तीन जगत्‌के गुरु अतिशयके कारण चारों दिशाओंमें चार मुखवाले होनेसे सब सभाके जीवसमूहोंको सन्मुख दीखते थे।

दुष्ट घातिया कर्मोंके नाश होनेसे केवलज्ञानरूप नेत्रोंवाले इस प्रभुके सब विद्याओंका स्वामीपना हो गया। इस जगत्‌के नाथके दिव्य शरीरकी कभी न तो छाया पड़ी, न कभी पलक लगे और न कभी नख और केशोंकी वृद्धि हुई। उस विभुके ये

दस दिव्य अतिशय चार घातिया कर्मरूपी वैरियोंके नाशसे अपने आप प्रगट होते हुए ॥ सब अर्थस्वरूप अर्ध मागधी भाषा अक्षररहित सव अंगसे निकलती हुई । वह विभुकी दिव्य ध्वनिरूप भाषा (वाणी) सव पुरुषोंको आनंद करनेवाली सवके संदेहको मिटानेवाली दो प्रकारके धर्मको तथा सब पदार्थोंको कहनेवाली होती हुई ।

सद्गुरुके प्रसादसे जातिविरोधी सर्प नौले वगैरः जीवोंका वैर मिटकर भाइयोंकी तरह परम मित्रता हो जाती है सब ऋतुके फल पुष्पोंवाले सब वृक्ष हो जाते हैं वेमानों प्रभुके उत्तम तपका फल ही दिखा रहे हैं। धर्मके राजा उन प्रभुके सभामंडपकी पृथ्वी (जमीन) सब तरफसे दिव्य रत्नोंवाली दर्पणके समान चमकती है । जगत्के संबोधनेमें उद्यमी तीन जगत्के स्वामीके चलनेपर जीवोंको सुख देनेवाली मंद सुगंधी ठंडी पवन चलती है । प्रभुके जयजय शब्दकी ध्वनि आकाशमें महान् आनंदके करनेवाली होती है और शोकवाले जीवोंको हमेशा आनंद मिलता है । वायुकुमारके देव गुरुके सभामंडपसे आगे चार कोसतककी भूमि तृण कांटे वगैरःसे रहित कर देते हैं, स्तनितकुमार देव बिजलीकी चमकसे शोभायमान गंधोदककी (सुगंधी जलकी) वर्षा चारों तरफ करते जाते हैं । दिव्य पीले पत्तोंवाले महान् प्रकाशसहित ऐसे रत्न जड़े सोनेंके सात २ कमल भगवान्के चरणोंके आगे २ नीचे भागमें देव बनाते हुए चले जाते

हैं। चांवल आदि सब तरहके अनाज तथा सबको तृप्त करनेवाले सब ऋतुओंके फलसे नम्र वृक्ष हो जाते हैं।

भगवान्‌के सभामंडपकी सब दिशायें आकाशके समान निर्मल हो जातीं हैं मानों पापोंसे छूट गईं हों। तीर्थंकर प्रभुकी यात्राके लिये चारों जातिके देव इंद्रकी आज्ञासे आपससें एक दूसरेको बुलाते हैं। उस प्रभुके आगे चमकते हुए रत्नोंसे शोभायमान हजार अरोंवाला अंधेरेका नाशक और देवोंसे वेढ़ा हुआ ऐसा धर्मचक्र चलता है। दर्पणको आदि ले आठ मंगल द्रव्योंको देव साथ लेते जाते हैं। ये महान् चौदह अतिशय भक्तिसे देव करते हुए। इस प्रकार दिव्य चौंतीस अतिशयोंसे आठ प्रातिहार्योंसे चार अनंतचतुष्टयोंसे तथा अन्य भी अनंत गुणोंसे शोभायमान वे धर्मके स्वामी अनेक देश नगर ग्राम वनोंमें विहार करते करते क्रमसे राज्यग्रही नगरीके बाहर विपुलाचल पर्वत पर पहुँचते हुए? कैसे हैं प्रभु। जो धर्मोपदेशरूपी अमृतसे बहुत भव्योंको तृप्त करनेवाले, अनेक भव्योंको वस्तुस्वरूप दिखलाकर मोक्षके मार्गमें स्थापन करनेवाले, मिथ्याज्ञानरूपी खोटे मार्गके अंधेरेको अपने वचनरूपी किरणोंसे नाश करनेवाले, रत्नत्रयस्वरूप मोक्षके मार्गको अच्छीतरह प्रगट करनेवाले, कल्पवृक्षकी तरह सम्यक्त्व ज्ञान चारित्र तप दीक्षारूपी इष्ट चिंतामणि रत्न भव्योंको देनेवाले और सब संघ तथा देवोंसे वेष्टित (वेढे हुए) हैं।

अथानंतर उस राज्यगृही नगरीका स्वामी श्रेणिक महाराज वनके मालीसे उन प्रभुका आगमन सुन शीघ्र ही भक्तिसे पुत्र स्त्री और बंधुओं सहित महान् संपदाके साथ उस पर्वतपर आकर हर्षित हुआ जगत्के गुरुको तीन परिक्रमा देके मन वचन कायसे शुद्ध होके भक्तिपूर्वक मस्तकसे नमस्कार करता हुआ । फिर वह राजा जलादि आठ द्रव्योंसे जिनेंद्रके चरणोंकी पूजा कर अत्यंत भक्तिसे प्रभुकी स्तुति करने लगा। हे नाथ ! आज हम धन्य हैं आज ही हमारा जीवन और मनुष्यजन्म सफल हुआ। क्योंकि आज हमने जगत्के गुरुको पा लिया। हे देव ! आपके चरणकमलोंको देखनेसे आज मेरे नेत्र सफल हुए और उन चरणकमलोंको प्रणाम करनेसे मेरा मस्तक सफल हुआ। हे स्वामिन् आज आपके चरणोंको पूजनेसे मेरे हाथ धन्य हुए, आपकी यात्रा करनेसे मेरे पांव सफल हुए आपका स्तवन करनेसे मेरी वाणी सफल हुई । आपके गुणोंका चिंतवन करनेसे आज मेरा मन पवित्र हुआ और आपकी सेवा करनेसे मेरा यह शरीर सफल हुआ तथा पापरूपी वैरी नष्ट होगये ।

हे नाथ जहाजसमान आपको पाकर अपार संसारसमुद्र आज एक चुल्लू जलके समान मालूम होने लगा । अब मुझे किसी बातका डर नहीं रहा । ऐसी जगत्के स्वामीकी स्तुति करके और वारवार नमस्कार करके हर्षित हुआ वह श्रेणिक राजा सच्चे धर्मको सुन-

नेके लिये मनुष्योंके कोठेमें वैठगया । वहांपर बैठा हुआ वह श्रेणिकनृप भक्तिसहित गुरुकी दिव्य धुनिसे यतियोंका धर्म गृहस्थोंका धर्म सब तत्त्व तीर्थंकरोंके पुराण (चरित्र) पुण्य पापका फल, उत्तम धर्मके क्षमा आदि लक्षण और व्रत—इन सबको सुनता हुआ। उसके बाद वह राजा श्रीगौतमस्वामीको नमस्कार कर ऐसा पूछता हुआ हे भगवन् मेरे ऊपर दयाकर मेरे पहले जन्मोंका वृत्तांत कहो। ऐसा सुनकर परोपकारी वे गौतम गण-धर उस राजाको कहते हुए, हे बुद्धिमान् तू अपने तीन जन्मका वृत्तांत सुन।

इस जंबूद्वीपके विंध्यपर्वतपर कुटव नामा वनमें खदिरसार नामका एक भद्र परिणामी भील रहता था वह बुद्धिमान् किसी दिन पुण्यके उदयसे सबके हित करनेमें उद्यमी समाधिगुप्त मुनिको देख मस्तकसे नमस्कार करता हुआ। वह मुनि उस भील-को 'हे भद्र तुझे धर्मका लाभ होवे' ऐसा आशीर्वाद देता हुआ। उसे सुनकर वह भील मुनीश्वरको ऐसे पूछने लगा कि—हे नाथ वह धर्म कैसा है—उस धर्मके कौन कार्य हैं? कौन कारण हैं और उससे क्या फायदा मिलता है? यह सब मुझे समझाओ।

ऐसा सुनकर वह योगी बोला कि—जो मधु मांस मदिराका त्याग करना है वही अहिंसारूप धर्म ज्ञानियोंने कहा है। उस धर्मके करनेसे उत्तम पुण्य होता है पुण्यसे महान् स्वर्गादि सुखोंकी प्राप्ति होती है, यही धर्मके मिलनेका फायदा है। ऐसा सुनकर

वह भील मुनिसे ऐसा बोला कि–हे योगी मैं इस समय तो एकदम मांस मदिरा वगैरः का त्याग नहीं कर सकता। ऐसा सुनकर उसकी असमर्थता देख मुनि बोले, हे भील पहले तू यह कह कि तैंने पहले कौएका मांस खाया है या नहीं।

ऐसा सुनकर वह भील ऐसा कहता हुआ कि मैंने कौएका मांस तो कभी नहीं खाया। उसके बाद वे मुनि बोले यदि ऐसा है तो सुखके लिये हे भद्र तू उस काक-मांसके खानेका अब नियम ले, क्योंकि नियमके विना ज्ञानियोंको पुण्य कभी नहीं होता। वह भील भी उन मुनिके वचन सुनकर खुश हुआ ऐसा बोला कि–हे स्वामिन् यह व्रत तो मुझे दीजिये। ऐसा कह शीघ्र ही व्रतको लेकर यतिको नमस्कार कर वह भील अपने घर गया।

किसी समय उसके अशुभ (पाप) के उदयसे असाध्य रोग होनेपर उसकी शांतिके लिये कोई वैद्य (हकीम) कौएके मांसको औषधमें बतलाता हुआ। उस समय उस मांसके खानेमें घृणा करनेवाला वह भील अपने कुटुंबियोंसे बोला कि हे भाइयो! करोड़ों जन्मोंमें दुर्लभ व्रतको छोड़ जो मूर्ख प्राणोंकी रक्षा करते हैं उससे धर्मात्माओंको कुछ लाभ नहीं, क्योंकि प्राण तो जन्म २ में मिल जाते हैं परंतु शुभ करनेवाला व्रत नहीं मिल सकता। व्रत भंग करनेकी अपेक्षा प्राणोंका त्याग देना अच्छा

है; क्योंकि शुभ परिणामोंसे प्राणोंके त्यागनेसे स्वर्ग मिलता है परंतु व्रतको भंग कर-देनेसे नरकमें जाना पड़ता है ।

ऐसा उस भीलका नियम सुनकर उस समय सारसपुरसे आया हुआ उस भीलका सूरवीर नामका मित्र मनमें शोक (रंज) करके मिलनेके लिये नगरको जाता हुआ। रास्तेमें बड़े भारी वनके बीचमें बड़के वृक्षके नीचे किसी देवीको रोता हुआ देख वह मित्र पूछने लगा। हे देवी तू कौन है किसलिये रोती है? यह कह। ऐसा सुनकर वह देवी ऐसे बोली कि हे भद्र मेरे वचन तू सुन। मैं वनकी यक्षी मनकी व्यथासे दुःखी हुई यहां रहती हूं। क्योंकि तेरा मित्र खदिर मरनेको ही है वह शुभके उदयसे कौएके मांसका त्याग करनेसे प्राप्त पुण्यके उदयसे मेरा पति होगा। सो हे शठ अब तू उसे मांस खिलानेको जाता हुआ उसे वृथा ही नरकके घोर दुःखोंका पात्र बनाना चाहता है। इस कारण आज मैं रंजमें हुई रोती हूं।

उस देवताके वचन सुनकर वह मित्र बोला कि—हे देवी तू शोकको छोड़ दे मैं उसका नियमभंग कभी नहीं करूंगा। ऐसे वचनोंसे उस देवीको संतोषित कर वह मित्र बहुत जल्दी उस रोगी भीलके पास आकर उसके परिणामोंकी परीक्षा (जांच)

करनेके लिये ऐसे वचन बोला । हे मित्र रोग दूर करनेके लिये यह कौएका मांस तुम्हें खाना चाहिये; क्योंकि जिंदगी रहेगी तो बहुत पुण्यकार्य कर सकोगे ।

ऐसा सुनकर वह बुद्धिमान् भील बोला, हे मित्र ! लोकसे निंदनीक नरकके देनेवाले और धर्मका नाश करनेवाले ऐसे वचन तुम्हें नहीं बोलने चाहिये । यह मेरी अंतकी अवस्था है इसलिये अब कुछ धर्मके शब्द बोलो जिससे मेरे आत्माको परलोकमें सुख मिले । ऐसा उस भीलका दृढ निश्चय जानकर यक्षी देवीकी सब कथा और इसी काकमांसत्यागरूपी व्रतका फल उस भीलको प्रीतिसे कहता हुआ । उसे सुनकर बुद्धिमान् वह भील धर्ममें और धर्मके फलमें श्रद्धा कर संवेगको प्राप्त होके सब मांस वगैरःका त्याग कर अणुव्रत ग्रहण करता हुआ ।

आयुके अंतमें समाधि सहित प्राणोंको छोड़कर वह भील व्रतोंके फलसे महान ऋद्धिवाला सौधर्मस्वर्गके सुख भोगनेवाला देव उत्पन्न हुआ । इधर उसका मित्र सूरवीर अपने नगरको जाता हुआ उस बनकी तरफ देख अचंभेमें हुआ उस यक्षीको यह बात पूछता हुआ । हे देवी मेरा मित्र मरकर क्या अभीतक तेरा पति हुआ या नहीं ? । ऐसा सुनकर वह देवी बोली कि वह मेरा पति तो नहीं हुआ लेकिन सब व्रतोंसे उत्पन्न

हुए पुण्यके उदयसे वह सौधर्म स्वर्गमें महान ऋद्धिवाला गुणोंसहित और हमारी व्यंतर जातिसे जुदा कल्पवासी देव हुआ है।

वहांपर वह देव स्वर्गकी संपदाको पाकर जिनेंद्रकी पूजा करता हुआ देवियोंके साथ बहुत सुख भोग रहा है। ऐसा सुनकर बुद्धिमान् वह सूरवीर मित्र ऐसा मनमें विचारता हुआ कि ओहो देखो शीघ्र ही व्रतका ऐसा यह उत्तम फल मिला। जिस व्रतसे परलोकमें ऐसी संपदायें मिलतीं हैं उसके विना एक क्षण भी कभी नहीं विताना चाहिये। ऐसा विचारके वह सूरवीर भव्य शीघ्र ही समाधिगुप्त मुनिको नमस्कार कर खुशीसे गृहस्थोंके व्रत लेता हुआ।

अथानंतर वह खदिरसारका जीव देव वहां दो सागर तक महान् सुख भोगकर आयुके अंतमें स्वर्गसे चयके पुण्यके फलसे कुणिक राजा और श्रीमतीरानीका पुत्र भव्योंकी श्रेणीमें मोक्ष जानेमें मुखिया तू श्रेणिक नामवाला उत्पन्न हुआ है।

उस कथाके सुननेसे जिनेंद्र देव धर्म व गुरु आदि पदार्थोंमें श्रद्धाको प्राप्त होके वह श्रेणिकराजा मुनिको वारंवार नमस्कार कर पूछता हुआ।

हे देव धर्मकार्यमें मेरी महान श्रद्धा है परंतु अब मेरे किस कारणसे थोड़ासा भी व्रत नहीं है। उसके बाद वे मुनि ऐसा बोले। हे बुद्धिमान! पहले तूने अत्यंत मिथ्या-

स्वपरिणामसे हिंसादि पांचों पापोंसे वहुत आरंभ तथा परिग्रहसे अत्यंत विषयोंमें लीन होनेसे धर्मरहित बौद्धगुरुकी भक्तिसे इस जन्ममें नरकायु बांध ली है; उस दोषसे तेरे थोड़ासा भी व्रतका ग्रहण नहीं है। क्योंकि जिन्होंने देवायु बांध ली है वे ही भव्यजीव दो तरहका व्रत स्वीकार (ग्रहण) करते हैं।

आज्ञा, मार्ग, उपदेश, रुचि, बीज, संक्षेप, विस्तर, अर्थ, अवगाढ, परमावगाढ— ये दस प्रकारका सम्यक्त्व मोक्षमहलकी पहली सीढी है। सर्वज्ञकी आज्ञासे ही छह द्रव्योंमें जो महान् रुचि है वह उत्तम आज्ञा सम्यक्त्व है। जो परिग्रहरहित वस्त्ररहित हाथ ही जिसका पात्र है ऐसा मुनिका स्वरूप मोक्षमार्ग है, इस प्रकार मोक्षमार्गमें श्रद्धा करना वह मार्गदर्शन है। जो त्रेसठ शलाका (पदवीधारक) पुरुषोंके पुराण (चरित्र) सुनके शीघ्र ही निश्चय होना वह उपदेश दर्शन है। आचारांग नामके पहले अंगमें कही हुई तपकी क्रिया सुनकर जो ज्ञानियोंके रुचि होना वह रुचि सम्यक्त्व है।

जो बीजरूप पदके ग्रहण करनेसे सूक्ष्म अर्थके सुननेसे भव्योंके रुचि प्रगट होना वह बीज दर्शन है। जो बुद्धिमानोंको संक्षेपमें पदार्थोंका स्वरूप कहनेसे ही श्रद्धा हो जाना वह सुखका कारण संक्षेपदर्शन कहा जाता है। जो प्रमाण नयके विस्तारसे पदार्थोंको विस्तारसे कहना उससे जो निश्चय होना वह श्रेष्ठ विस्तर सम्यक्त्व है।

द्वादशांगरूप समुद्रमें प्रवेश कर वचनोंका विस्तार छोड़के अर्थमात्रको ग्रहण कर जो रुचि होना उसे अर्थ सम्यक्त्व कहते हैं। अंग व अंगवाह्य श्रुतका चिंतवन करनेसे जो रुचि होना वह अवगाढ दर्शन बारवें गुणस्थानवाले क्षीणकषायी योगीके होता है केवल ज्ञानसे जाने हुए सब पदार्थोंका श्रद्धान वह उत्तम परमावगाढ सम्यक्त्व है।

इस प्रकार असलमें जिनेंद्रकर कहा हुआ दस तरहका सम्यक्त्व है। उसके भी वहुत भेद हैं। हे राजा तू दर्शनविशुद्धि आदि अलग २ अथवा सब सोलह कारणोंसे श्री तीनजगत्के गुरुके पास जगतको आश्चर्यके करनेवाला तीर्थंकर नामकर्म यहां बांधके परलोकमें पूर्वकर्मके फलसे रत्नप्रभा नामकी पहली नरककी पृथ्वीमें निश्चयसे जायगा। वहां पर उस कर्मका फल भोगकर आयुका अंत होनेपर वहांसे निकलकर आगामी उत्सर्पिणी कालके चौथे कालकी आदिमें हे भव्य तू निश्चयसे महापद्म नामका सज्जनोंका कल्याण करनेवाला धर्मतीर्थके प्रवर्तानेवाला पहला तीर्थंकर होगा।

इसलिये तू निकट भव्य है अब संसारसे मत डर, क्योंकि इस संसारमें भटकते हुए प्राणी पहले वहुत वार नरकोंमें गये हैं॥ उस समय वह श्रेणिक राजा अपना रत्नप्रभा नरकमें जाना सुनकर दुःखी हुआ गणधरको नमस्कार कर फिर ऐसा पूछता हुआ। हे भगवन् बड़े पुण्यका स्थान इस मेरे नगरमें मेरे सिवाय दूसरा भी कोई नरकमें जायगा

या नहीं। उसके वाद उस राजाके ऊपर कृपा करके श्रीगौतम स्वामी वोले, हे बुद्धिमान् अपने शोकके हटानेवाले ऐसे सत्य वचन तू सुन।

इसी नगरमें स्थितिबंधके वशसे खोटे कर्मसे मनुष्यआयु बांधकर नीच कुलमें पैदा हुआ एक काल शौकरिक—भंगी रहता है। उसे अब पहले सात भवोंका जातिस्मरण हुआ है। वह ऐसा विचारने लगा है कि पुण्य पापके फलसे इस जीवका यदि संबंध होता तो मैंने विना पुण्यके यह मनुष्यजन्म कैसे पालिया। इसलिये न पुण्य है न पाप है किंतु विषयसुख ही कल्याण करनेवाला है।

ऐसा समझकर वह पापी शंकारहित हुआ हिंसादि पांचों पापोंको तथा मांसादि आहारको करता है उसके फलसे बहुत आरंभ व परिग्रहके कारण उसने नरकायु बांध रक्खी है इसलिये वह आयुके अंतमें पापके उदयसे सातवें नरकमें अवश्य जायगा। और दूसरी शुभ नामवाली एक ब्राह्मणकी लड़की है वह रागसे अंधी मदोन्मत्त उत्कृष्ट स्त्री वेदकर्मके फलसे शीलरहित विवेकरहित हुई गुण शील श्रेष्ठ आचरणोंको देखकर व सुनकर अत्यंत क्रोध करनेवाली है। उसने इंद्रियोंकी लंपटता (विषयोंमें इच्छा) से नरकायु बांध ली है इसलिये वह रौद्रध्यानसे मरकर पापके उदयसे सब दुःखोंकी खानि तथा निंदनीक ऐसी नरककी छठी तमःप्रभा नामकी पृथ्वीमें जन्म लेगी।

इस प्रकार उन गणधरके कहनेके वाद राजा श्रेणिक उन गणधरको प्रणाम कर अपने साथ अभयकुमार पुत्रके पूर्वजन्मोंका वृत्तांत पूछता हुआ। वे गौतम गणधर उस राजाके ऊपर कृपादृष्टि करके उस अभयकुमारकी जन्मावलि कहते हुए। इसी भरत-क्षेत्रमें एक सुंदर नामका ब्राह्मणका पुत्र था वह लोकमूढता आदि तीन मूढता सहित मिथ्यादृष्टि वेदोंका अभ्यास करनेके लिये अर्हद्दास जैनीके साथ रास्तेमें चलता हुआ पीपलके नीचे बहुतसे पत्थरोंको देख 'यह मेरा देव है' ऐसा कहकर उस वृक्षकी प्रदक्षिणा दे नमस्कार करता हुआ।

ऐसी उसकी चेष्टा देख वह अर्हद्दास उस मिथ्यातीको ज्ञान करानेके लिये हँसकर उस वृक्षको पैरसे धका देकर तोड़ता हुआ। उसके आगे कपिरोमनामकी वेलिको देख वह श्रावक अर्हद्दास मायाचारीसे 'यह मेरा देव है' ऐसा कहकर नमस्कार करता हुआ। उस पहलेकी ईर्षासे वह ब्राह्मण हाथोंसे उस वेलको उखाड़कर लेता हुआ। वेलिके छूजानेसे उस विप्रके सब अंगमें खुजली रोग होगया। फिर वह उस वेलिसे डरकर अर्हद्दाससे बोला कि हे मित्र यह तेरा देव सच्चा है।

यह वात सुनकर वह जैनी उस मिथ्यातीको सत्य समझानेके लिये कहने लगा कि अरे भद्र (भले आदमी) ये वृक्ष हैं ये कुछ विगाड़ सुधार नहीं कर सकते। ये

पापकर्मके उदयसे एकेंद्रीजन्मको धारण किये हुए हैं देव कभी नहीं हैं। किंतु (लेकिन) तीर्थंकर ही देव हो सकते हैं, क्योंकि वे ही भव्योंको भोग और मोक्षके देनेवाले हैं और तीन जगत्‌के जीवोंसे नमस्कार किये गये हैं। इनके सिवाय दूसरे मिथ्याती देव नहीं हो सकते। इत्यादि ज्ञानके वचनोंसे वह जैनी उस विप्रकी देवमूढता दूर करता हुआ।

उसके बाद चलते हुए वे दोनों क्रमसे गंगानदीके किनारे आ पहुँचे। वह मिथ्याती विप्र उससे बोला कि 'यह तीर्थका जल निश्चयसे पवित्र और शुद्धि करने वाला है'। ऐसा कहकर वह गंगाके जलसे स्नानकर उसको नमस्कार करता हुआ। ऐसा देख वह उत्तम श्रावक इसको खानेके लिये अपने झूठे अन्नको और गंगाजलको देता हुआ। उसे देख वह ब्राह्मण बोला कि मैं दूसरेकी झूंठन कैसे खा सकता हूं। यह सुनकर सच्चे मार्गकी प्राप्तिके लिये वह जैन उस मिथ्यातीको ऐसा बोला कि हे मित्र मेरा झूंठा किया हुआ अन्न जो खराव है तो गधे वगैरह जीवोंसे झूंठा किया गया गंगाजल क्यों नहीं खराव कहाजा सकता, वह कैसे शुद्ध है और शुद्धिको दे सकता है।

इसलिये जल कभी तीर्थ नहीं हो सकता और न मनुष्योंको स्नान करनेसे शुद्धि होसकती है लेकिन जीवोंकी हिंसासे केवल पापका ही कारण हो सकता है। क्योंकि

शरीर हमेशा अशुचि (अशुद्धपने) की खांनि है और यह जीव स्वभावसे ही निर्मल है। इसीलिये पापका कारण स्नान करना वृथा है । यदि मिथ्यातसे मैले प्राणी स्नान करनेसे शुद्ध होजावें तो शुद्धिके लिये मच्छी वगैरह जलजीवोंको नमस्कार करना चाहिये, उन पर करुणा दृष्टी नहीं रखनी चाहिये ।

परंतु हे मित्र अर्हंत ही तीर्थ हैं उनके वचनरूपी अमृतहीसे पुरुषोंके अंदरके पापरूपी मैल दूर हो सकते हैं वे ही शुद्धिके करनेवाले हैं। इसप्रकार तीर्थादिके सूचक संबोधनेके वचनोंसे वह अर्हद्दास हठसे उस विप्रकी तीर्थमूढता दूर करता हुआ। फिर वहां पर पंचाग्निके बीचमें बैठे हुए तापसीको देखकर वह विप्र बोला कि ऐसे तपस्वी हमारे मतमें बहुत हैं। ऐसा सुनकर वह अर्हद्दास जैनी उसके घमंडको दूर करनेके लिये उस तापसीको अनेक कौलिक शास्त्रोंके वचनोंसे मदरहित करके उस ब्राह्मणसे साफ बोला कि हे भद्र ये खोटे तापसी तप क्या कर सकते हैं । किंतु इस पृथ्वीपर महान् देव अर्हंत सर्वज्ञ हैं निर्ग्रंथ गुरु हैं और धर्म दयामयी ही ठीक है। जिनेन्द्रकर कहा गया सबका दीपक सत्य जैन-शास्त्र ही है जैनमत ही वंदनीक है निष्पाप तप ही शरण है—ये ही सब उत्तम हैं। इन सबका निश्चयकर हे मित्र तू मिथ्यादर्शन मिथ्याधर्मरूपी कुमार्गको शत्रुके समान छोड़कर

सम्यग्दर्शनको ग्रहण कर। उसके वाद वे दोनों परममित्र हुए बड़े भयानक वनमें जाते हुए पापके उदयसे दिशाको भूल गये।

फिर उसी निर्जन वनमें जीनेके उपायसे रहित होके एक जिनधर्म और जिनेंद्र-देवको ही शरण जानकर आहार और शरीरसे ममता छोड़ उत्साह करके वे दोनों बुद्धिमान मोक्ष आदिकी सिद्धिकेलिये संन्यास धारते हुए। उसके वाद अति धैर्यपनेसे भूख प्यास आदि परीषहोंको सहके समाधिरूप शुभ ध्यानसे प्राणोंको छोड़ वे दोनों द्विज उस आचरणसे उत्पन्न हुए पुण्यके प्रभावसे सौधर्मस्वर्गमें महान ऋद्धिधारी, देवोंसे सेवा किये गये ऐसे देव होते हुए। वहांपर स्वर्गका सुख बहुत कालतक भोगके पुण्यके उदयसे वह सुंदर विप्रका जीव देव तुझ श्रेणिकराजाका महा बुद्धिमान् यह पुत्र हुआ है। सो तपस्यासे कर्मोंका नाशकर शीघ्र ही मोक्षको पावेगा।

इसप्रकार उन दोनोंकी उत्तम कथा सुनकर कितने ही वैरागी होकर संयम (मुनिधर्म) को धारण करते हुए और कितने ही गृहस्थ (श्रावक) धर्मको तथा सम्यक्त्वको धारण करते हुए। श्रेणिकराजा भी अपने पुत्रसहित धर्मशास्त्ररूपी अमृतको पीकर श्रीमहावीर जिनेन्द्रको और गणधरोंको नमस्कार कर अपने नगरको गया।

अथानंतर श्री महावीर प्रभुके पहला इंद्रभूति (गौतम), वायुभूति अग्निभूति

सुधर्म मौर्य मौंड पुत्र मैत्रेय अकंपन धवल प्रभास— ये ग्यारह गणधर देवोंकर पूजित चार ज्ञानके धारी होते हैं। प्रभुके चौदह पूर्वोंके अर्थ याद रखनेवाले तीन सौ मुनि जानना। नौ हजार नौ सौ चारित्र धारनेमें उद्यमी शिक्षक मुनि होते हैं, तेरहसौ मुनि अवधिज्ञानी होते हैं। सात सौ सामान्यकेवली व नौसौ मुनि विक्रियऋद्धिके धारी होते हैं। ये सब संयमी रत्नत्रयसे भूपित मुनि जोड़ करनेसे चौदह हजार हैं। वे महावीरस्वामीके समवशरणमें मौजूद रहते हैं।

चंदना वगैरः छत्तीस हजार आर्जिका तप और मूलगुणोंसहित हुईं प्रभुके चरणकमलोंको नमस्कार करती हुईं उस सभामें मौजूद रहतीं हैं। दर्शन ज्ञान और श्रेष्ठ व्रतोंसहित एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकायें उस प्रभुके चरणारविंदोंको पूजतीं हैं। असंख्याते देव देवीगण प्रभुके चरणांबुजोंको दिव्य स्तुति नमस्कार पूजा आदि करोड़ों उत्सवोंसे पूजते हैं। सिंह सर्प वगैरह तिर्यंच (पशु) शांतचित्त हुए संख्याते संसारसे डरे हुए अत्यंत भक्तिसे महावीरकी शरणको प्राप्त हो रहे हैं।

इस प्रकार अत्यंत भक्ति वाले वारह प्रकारके जीवगणोंसे वेढे हुए वे जगतके स्वामी श्रीमहावीर तीर्थराज धीरे २ विहार करते अनेक देश नगर गामोंके भक्तिवंत भव्योंको वहुत धर्मोपदेशसे ज्ञान कराके मोक्षके रस्तेपर खड़े करते हुए अज्ञानरूपी अंधकार-

को नाशकर और वचनरूपी किरणोंसे मोक्षके मार्गको प्रकाशकर छह दिन कम तीस वर्ष
विहार करके फल पुष्यादिकोंसे शोभायमान चंपानगरके वगीचेमें क्रमसे आये।

उस वगीचेमें मन वचन काय योगको तथा दिव्य वाणीको रोककर क्रियारहित
हुए मोक्षके लिये अघातिया कर्मोंको नाश करनेवाले प्रतिमायोगको धारण करते हुए।
अथानंतर देवगति पांच शरीर पांच संघात पांच बंधन तीन आंगोपांग छह संस्थान छह
संहनन पांच वर्ण दो गंध पांच रस आठ स्पर्श देवगत्यानुपूर्व्य अगुरुलघु उपघात पर-
घात उच्छ्वास दोनों विहायोगतियां अपर्याप्ति प्रत्येक स्थिर अस्थिर शुभ अशुभ दुर्भग
दुःस्वर सुस्वर आदेय अयशस्कीर्ति, असातावेदनीय नीचगोत्र निर्माण ऐसीं मुक्तिको रोकने
वालीं इन वहत्तर कर्म प्रकृतियोंको अयोगी नामके चौदहवें गुणस्थानमें चढकर अपनी
शक्तिसे चौथे शुक्ल ध्यानरूपी तलवारसे योधाकी तरह उस गुणस्थानके अंतके दोसम-
योंमेंसे पहले समयमें वैरीके समान समझ मारते हुए।

उसके वाद आदेय मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्व्य पांच इंद्रियजाति मनुष्यायु
पर्याप्ति त्रस वादर सुभग यशस्कीर्ति सातावेदनीय ऊंचगोत्र तीर्थंकरनाम— इन तेरह कर्म-
प्रकृतियोंको उस चौदवें गुणस्थानके अंतके समयमें शुक्लध्यानके प्रभावसे वे महावीर
प्रभु नाश करते हुए। उसके वाद वे वीर प्रभु सब कर्मोंरूपी वैरियोंको तथा औदारिक

आदि तीनों शरीरोंको नाशकर निर्मल हुए ऊर्ध्वगति स्वभाव होनेसे मोक्षस्थानको गये। उनके मोक्ष जानेका कार्तिक कृष्णा अमावस्या तिथिके शुभ स्वाति नाम नक्षत्रमें प्रातः काल (सवेरा) शुभ समय था।

वे महावीर प्रभू अमूर्त (अशरीरी) हुए सम्यक्त्व आदि आठ गुणों सहित सिद्धपनेको पाकर उस मोक्षस्थानमें अनुपम वाधारहित क्रमरहित अनंत उत्कृष्ट विषयातीत परद्रव्यरहित नित्य दुःखरहित ऐसे आत्मीक सुखको भोगते हुए। मनुष्य तथा अन्य भी जगतके जीव जितना निराकुलतास्वरूप सुख भोगचुके भोग रहे हैं और भोगेंगे वह सब एक जगह इकट्ठा करनेपर जितना सुख होता है उससे भी अनंत गुणा सुख एक समयमें जगतसे पूज्य सिद्ध भगवान् भोगते हैं। जो सुख सबमें उत्कृष्ट है। इसी तरह अनंतकालतक सुख भोगेंगे। ऐसे सिद्धोंको मैं शुद्धयोगोंसे नमस्कार करता हूं।

अथानंतर मोक्ष जानेके वाद चारों जातिके इन्द्र इंद्राणियों तथा देवोंसहित उस प्रभुके निर्वाण होनेको जानकर अपने २ जुदे २ चिह्नोंसे गीत नृत्य आदि महान् उच्छवोंके साथ तथा परम विभूतिके साथ अंतके मोक्ष कल्याणककी पूजा करनेके लिये अपने कल्याणके अर्थ उस वगीचेमें आते हुए। उन प्रभुके शरीरको निर्वाणका साधक होनेसे अति पवित्र मानकर वे इंद्र स्फुरायमान रत्नमई पालकीमें रखते हुए। फिर

सबसे उत्तम सुगंधि द्रव्योंसे उस शरीरको पूजकर व रत्नजटित मुकुटवाले मस्तकसे भक्ति सहित नमस्कार करके उसे शीघ्र ही अग्निकुमारदेवके मुकुटरत्नसे उत्पन्न हुई आगसे भस्म करते (जलाते) हुए। जिस शरीरकी सुगंधीसे सब आकाश सुगंधित (खुशबू-दार) होगया था। इंद्रको आदि ले सब देव उस पवित्र भस्मको खुशीसे हाथ में ले 'इसी तरह हमको भी शीघ्र मोक्षका कारण हो' ऐसा कहके पहले मस्तकमें फिर बांहोंमें नेत्रोंमें फिर सब अंगोंमें भक्ति पूर्वक मोक्षगतिकी प्रशंसा कर लगाते हुए।

वहांपर भी इंद्र वगैरः पवित्र उस भूमिको पूजकर धर्मकी प्रख्यातिलिये निर्वाणक्षेत्र (मोक्षभूमि) की कल्पना करते हुए। फिर वे अत्यंत हर्षसे संतुष्ट हुए सब मिलकर अत्यंत उत्सव सहित देवियोंके साथ आनंदका नाटक करते हुए।

उसके वाद श्रीगौतमगणधरके भी शुक्लध्यानके द्वारा घातियाकर्मरूपी वैरियोंका नाश करनेसे केवलज्ञान प्रगट होगया। वहांपर भी इंद्रादिदेव गणधरों सहित उस योग्य बहुत विभूतिसे इंद्रभूति (गौतम) केवलीकी केवलज्ञान पूजा करते हुए॥

इस तरह उत्तम चारित्रके प्रभावसे मनुष्य देवगतियोंमें महान् संसारीक सुख भोग-कर फिर मनुष्य विद्याधर देवोंके स्वामियोंकर पूजित तीर्थंकर पदवी पाकर वादमें सब

कर्मोंको नाशकर उत्तम मोक्ष महलमें चले गये, ऐसे श्रीमहावीर स्वामीको मैं नमस्कार स्तुति करता हूं।

इसप्रकार श्रीसकलकीर्तिदेव विरचित संस्कृत महावीरपुराणके अनुसार प्रचलित सरल हिंदीभाषानुवादमें राजा श्रेणिक तथा उसके पुत्रके तीन भवों (जन्मों) को और श्रीमहावीर स्वामीके मोक्षगमनको कहनेवाला उन्नीसवां अधिकार पूर्ण हुआ ॥ १९ ॥

ग्रंथकारका मंगलाचरणपूर्वक अंतिम कथन।

गुणोंकी खानि वे महावीर स्वामी वीरपुरुषोंसे पूजित हैं, वीरपुरुष महावीर स्वामीको ही आश्रयसे प्राप्त हैं, महावीर करके ही मोक्षसुख मिल सकता है ऐसे महावीर प्रभुके लिये नित्य नमस्कार है, पापोंके जीतनेमें महावीरसे बढ़कर दूसरा कोई योधा नहीं है, महावीरका ही बल सबसे अधिक है, ऐसे महावीर स्वामीमें मैं अपना चित्त लगाता हूं। बाद प्रार्थना करता हूं कि हे महावीर प्रभु! मुझे भी अपने सरीखा वीर (बल-वान्) बनाओ। (यहांपर कविने व्याकरणके छहों कारक संबंध व संबोधनद्वारा महा-

वीरकी स्तुति की है)। ग्रंथकार कहते हैं—मैंने चरित्रकी रचनाके वहानेसे जो महावीर प्रभुको मस्तकसे नमस्कार किया हैं, भक्तिसहित अपनी वाणीसे उनके गुणोंकी प्रशंसा करनेसे स्तुति की है। और शुभ भावोंसे वार २ उन प्रभुकी पूजा की है ऐसे वे श्रीमहावीर जिनेंद्र मुझ लोभीको मोक्षका कारण और सम्यग्दर्शनादि तीनों रत्नोंसे उत्पन्न हुई सब सामग्री शीघ्र ही देवें। जो महावीर प्रभु कुमार अवस्थामें ही रत्नत्रयसे उत्पन्न हुए संयमको मोक्षके लिये धारण करते हुए वे प्रभु मुझे भी मुक्तिके कारणोंको इसलोक और परलोक दोनोंमें देवें, जो प्रभु उत्तमध्यानरूपी पैंनी तलवारसे सब कर्मरूपी महान् वैरियोंको शीघ्र ही मारकर मोक्षको गये ऐसे महावीर भगवान मेरे भी इंद्रियरूपी चोरोंसहित कर्म वैरियोंको शीघ्र ही नाशकरें जिससे कि मुझे भी मोक्ष मिल जावे।

जिन्होंने तीनलोकसे स्तुति किये गये अनंत निर्मल केवलज्ञानादि उत्तम गुण पालिये ऐसे प्रभु अपने सब गुणोंको मुझे भी दें। जिन महावीर प्रभुने मोक्षरूपी कुमारी विधिपूर्वक स्वीकार की वे प्रभु मुझे भी सुख होनेके लिये निर्मल अनंत मुक्तिको शीघ्र ही देवें। ग्रंथकार कहते हैं—मैंने यह ग्रंथकीर्ति पूजा लाभ आदिके लोभसे नहीं रचा और न कविपनेके अभिमानसे किया किंतु कर्मोंके नाशके लिये और अपने तथा पराये उपकारके लिये धर्म बुद्धिसे रचा है। महावीर प्रभुके गुणोंकी मालाओंसे जड़ा हुआ

यह पवित्र चरित्र सकलकीर्ति गणीने रचा है इसलिये दोपरहित हे ज्ञानियो ! मुझपर
कृपाकर अच्छीतरह शुद्ध करके पढना । इस पवित्र ग्रंथमें मैंने जो कहीं प्रमादसे व अज्ञा-
नतासे असंवद्ध कहा हो तथा अक्षर संधि मात्रादि छोड़ दीं हों उन सव दोपोंको हे ज्ञानियों !
अल्पबुद्धि वाले मेरे इस श्रेष्ठ ग्रंथके उद्धारमें वड़ा भारी साहस (हिम्मत) देख क्षमा
करें । जो बुद्धिमान गुणीजनोंको गुणोंमें प्रेम होनेके कारण पढावेंगे स्वाध्याय करावेंगे
वे ज्ञानी विपयादिकोंसे त्यागवुद्धि कर केवलज्ञानको थोड़े ही समयमें पासकेंगे । इस
पवित्र ग्रंथको इस सारे भारत वर्षमें प्रवर्तानेके लिये जो भव्यपुरुप अपनेलिये लिखेंगे
तथा दूसरोंको भी स्वाध्याय करनेके लिये लिखावेंगे वे भव्यात्मा ज्ञानदानसे संसारमें
उत्पन्न सवसे उत्तम सुखको पाकर केवलज्ञानी अवश्य होंगे ।

गुणोंका समुद्र धर्मरत्नकी खानि भव्योंको शरण इंद्र वगैरःसे पूज्य स्वर्ग मोक्षका
मूलकारण श्री महावीर स्वामीका यह पवित्र चरित्र इस पृथ्वीपर जवतक कालका अंत
हो तव तक इस आर्यखंडमें सवजगह प्रसिद्ध होवे—ऐसी मेरी [illegible] जिन प्रभुने स्वर्ग
मोक्षका देनेवाला निर्दोप अहिंसामयी श्रेष्ठ धर्म मुनिश्रावकों [illegible] दो तरहका उपदेश
किया है, वह धर्म जवतक कालकी हद है तव तक निश्चयकर रहेगा और अवतक भी
प्रवृत्त हो रहा है—जो परम सुखका करनेवाला है । ऐसे धर्मके व्याख्याता श्री महावीर

स्वामीको मैं वारंवार नमस्कार पूर्वक स्तुति करता हूं कि मरे भा ...
दें । इस वावत वहुत कहनेसे क्या लाभ, वस इतना ही कहना चाहता हूं कि स्तुति
गये श्री महावीर प्रभु मुझे भी अपने समान सुख और मुक्ति होनेके लिये अद्भुत
गुणोंको कृपाकर देवें ॥

इति प्रशस्तिःसमाप्ता । श्री महावीर प्रभुके इस पवित्र चरित्रकी ग्रंथसं
सब तीनहजार पैंतीस श्लोक हैं। शुभमस्तु प्रकाशकपाठकयोः ।

समाप्तमिदं महावीरपुराणम् ।

सकलकीर्तिदेवविरचित

महावीरपुराण

(भाषानुवाद)

समाप्त ।